श्री मते रामानुजाय नमः

—बत्तीस रहस्य—

लेखक.

अनन्तप्रसाद त्रीकमलाल श्रीवैष्णव.

मु० लींबडी.

प्रकाशक.

शाहजी मोहनराजजी तेजराजजी.

मु० जोधपुर.

आवृत्ति १ ली. प्रत ३००

संवत १९७३ सने १९१७

श्री सत्यविजय प्रिन्टींग प्रेसमां शा. सांकलचंद हरीलाले छापो

पांचकुवे नवेदरवाजे–अमदावाद.

(किम्मत. अमूल्य. फ्री.)

श्री मते रामानुजाय नमः

--बत्तीस रहस्य--

लेखक.

अनन्तप्रसाद त्रीकमलाल श्रीवैश्नव.

मु० लींबडी.

प्रकाशक.

शाहजी मोहनराजजी तेजराजजी.

मु० जोधपुर.

आवृत्ति १ ली. प्रत ३००

संवत १९७३ संने १९१७

श्री सत्यविजय प्रिन्टींग प्रेसमां शा. सांकलचंद हरीलाले छापी
पांचकुवे नवेदरवाजे—अमदावाद.

(किम्मत. अमूल्य. फ्री.)

श्रीमते रामानुजाय नमः ॥

उपोद्‌घात.

श्री संप्रदायके पुनरोद्धारक और सुव्यवस्थापक उभय वेदान्ताचार्य श्री रामानुज स्वामिके पीछे लगभग २०० वरस बाद श्री वेंकटेश भगवानकी इच्छासें श्री कांची नगरमें इ. स. १२६८ में श्री वेंकटनाथ स्वामि प्रगट भये. अल्प समयमें विद्याभ्यास पूर्ण करके श्री हयग्रीव प्रभुका अनुष्ठान करके प्रभुके कृपापात्र बने. अनेक स्तोत्र प्रबंध प्रभुकी आज्ञासें वनाये. एकी रात्रीमें श्री पादुका सहस्र ग्रंथ रचा. और एकी रात्रीमें संकल्प सूर्योदय नामका नाटक रचा. श्रीमद् भगवद् गीताका श्री रामानुज भाष्यपर श्री तात्पर्य चंद्रीका नामक अढाराह हझार टीका लीखी. श्री शठकोप स्वामिकी आज्ञासें चारसौ प्रवंधपर चोहत्तर हझार व्यारव्या लीखी. श्री संप्रदायके और भी अनेक ग्रंथोपर टीका लीखी. और स्वतंत्र ग्रंथ भी अनेक लीखे. कवितार्किक केशरी, सर्वतंत्र स्वतंत्र, वेदान्ताचार्य ऐसी ऐसी पदवी पाये. यह प्रतापी स्वामीके श्री वैश्नवोंको जीवन रुप सवासव उपरांतके ग्रंथों पैकी कितनेक ग्रंथ छपे हुए है. कितनेक अद्यापि अप्रसिद्ध है. वैसे अप्रसिद्ध ग्रंथों पैकी एक “ रहस्य त्रय सार ” नामक ग्रंथका यह “ वत्तीस रहस्य ” अनुवाद है.

सर्वकी प्रवृत्ति सुखके लीएहि है. परंतु जैसा ज्ञान वैसी हि इच्छा और तदनुगुण प्रवृत्ति होती है. अनादिसें प्रकृत्तिका सबंध है. यह प्रकृति सत्य—यथार्थ—ज्ञानका तिरोध्यान करती है. और अपने विषयमें सुख समझा कर उनकी इच्छा कराती है. अैसे प्राकृत सुखका ज्ञान प्राकृत सुखकी इच्छा और वो मिलानेके लीए कर्म करता हुवा जीव संसृतिमें फसा—फिर रहा है. अविद्या—कर्म—वासना-रुची—प्रकृतिका सवंध यह परंपरा चल रही है, जीवात्माको

भ्रमण करा रही है. उनमें पडा हुवा जीव सुखके बदल दुःख पाय रहा है. कभी सुख मिलता तो वो अनित्य, अल्प, दुःख मिश्रित. दुःखमेंसे मुक्त होनेका, नित्य अनंत शुद्ध सुखका ज्ञान और वो मिलानेका उपाय, जीवात्मा अपना स्वतः प्रयत्नसे हि मिलाने जावे तो कितने हि काल वीते पर भी कितने धक्के खावे पर भी, मिला सकेके नहि वोभी प्रश्न है. परंतु यह सृष्टिकी रचना परसे सिद्ध हो रहा है वैसा सर्व शक्तिमान सर्वज्ञ सर्वेश्वरने आपकी प्रजाकों असे अंधेरेमें धक्के खाती बचानेको अपनी श्रृष्टिके नियमादि उनके मुमुक्षुके लीए प्रगट कर रखें है. वो नियमादिकका ज्ञान ब्रह्मा, पार्षद गण, द्वारा परंपरासें हमारे आचार्योंमें आता है. उनके लेख और सत् शिष्यो द्वारा मुमुक्षुओकों लभ्य हो रहा है. आप मुक्त हुवे पर भी शरीर धारण करके निर्हेतुक कृपासे हमको आपके लेख और आचरण द्वारा सत्य मार्ग दिखाकर प्रेरनेवाले हमारे आचार्य भगवानोके हम नित्य ऋणी है.

श्री वैश्नवोके लीए श्री रामानुज भगवान और उनकी गुरु परंपरा उपकारक है. यह परंपरासें मिलता ज्ञान के मुमुक्षूओंके लीए सारभूत " रहस्यत्रय सार " ग्रंथ श्री वेंकडनाथ-वेदान्त देशिक स्वामिने अनुयायियोंकी प्रार्थना परसें लीखा है. वो ग्रंथ परसें गुजरात काठीयावाडमें जातीश्रम और व्ययसे श्री संप्रदायका रहस्य फैलाने वाले थोडेहि समयपर परमपद निवासी वने हुए भक्तराज श्रीवैश्नव अनंतप्रसादजीने यह अनुवाद लीखा है. सद्गत भक्तराजने प्रभु सेवा निमित्त मात्र, संस्कृत न जानने वाले हमारे जैसे कम नसीबोंपर अनुग्रह करके जो बरसों तक श्रम उठा संस्कृत ग्रंथो के आधारसें भाषान्तररुप-अनुवादरुप और स्वतंत्र अनेक गुजराती और हिन्दी लेख लीखके प्रसिद्ध कीये है. उन्मे यह लेख छेल्ला है.

यथार्थ अंतिम सत्य क्या है, वो सत्य समझेपर परमपुरुषार्थ कोन निश्चित–इच्छित होता है, वो पुरुषार्थ प्राप्तिके लीए कोन उपाय सर्वके लीए हो करके और सरलता करके श्रेष्ट है सो हमारे श्रीमत् रामानुज स्वामि हमारे लीए लीख समजा गये है. वो तीनो विषय–तत्त्व, पुरुषार्थ और हित–के रहस्य–सार भूत तीन मंत्र श्री संप्रदायमें समजके अनुष्ठानमें लेनेके लीए दीये जाते है. यह तीनों मंत्रकी समज यह ग्रंथमें दी गइ है. ग्रंथके तीन पाठ है. तीनो पाठोंमें मंत्रार्थ भिन्न भिन्न रीतीसें समजाया है.

प्रथम खंडमें छापकी भूल वहूत दीख पडती है. उनमेंसे उलटा हि अर्थ हो जाय वैसी जो भुले है वाका शुद्धि पत्र दीया है. वो शुद्धि पत्रके अनुसार पुस्तकमें सुधारा कीये वाद वांचनेकी विज्ञप्ति है.

आदी जगद्गुरु श्री नारायण–उनसे हमारी माता, विद्या अधिष्टात्री श्री देवी. उनसें हमारे पूर्वाचार्य उनसें हमारे आचार्य श्री भाष्यकार रामानुज स्वामि.अैसे उत्तरोत्तर एसे रहस्योका ज्ञान हमको मिलता है. उनसे हम कृतकृत्य हो सकतें है तो उन्होकोतो हम ऋणी हैं हि. सत्यतामेंतो उन्होके हम है हि वैसे हमारी भूल सुधार हम बने रहे, वैसे हमको बनाय रखे यहि हमारी प्रार्थना है. वो रहस्य विशेष स्फुट करके समजानेवाले श्री वेदान्त देशिक स्वामिका उपकार है. त्यों संस्कृत न समजने वाले के लीए श्रम उठाकर संस्कृत ग्रंथो परसें हम समजसके अैसी भाषाओमें यह रहस्य खोलकर बताने वालेका कुछ कमी उपकार हमारे पर नहि है.

श्री जोधपुर निवासी शाहजी मोहनराजजीने गद्यत्रय, श्री रंगनाथ पदमाला आदि पुस्तकों की नाइ यह भी मुमुक्षुओके हितार्थ छपाकर उपकार कीया है.

ली. सद्गत भक्तराजके आभारी

व्रजवल्लभ रामानुजदास.

श्रीमते रामानुजाय नमः

बत्तीस रहस्य.

अनुक्रमणिका.

पाठ १.

श्रीमतेरामानुजाय नमः

बत्तीस रहस्य.

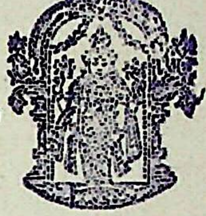
शुद्धिपत्र.

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५	१७	गुरुने	गुरुतें
,,	२४	ज्ञानने	ज्ञानतें
,,	२६	चूके	चूकहै
६	१	हयगुरु	गुरु
,,	२४	परमपद्ना थकी	परमपद्नाथकी
८	१७	उपायको न करना	उपाय कोन करना
११	४	"नार"का"अयनस्ते"	नारका अयन सो
,,			
,,	१९	मेरोलीये	मेरेलीपे
,,	२३	यद्	यह
१४	८	प्राप्ताके	प्राप्तीके
१६	७	वर्मकर्म	कर्म
१९	१६	प्रकाश न करके	प्रकाशन करके
२१	१३	महत्व	महतत्व
,,	१४	भीयान	मीयान
,,	२४	टांपको	ढांपके
२३	१९	पद्मनाभिदि	पद्मनाभादि
२७	१६	लीये	लीये
२८	१३	घाकहि	वाकही
२९	१३	एकपर देवता	एक परदेवता
३३	५	या काभी	याको भी
३५	१३	वि तृष्णा	वितृष्णा
३७	११	अंगयंच क अधिकार	अंगयंचक ओर सांग प्रपदन अधिकार १२-१३
३७	२३	एसे छोडने छसे	जेसे छोडने तेसे
४३	२०	व	न
४४	१	बीयमे	बीचमें

	१	फरना	करना
	७	थाको	वाको
,,	४	इहे	वहे
४८	१०	यमिराजक	यतिराजके
,,	१७	श्री भाष्यकाल क्षेप	श्रीभाष्य कालक्षेप
४८			
५०	३	सौल्यत्व	सौलभ्यत्व
	२०	कैंकर्वसो भगवत	कैंकर्यसो भागवत
,,	६	करजा	करना
५३			
५४	६	भगवान	भगवानके
	६	प्रावण्यतान हो	प्रावण्यता नहो
,,	९	भोन लेनी	भी न लेनी
,,	११	भोगनां	भागना
,,	१३	सेवन	सेवन
,,			
६१	१३	वहुयशा	वहुदया
६३	१२	मुण्धको	मुग्धको
६६	१७	प्रतिः	प्रति
६९	१४	ओरम	ओर म
	२२	वी	वो
,,			
७०	२३	अनय	अयन
७१	८	वा	वो
	९	वीसरा	वो तीसरा
,,	१७	अओर	अ ओर
,,		अकेलीये हिम	अकेलीयेही, म
,,	,,		
	१८	वोम	वो, म
,,		अकेलीय हिम	अकेलीयेही म
,,	,,		
	२०	अनारायणका	अ, नारायणका
,,			
७३	२१	(मढी अके लीये	"म" "अ" के लीये
७५	११	आपकी	आपको
८०	९	शरण कोपकड	शरणको पकड
,,	१६	उपाय हिन	उपायहिन



श्रीमतेरामानुजायनमः



—बत्तीस रहस्य—

अथ गुरु परंपराप्रभाव.

लक्ष्मीनाथ समारंभां नाथ यामुन मध्यमाम् ।
अस्मदाचार्य पर्यंतां वंन्दे गुरु परंपराम् ॥

यह हमारी संक्षेपमें गुरु परंपरा है. आदि लक्ष्मीनाथ, उनतें आरंभ करके, नाथ—यामुन गुरुको मध्यमे गीनके, हमारे आचार्य-को अंतमें, एसी हमारी गुरु परंपराको वंदन करते है. जातें यह सूचन होता हैकी, हमारा तो संबंध, हमारे आचार्यतें है. परन्तु वो उस गुरु परंपराकी संकलनामे लगे है जाके आदि श्रीमन्नारायण है; अर्थात् हम भी हमारे गुरुद्वारा उनतें सांधे गये है, उनका परं-परा संबंध पाये है.

हमारे गुरुनें उन पर्यंत केसे पहुंचे वा लीये दूसरा श्लोक नित्य पढते है: वो विस्तारमें गुरु परंपरा है: सोया प्रकार है.

अस्मद्देशिक मस्मदिय परमाचार्यान् शेषान् गुरुन् ।
श्रीमल्लक्ष्मण योगि पुंगव महा पूर्णं मुनि यामुनम् ॥
रामं पद्म विलोचनम् मुनीवरं नाथं शठ द्वेषिगम् ।
सेनेशं श्रिय मिंदिरा सहचरं नारायणं संश्रये ॥

हमने हमारे गुरुसें संबंध बांधा, उनका संबंध उनके आचार्यके साथ, उनका उनके, एसे बढे जाते, मुख्याचार्य, श्रीमन् लक्ष्मणा-चार्य—श्रीरामानुजस्वामी, उनके उपर महा पूर्ण, यामुन मुनि, राम

मिश्र, पुंडरीकाक्ष, ओर फीरनाथ मुनि, ओर शठकोप स्वामी पर्यंत, यह लोकमें पहुंचेकी, उनका संवंध, सेनेश कहे तो, श्री वैकुंठके पार्षद गणके मुख्य, श्री विश्वक्सेनसें है, उनका श्री ईंदिरा—लक्ष्मीतें है: ओर वाका नारायणतें है: एसे नारायण आदि गुरु, जगद्गुरुतें हमारा संवंध वन गया.

नारायणहि प्रलयमें एकहि होते है: उनतें प्रथम ब्रह्मा उत्पन्न होते है: वोभी तव अज्ञानी होतें है. उनको ज्ञान देनेवाले, वोहि नारायण साकार होकर, वेदरुपमें, रहस्य प्रदान भी करते है.

धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, चारु पुरुषार्थ ओर उनके उपाय, वेदतें आदि गुरु श्रीमन्नारायण, ब्रह्माको शीखातें है. वो वेसाहि अनुष्ठान करके, प्रजा शिष्य करके, उनको शीखाते है. सनकादिक नारद ओर पराशरादि, उन्हितें वो अर्थ पातें है. वो फीर ओर ग्रंथोतें वाको विख्यात करतें है; उनतें व्यासादि पातें है, वो ओर ग्रंथोतें विस्तारीत करतें है, ओर शिष्योकों शीखाते परंपरा आगे वढाते है; वेसेहि वो अर्थ हमारे पर्यंत, हमारे आचार्य परंपरा द्वारा आते है. व्यासकेहि सुत्र, ओर पराशरके पुराणसें, हमारे मुख्याचार्यने श्री भाष्य लीखकर, तत्व, हित ओर पुरुषार्थका ज्ञान, परंपरासें हमको दीया है. जगत मात्रके गुरु परंपरा यह रुषी मुनीलोकहि है. उन सवके आदि ब्रह्मा, उनके नारायण है. यह चारो पुरुषार्थके लीये, सर्वको सर्वदा सामान्य गुरुपरंपरा है. सव उन्हींतें यह ओर अन्य लोकके दुःख जानेका, ओर सुख पानेका उपाय शीखे है. जन्मतें तो सर्व पशु सद्रश अज्ञान होते है. येहि आदि गुरुके ज्ञान दानके प्रताप, सर्व, मनुष्य, रुपी, देव, ब्रह्मापना पाये नीभाये जाते अंतमुक्ति—परमात्माको—भी पाते है: कोटीशः धन्यवाद है उस आदि गुरु श्रीमन्नारायणकों, जाने हमको मनुष्य देह, ईन्द्रिये, सामन, साधन दीयेपर, भोग,

मोक्ष फलभी, हमारे लीये ठहराके, वाके भोगी हम होसके, वा लीये, ज्ञान गुरु परंपरा वना रखी है, जाका लाभ लीया, लीये जाते है; ओर संपूर्ण लीये तो हमभी अंतसंपूर्ण वोहि कृपा प्रवाहमें बढते वेसेहि वनेंगे. हजारों वन गये वने जाते है. उनके द्रष्टांत इतिहास भी हमारे उत्तेजनार्थ सुप्रसिद्ध है. श्रेयके अनेक मार्ग, अनेक गुरु परंपरा, अंत वोहि श्रीमन्नारायणसें चली वाहिंमें जा मीलती है; वोहि सत्पथ है.

आहार, निद्रा, भय, मैथुन, में आयुष्य व्यतीत करनेवाले पशु समान मनुष्योंतें, जो विशेष विचार करतें है. धर्म, अर्थ काम, अधिक प्राप्त करनेको गुरु ग्रंथ आचरण करतें है, वो कर्मानुसार धर्म तें अर्थ, वाते काम अधिक पातें है. देहतें आत्माभिन्न है. देह, छोडनेके पीछेभी वो रहेगा, वेसा समजकर, येहि आयुष्य ओर येहि साधनों तें पीछेके लीयेभी जो कुछ विशेष करतें है; वो उनतें श्रेष्ट अधिककाल, अधिक सुख पातें है. संसारके भोगोतें वडीया भोग वाले देवोके लोकहै, उनके भोग मीले वा लीये, जो धर्म, गुरुग्रंथ-द्वारा करते मरते है, वो वो, देवलोकमें जाके कृती अनुगुण, वहांके भि भोग पाते है; ओर सदाके लीये दुःख मात्र जावे, ओर सदासुख—परमफल—पा सके, एसा आत्मा अविनाशी, सो यह देहमें रहे जीव. " अहं " माने, जाने, जाताहै सोहमहि हैं. वेसा आपका अमरत्व, नित्यत्व, नित्य सुखीत्व होनां संभवित—सच्चा, जानते मानते, वा लीये, मोक्षके लीये, धर्म अर्थ ओर कामकाभी भोग देतेहै, वो सवसेंशयाने है. गुरु ग्रंथ प्रताप सवको है. सर्वेश्वरने सवके लीये, ब्रह्मातें लेके रुषी, मुनीद्वारा सर्व सामान्य शास्त्र जेसेहि यह विशेष शास्त्र दीयेहै, प्रसिद्ध कीये, करवाये, चलाये है. ओर ठीक तो येहि हैकी, मोक्षार्थी हि मनुष्य होवे. मनुष्य देहकी दुर्लभता सार्थकता, ईसीसें संपूर्ण है.

सर्व जगतकी प्रजाका पिता सर्वेश्वर एकही है, वाते सब देशमें, सर्वकालमें, सबके लीये, गुरु ग्रंथ परंपरा सर्व पुरुषार्थके लीये दीहै. परंतु सृष्टीकी रचनाहि त्रिविध गुणोके भेदतें, तामस राजस सात्विक है, वातें शास्त्र ग्रंथ गुरु उपाय फलमेंभी त्रिविधता रर्खीहै, उसमे सात्वीककी श्रेष्टता है. तम तें रज, वामें तें सात्विक होतें है वा लीये देशकाल वस्तुकी, वेसी संगतीहि हेतु होतीहै. जो सात्विकमेंहि रहेना, बहेना, चहे, रज तमको छोडे, वा छोडनेका यत्नकरें, सो अंत वामे स्थिर होते है, ओर वेसे शास्त्र, गुरु, ग्रंथ, उपाय, आचरणद्वारा अंत कृत कृत्य होते है. सबकी कसोटी,-परीक्षा, सात्विकके आधिक्यसें है. आहार, विचार, आचार, संगति, उपाय, फल, मुकावला कीये तो, वा लीये हमारे पूर्वजोकी, उपर कही परंपराहि श्रेष्ठ ठहरती है. वेदतें सीमाहै, वेदांततें परीसीमाहै. वाके आदि प्रवर्त्तक वोहि सर्वेश्वर श्रीमन्नारायण होयेपर, ब्रह्मातें, महादेवजीतें, सनकादिकतें, परंपरा चलीहै. वो सर्व वडे तो भी बद्ध है. वेसी तो एकहि परंपराहै, जो नित्य सिद्ध मुक्तों तें चलीहै. ओरभी आदि मुक्त नित्यकेनायक विश्वक्सेन होके, वाकी गुरुभी श्रीनारायणकी सदा सर्वदा सहचरी है, ओर वाके उपर, सबके उपरी वोहि नारायण है, वोहि परंपरा हमने उपर दो श्लोक ते कही है.

नारायणतें श्री, उनते सेनेश, उनतें दीव्य पार्षद है, वो अवतार लेके भूमीपर आके कई बेर ज्ञान दे गये. वेसे दशका दीया भया ज्ञानका संग्रह द्राविड भाषामें अद्यापी सजीवन है. उन सबतें भी जीनकी परंपराका लाभ हम पाये, ओर वाके साथ ओर नव पार्षदोका दीया ज्ञानभी पाये, वो हमारे कुल पति श्री शठकोप स्वामी, ओर उनके शिष्य मधुर कवीहै. वोभी ज्ञानदेके चले गये परंपराभि नष्टसी कइ काल पर्यंत रहि, फीर श्रीनाथ मुनी स्वाभी प्रकटे, जीनोने योग प्रताप अनुष्टान करके, परम पदसें, वो श्री शठकोप

स्वामीको, यह भूमीपर बुलाकर, उनतें पूर्ण अर्थ पाये. ओर उन्हीने वो श्री संपदाय आगे चलाया, जो गुरू ग्रंथ द्वारा परंपरा श्री लक्ष्मणाचार्यमें आके, एसा पूर्ण होके जगतमें फेल रहा है कि, जाका लाभ हम रंक, पामर, कुग्रामवासी पर्यन्त पहुंचा है; और सब आचार्योंने वातें, श्री संप्रदायकों अन्य ग्रंथ अर्थतें पुष्टि दी है. ओर वातें ही अभिलों वाकी सवमें श्रेष्टता वनी है, सिद्ध भयी है. एसा हमनेभी, मुकावलेसें निश्चय कीया है, ओर वामें हम तुष्ट है, वातें गुरू परंपराके लीये यहां ईति ॥

अथ उपोद्घात्–अधिकार.

जव आदिगुरू श्रीमन्नारायणने, ग्रंथ ओर गुरु परंपरा हमारेहि लीये वनाइ रखीहै, तो हमको योग्य है की वामें सद्य लग जावे उतनाहि नहि, यह क्षणिक देहके अवसान पर्यंतमें, वाका पूर्ण लाभ ले लेवे. भगवान्, आचार्योंको आपके समानहि, परके निस्वार्थ सुहृद वनाते है. ओर वो आचार्य, शिष्यका, आपका भया वेसाहि, श्रेय करना चहते है. गुरुभी तो पूर्व शिष्यहि रहे. अभी आचार्य जो क्रमते भये, वो क्रमते शिष्य यत्न कीये तो गुरु वनेगा. गुरु तैयार है, कसुर शिष्यकी है, वो हम शिघ्र दूर करनेको यत्न करें. गुरुनें हमने क्या ज्ञान पाया, पावंगे ? क्या अनुभव करेंगे, भोगेंगे ! अभि हम मानते है की, हम अमुक कुलके अमुक देहधारी, जाति वय कुटुम्ब सामन सहाय वाले है. परन्तु वो कहां लो ? मरण पर्यंत. फीर क्या ! नया जन्म. हमारे यह देह, वा आगेकी एसी देहोमें कीये कर्मानुसार हम बडे पुरुषार्थी होके राजा वने, फीर परमार्थ धर्म साधके देव वने, देवके देव वने, अमर कहावे तोभि, मरण पर्यंत वेसे रहे. जो सत्य श्रेय, सत्यगुरु ग्रंथ ज्ञाननें समज कर, सत्पथपर न चढजावे तो कर्म, फल भोग, नाश, वासना, कर्म, एसेहि जन्ममरणकी घटमालमें हमारे असंख्यजन्म हो चूके.

हयगुरु हमको समजाते हैकी, हम आत्मा अणुचेतन ज्ञानस्वरुप, ज्ञानवान, स्वरुपते है. यह जन्म मरणका कारण हमारी प्राकृत इच्छा है, वाते रुके, शुद्ध होनेको चहे, तो वो प्रकृति संवंध ते सदाके लीये हम छुटके, शुद्ध मुक्त स्वप्रकाश वन रह शके. इतनाहि क्यों, जाको परब्रह्म पुरुषोत्तम आनंदघन, अनंत आनंदवान सर्वेश्वर कहतेहै, वो हमारा सदासंगी, सदास्वामी, सदापिता, गुरु, सुहृद, स्वाभाविक है, हम वाको वेसा जाने माने, ओर यह देहधारी जीव, आत्मा, चेतन, में श्रीमन्नारायणका कुमार हौं, दासहौं, शिष्यहौं, शेषहौं, एसा जानु, मानु, वर्तन रखुं, तो अंतवाका पुरा लाभ, पूर्ण स्थानमें, वाके पूर्ण वैभव, स्वरुप, रुप गुणयुत, सदाके लीये मोको मीले. ये लाभ देनेको स्वामी सदा तैयार है. वा लीयेहि गुरु परंपरा का विस्तार हे, उनका प्रयास है तो, अव हम वाका संपूर्ण लाभ लेनेमें क्यों देर करे !

यह जगतके उपर तो सात लोक, उत्तरोत्तर अधिक भोगमय है. अंत सत्य लोक ओर वामें ब्रह्माका पद है. परन्तु कह चूके की वोभी नश्वर है. आप ब्रह्मा अविनाशी पदके लीये प्रयास कर रहे है, वो पदके लीये हमभी प्रयास कर सकतें है वो उनकी देहके अवसानमें वो फल पावेंगे वेसे हमभी येही देहके अवसानमें वो पाय सके. अर्थात् उनके पहेले ओर जो उनको मीलनेका है, सोही हमको भी मील सके एसा है.

जेसे यह अनित्य लोक है, वेसा नित्य लोक है. वहां नित्य वैभवस्थान मंडप, सिंहासन, वापे विराजित नित्याकार पुरुषोत्तम श्रीमन्नारायण है. श्रीयुत ओर शेपासनके उपर अनेक दिव्य पार्षद गणतें सेवित है. वो परमपदना थकी सेवामें वो नित्य पार्षद, समानहि हम वनके, नित्यके लीये वो दिव्य दंपतीका, नित्य सहवास-

सह भोगयुतं, नित्य कैंकर्य हम पाय सकते है. ओर फीर वहांसें, अपुनराट्टत्ति है यह वेदांतका अंत घोष है.

जेसे राजा मृगयाको गया होवे, वहां ते बाल राजकुमार वाकी छावनी मेंते यथेच्छ जंगलमें चलदें, वो मार्ग भ्रष्ट हो जावे, कीसी वनवासीकी कुटीपें जा चढे के, वो अज्ञान बालकको, अपना अपना पुत्र बना रखे, वो फीर बडा होवे, तबभी वाकोही पिता, वोही माता, कुल, कुटुंब, उत्रम, आहार, आचार, अपनाहि करके मान ले; फीर कभी कोई परिचित राजपुरुष वहां आ चडे, वो असल राजकुमार रहा वाको पहेचाने, वाको वो संग छुडावे, आपके साथ अपनें भुवन लाके, सब राजकुमारके योग्य आचार विचार शिखावे वो पुरा योग्य बने, तब वाका पूर्व, सत्य संबंध कहे कर, राजाके पास लेजाकर, पिताकों पुत्र सोंपदे, वो प्रीतिसें स्विकार करे—येहि काम हमारे लीये हमारे आचार्य करतें है. हमको योग्य हैकी, कुसंग कुसहवास, छोडकर, उनसंग जा बसे, उनकी सुने, एसा हमारा यामें अधिकार रहे. ईति ॥

अथ सारोद्धार, अधिकार ३.

धर्म सुखके लीये है. धर्म क्या है सो प्रथम ठीक समजना चाहिये. औषधतें कष्ट जावे, परंतु वो यथार्थ है, एसा निश्चय करके सेवन करना. प्रथम सत्यत्व का निश्चय, फिर फलके लीये श्रद्धा, अंधश्रद्धा हानीकर है. जाका जो औषध नहि वाके सेवनमें श्रद्धा रखे तोभी चहा फल नहि मीलता. वो विपरीत कर्म हो तो हानी होती है. औपधकी श्रद्धासें विप पाये तो मृत्यु होता है.

जो वेद वाह्य कुद्रष्टीके ग्रंथ है वो असार है. युक्ति भले वामें हो. फल इच्छित नहि प्राप्त होगा. जो वेदावलंबी धर्म है उनमे कुछ सार है; जीनको सकाम कर्म कहते है, आरंभमें दुःख, पीछे वियोग

तें कष्ट, मध्यमें अल्प सुख, वोभी अपूर्णतावाला आगमें घृतकीनाई कर्मकांडव्रत ओर देवताराधन, उनके तीर्थ धाम क्षेत्र सेवन, अंत-ब्रह्मा पर्यंतके लोकके भोगको प्राप्तीका येहि न्याय है. धर्म, अर्थ, काममें उनकी गीनती है.

मोक्ष यह सार है. कभी भी फीर कष्ट कोइ प्रकार नहि, ओर आत्म प्राप्तीका स्वतः नित्य सुखानुभव है. परंतु वो भी परिमितका परिमित आनंद है.

सबका सार तो परमात्मा प्राप्ती है. जो अनंतकी अनंत प्राप्ती अनंत प्रकार, अनंत कालपर्यंत, ओर सब सुखभी तो वाके अंतर्गत है, वोहि मीलाना चाहिये. वालीये अनेक उपाय शास्त्रमें है. उन सबमें सारतम, रहस्य त्रय तीन मंत्र है–श्रीमत् अष्टाक्षर, श्रीमत्द्वय, ओर चरम श्लोक, उनको सविधि सदाचार्य, समाश्रयण द्वारा, मीलाके उनके अर्थ ज्ञानपूर्वक अनुसंधान तें सीना है.

श्रीमत् अष्टाक्षरमे, हमारे लीये, जीतना ज्ञान मीलाना आ-वश्यक वो सब है. उनके अर्थ समझनें तें वो ज्ञान प्राप्त होता है. ज्ञान मीलानेको वो सारभूत है.

उपायको न करना वो समजनेको चर्म श्लोकका अर्थ वस है. वामें सारभूत उपाय कह दीया है.

ओर उपायके अनुष्टान ओर फलके लीये, द्वय, कहेतो दोमंत्र संगहि, दीये जाते है. उनके अर्थ वस है वाके अनुष्टान, अनुसंधान तें कृत कृत्यता है.

या प्रकार संक्षेपमें जो सार कहेना योग्य सो कहा. प्रत्येकका विवेचन आगे प्रथक अधिकारोसें आयगा. गुरुसें यह मीलाया तो सब मीलाया यह सार है॰ इति.

अथ (प्रति तंत्र) निश्चयाधिकार ४

हमारे तंत्र सिद्धांतोमे जो असाधारण अर्थ कहे है, ओर जो निश्चयरुप मुख्य ठहरे हैं सो यहां दरसाते है. अचेतन तत्व तो प्रत्यक्ष है. चेतन जीव क्या सोभी सब समज सकते है. वो दोनोका स्वामी, तीसरा, जो ईश्वर कहा जाता है, सो कोई तीसरी जगेहि है यों नहिं. यह चेतन ओर अचेतनके भीतर वो एक, सबमें समान, है. उभय तत्वका वो शरीरी है. यह चेतन ओर अचेतन जहां, जीतने, है सो वाके शरीर है. शरीरी कहे तो, वो चेतन ओर अचे- तनका धारक, नियंता ओर शेषी बनके, उनमे रहेनेवाला है. फीर आपतो, उन विना भी, ओर रहा है. वो अपनी ईच्छाको पूर्ण करे एसा स्वतः गुण शक्तिवाला, स्वरुपतेंही, रहेपर वो दोनोका भी धारण, नियमन, मालीकी, करता है. जीवको शरीरकी सहायकी अपेक्षा है, वेसी वाको नहि है. जीव शरीरको धारता है सोभी, वाको लेके. वो तो सदा सर्वमें, कभी अलग न होवे वेसा—अप्रथक सिद्ध—उनमे लगाही है. वातें उनकी सत्ता वाको लेके याके आधीन है. सोभी कोई श्रम करके नहि, संकल्प आधिनही. अनित्य वस्तु- ओंके लीये वाकी वेसी ईच्छा है, नित्यके लीये नित्य इच्छा है, यों करके सर्व पदार्थकी स्थीति वाकी ईच्छानुगुण है. कहा हैकी—

द्यौ सचंद्रार्क नक्षत्रखं दिशोभूर्महोदधिः ।
वासुदेवस्य वीर्येथ विधृतानि महात्मना ॥

स्वर्ग, चंद्र, सूर्य, नक्षत्र, आकाश, दिशा, भूमी, ओर महा- सागर वो वासुदेवके वीर्य करके धारे गये है. वो जहां, जेसे, बनाके रखे है वेसे, वहां, बने रहेते है, सो वाके सामर्थ्यतें—कहोकी संक- ल्पतें, जेसे स्थीति वेसे प्रवृतिका भी समजनां. लोकमे भी शरीरका

वेसाहि दिखता है. जीवके स्वरुपके आश्रय, ओर संकल्पके तावे, वाका शरीर है. परंतु जीवका यह शरीर साथ संबंध अमुक काल पर्यंतही है. फीर वाको वो शरीर छोड देना पडता है; वाते वो छुट जाता है. इतनाहि क्यों ? शुषुप्ति, मुर्छामें वो आप शरीर कहां है सो जानभी नहि सकता फीर अपने संकल्प आधिन कहांसे रख शके ? जाग्रत अवस्थामें वो संकल्पसें नियमन कर सकता है. आधार स्वरुपतें है, ओर नियमन संकल्पतें है. फीर ईश्वर सर्वका शेषी है कहे तो, वो सर्व आपके लीये है. फीरभी आप, उनके लीये भी, परार्थ, कृपासें बन रहता है. उन करके वो श्रीमान, गुणवान है, एसा सिद्ध होता है. वाकी वडाईके वो पदार्थ है, हेतु है. यह तत्व है. हमको हमारे लोये अब क्या सार खीचना, समजना, वर्तनमें, अनुभवमें, लानां ?

जब इश्वर हमारा एसा आधार है तो, वाके ज्ञान शक्ति गुणकीनाई, वातें हम कभीं अलग नहि हो शके एसे है. सदा वाके साथ हे तो, वाका लाभ सदा लेसके एसा है; तबतो उचित है की, वाकोही सदा हमारा आधार समजे. वो शेषी, वाके हम शेष है. यह नित्य संबंध है तो हम को वाकाहि प्रयोजन हो, ओर हम वाके हि प्रयोजनके लीये बन रहे, वोहि हमारा पुरुषार्थ ओर वाहिमें हमारी पुरुषार्थता, वोहि रुची, वाहिमें रुची, होनी चाहीये. वो नियंता है ओर हम नियाम्य है, तो हम वाके वेसे हि शरण बने रहे. फीर हमारे लीये हमको क्यों ओर क्या उपाय करना ? वोहि उचीत करेगा, वनाय रखेगा. तात्पर्यकी हम अनन्य आधार, अनन्य प्रयोजन, ओर अनन्य शरण, बने रहे. यह निश्चय सत्य, यथार्थ, स्वाभाविक है. अन्य सब भूल, भ्रम, अज्ञान, अयथार्थ, अठीक, है. यह द्रढ करना, यह अर्थमें द्रढ बने रहेना, चाहिये. ब्रह्मातें लेके चेटी पर्यंत स्वरुपतें समान चेतन है. यह विषयमें सब सरीखे है. छोटे

मोटे कर्म फलतें, क्षणिक, दीख पडे, वातें यह संबंध भूल नहि जाना चाहिये.

यह अर्थ तीन मंत्रमें—तीन रहस्यमें है. उनके शब्दोमे येहि अर्थ है. अष्टाक्षर देखेतो स्थीति प्रकार–" नार " का "अयनस्ते" " नारायण ", ओर वो " नार ", वाका अयन करके, भीतर रह कर, कहा है. जो " नार " कहेतो चेतन अचेतन–उनका धारक, व्यापक, सो " नारायण. " एसे वो अनन्य आधार अर्थ आया. " ॐ " कहे तो " अ " केलीये " म ", इश्वरके लीये जीव, वोहि परार्थ्य. ओर " नमः "–मेरोलीये नहि,--कहे तो पारतंत्र्य सिद्ध भया. एसे यह दो पदतें, अनन्य प्रयोजन, अनन्य शरण भी, कहा है. तेसे हि द्वय मंत्रमें " श्रीमन्नारायण चरणौ शरणं प्रपद्ये " यह पूर्व खंडमें अनन्य शरण कहा है, वाकाहि शरण वरण कीया है. ओर " श्रीमते नारायणायनमः " यह उत्तर खंडमें, अनन्य प्रयोजन कहा है. दोनो भागमें अनन्य आधार वाला, "नारायण" शब्दतो कहाहि हैं. चरम श्लोक मेंतो स्पष्ट शब्दोतें अर्थ समजा जाता है. वो येहि वात है.

चरमसे समजके, द्वयसे अनुष्टान करनेमें, थोडेमें द्रष्टांत देखनें होतो, भारतमें अर्जुनके रथपर. येहि अष्टाक्षरमें प्रणवका सार है. रामायणमें आंगे समजाते है. सार खींचे तो " नमः " के लीये श्रीभरत शत्रुघ्नका अनुष्टान, ओर " नारायण " के लीये, अवधपुरवासी श्रीराम स्वामीके प्रसंगमें उदाहरण प्रसिद्ध है. फीर " आय " को पूरा समजेतो, पादुकाकी सेवा पर्यंतका द्रष्टांत लक्षमें रखना या प्रकार यह अर्थ इतिहाससें सुद्रढ सिद्ध है.

या प्रकार मंत्रार्थ तें निश्चयार्थ मील चूके वामें ओरभी कहते है. प्रणवमे चतुर्थीतें शेष भाव कहेपर, नारायणके साथ भी है वाते शेष सो दास. शेष तो अचेतन भी होवे, यह चेतन है. वाते दास

भावहि यथायोग्य हमारे लीये है. " नारायण " करके स्वामीत्व है तो, कैंकर्य यह हमारे लीये पुरुषार्थ, ओर हमारा रक्षण होवे, या प्रकार वो नियमन करे, वो वाके लीये योग्य ठहरा. वोहि सदा लक्षमें रहेतो इतने अर्थोंमें निश्चयकी पूरती है, वामें लगे रहना चाहीये. प्रमाद भूलतें च्युति नहो यह आवश्यक हैं, जो यह मीलाया वाका सतत उपयोग करे जाते वाकी सफलता है इती ॥

अथ अर्थपंचक अधिकार ५

प्राप्यस्य ब्रह्मणोरुपं प्राप्तुश्च प्रत्यगात्मनः
प्राप्त्युपायफलं प्राप्तेस्तथा प्राप्ति विरोधिच
वदंती सकलावेदास्सेतिहास पुराणका
अर्थ पंचक कहेतो पांच विषयके अर्थः—

१ प्राप्य जो पानेकी वस्तु सो तो परब्रह्महि है. वाका रुप है
२ वाको पानेवाला सो प्रत्यक आत्मा कहेतो जीव है
३ प्राप्ती का उपाय ४ प्राप्तिका फल ओर ५ प्राप्तिके विरोधी यह पांच वाते सव वेद, इतिहास पूराणकार कहतें हैं. इतनेमें शास्त्रके सव विषय आ जातें है.

१ प्राप्य जो ब्रह्म वाका स्वरुप मुलमंत्रमें प्रथम अक्षरमें, ओर " नारायण " शब्द करके भी, कहा है. द्वयमें "श्रीमत्" विशेषण की साथ, " नारायण " शद्ब है. चरममें " मात्र " ओर " अहम् " करके कहा है. सव जगे नारायण सो श्रीमानहि समजना. वो सदा श्रीयुक्तही है. सर्व जगे उनको वेसेहि कहे है. शिष्टजन श्रीसहित नारायण के हि शरण भये हैं. वो सदा वेसे है.

फीर वो श्रीपति "अखिल हेय प्रत्यनिक कल्याणै कतान अनंत ज्ञान आनंद एक स्वरुप" है. वाते श्रीके साथ वो गुणोकाभी वामें अनुसंधान करना. वामें कोइ हेय गुण नहि, वो वाके विरोधी

है, यहभी वीचारनां. फीर वामे अनंत कल्याण गुण है. वो पुरुषोत्तममें षड गुण मुख्य है. ओर इतर गुण अनंत है. वो प्रत्येक गुणभी फीर अनंत है. वो रुपके साथ अस्त्र भूषण है. शंख चक्र वामे सर्वत्र सुप्रसिद्ध है.

फीर पर, व्युह, विभव, अंतर्यामी, ओर अर्चा, एसे वाके रुपके पांच प्रकार है. ओर वेसे अनेक आकारभी वाके हि है. यह रुप उपरांत वाकी विभूती अनंत है. आलमंदारके " यदंड " श्लोकमें अंडको लेके कहि वो, चेतन अचेतनात्मक लीला विभूति जो है, सो भोगार्थ है. ओर वो जेसा अनंत वेसी वाकी नित्य विभूति–परम पद–भी अनंत है. उभय विभूतिका स्वामी, शरीरी, वो एक है. उभय विभूति आदि यहां पर्यंत कहा वो सर्व विशिष्ट वो प्राप्य परब्रह्म है. पांचमें ते एक अर्थ कहा. प्राप्यसो यह है एसा अनुसंधान करना. वो हमको पूर्ण प्राप्त होगा.

२ प्राप्ता, जो वाको पानेवाला–हम चेतन वर्ग--सो--तीन प्रकारके कहे जाते है, वद्ध मुक्त, ओर नित्य. उनमे हम जो, उपाय करनेवाले जीव, वद्ध है, उनके विषयमे कहे.

वद्धवर्ग—अनादिते कर्म प्रवाहमे वहेते संसारी, ब्रह्मा ते स्तंब पर्यंत विभाग वाले, क्षेत्रज्ञ कहे जाते है. वो सर्व वद्ध है, वो उपाय कीये तो मुक्त होते हैं.

मुक्त—शास्त्रमें कहे उपाय करने ते भगवानकी एसी कृपा पाप्त करेकी जा करके उनका संसार वीलकुल निवृत्त होजाकर, उनकों भगवानका असंकुचित अनुभव होवे, वा करके वो निरतिशय आनंदको पावे.

नित्य वर्ग—ईश्वर सरीख अनादिते जिनके ज्ञानका संकोच नहिं भया है, वाके समान वय वाले, नित्य निर्दोष, कभी जिनको

संसार छुआ नहि है, वो नित्य कैंकर्य हि कीया करते है. एसे अनंत, गरुड, विश्वकसेन, आदि पार्षद्गण, सुरी वर्ग मात्र है.

ये तीनो प्रकार के चेतनका साधारण रुप अणु है. ज्ञान आनंद अमल स्वरुप वोहे, ओर भगवानके वे शेष ओर परतंत्र स्वरुपतेंहि है.

प्राप्ता स्वरुपको प्रणवमें मकार करके कहा हैं. " नारायण " में " नार " शद्ध करके कहा है. द्वयमें " प्रपद्ये " में गीनती है.

३--४ प्राप्ताके उपायका स्वरुप, श्रीमुल मंत्रमें " नमः " में कहा है, द्वयमें पूर्व खंडमें, ओर चरम श्लोकमें पूर्वके अर्ध श्लोकमें कहा है, वेसा समजना—यह तीसरा अर्थ है. चोथा जो फल सो स्वरुपसें मूलमंत्रमें, चतुर्थीमें, द्वयमें "नम" मे, चरममें उत्तर अर्धमें कहा वेसा जानना.

५ विरोधी स्वरुप—अविद्या कर्म वासना आदि मोक्षके प्रतिबंधक वर्ग है सो.उनमे मुख्य कारण, अनादितें चला आता भगवानकी आज्ञाका अतिलंघन होनेतें वाका निग्रह है. यातें क्षेत्रज्ञका ज्ञानका संकोच होता है. त्रिगुणात्मक प्रकृतिके परिणाम विशेषभूत शरीर आदी करके, उनमें अभीमान होता है. हम वाते देह ईन्द्रिय आदिके परतंत्र वनकर, वो अवस्थामें भी शास्त्र योग्यता न रहे, वेसी तीर्यक आदी अवस्थामें जा, गीरते है. कभी शास्त्रयोग्य मनुष्यादी शरीरमें आये तोभी, बाह्य कूद्रष्टी मतमें भमा करते है. उनतें कोइ निकले हो तो, वो फीर उनको भगवानके स्वरुपका तिरोधान करके विपरीत ज्ञान, वो प्रकृति संवंध पेदा करती है. ओर अपने विषयमें भोग्यताकी बुद्धी उत्पन्न कराति है. यों मूल प्रकृति पांच विषयोंके मोहमें तत्वका अज्ञान, विपरीत ज्ञान, विषय प्रावण्यादि या प्रकार कर देती है किमात्र सुख लवके अर्थ, हम फीर नहि करनेके कर्म करने

रुप आज्ञाका अतिलंघन करते है, वो पाप फेर फेर करते अंतज्ञान गुमा देते है, पापोमेंहि वढे जाते है. एसी अपराधोंकी परंपरामें लगे जो जीव, सो उन कर्मके फलमें, आसुरीयोनी, फीर अधमगतीमें, जा गीरते है–गर्भ, जन्म, जरा, मरण, नरकादि चक्रमें भ्रमते कोइ क्षुद्र सुखके साधनभूत राजस तामस शास्त्रोमें कहे प्रकार, यक्ष राक्षस भूत प्रेतादिके सेवनमे आप लगते, ओर सजातीयोंको लगाते है. वो उनोने दीये क्षुद्र पुरुषार्थ, कीडोंके भोग सरीखको भोगते है. कोइ योगमें लगे तोभी वो क्षुद्र देवोंको मीलके वेसेहि क्षुद्र फल पाते, खूटाते, फीर भटकते है. आत्मप्राप्तीकी ईच्छा कीये तो भी, ओर वामे स्वस्वरुप, पर्यंतका चिंतवन करे तो भी, आत्मप्राप्ती फलमेंहि कई रुक जातें है. अथवा अष्ट सिद्धिमें फसके फेर जन्म पाते है. अनेक फंदे है. कोइ एकमेंहि फसातो, जीव संसारका पार नहि पाता है. कर्म योगादीमे लगे तोभी कई जन्म वीते, तवभी पार पाना कठीनहि है. वशिष्टादीभी केसे रुक रहे है. तात्पर्यकी यह सव हमारे विरोधी दुर्घट नाना प्रकार है. ओर उनका मुख्य कारण भगवानकी आज्ञाका उलंघन है. यह समजे हे तो, वो भगवानको हि वश करे, एसी वाकी शरणागती, जो कठ वल्लीमें भी कही है वोहि, उपाय करना करके श्रीभाष्यकार प्रतिपादन करते है. वोहि आचरण कीये तो, विरोधियोंका निरसन, ओर प्राप्ताको श्रीमन्नारायण परब्रह्मकी प्राप्ती होगी येहि अर्थ पंचकका सार है--अर्थ पंचक या प्रकार है ओर संक्षेपमें कहे तो--लक्ष्मी नारायणको पानेके लीये, वाकी कृपा पाये जीव वाकी शरणागतिरुप उपाय करके वाको पाने रुप फल मीलानेमें, उनके ज्ञानको संकोच करने वाले सुक्रत दुष्कृत रुप बंध हेतुभूत वेडीको तोडदेते है जो विरोधिरहि. इति.

अथ तत्वत्रय अधिकार ६

भोग्य, भोक्ता, ओर नियंता, एसे तीन तत्व अर्थ पंचक के भीतरही है. वो मुमुक्षुओको आचार्य उपदेश देते हि है. क्योंकी वो विना, प्रकृति वोहि आत्मा है एसा भ्रम, आत्मा स्वतंत्र है यहभ्रम, ओर फीर अनिश्वरवाद आ पडना संभवित है.

प्रथम अचेतन विषय कहते है—वो एक तत्व है, परार्थ है, नित्य है, परन्तु सतत विकारी है. त्रिगुणी है. कर्म कर्म करनेका क्षेत्र वाको प्रकृति कहे ते है.

दुसरी प्रकारका अचेतन काल है. वो अनादि, अनंत, कला मुहुर्त दीन मास वर्ष रुप जो परिणाम दीखते है उनका हेतु है.

अचेतनका तीसरा प्रकार शुद्ध सत्व, जाका ज्ञान आनंदमय लोक, वैकुंठ, बना है. वहां कालाधीन परिणाम नहि है.

२ तीन प्रकारके चेतन यह दूसरा तत्व--प्रथम बद्ध, पीछे मुक्त, ओर तीसरे नित्य पार्षद यह चेतन वर्गका स्वरुप न मनुष्य है, न देव है, न नारी, न नर है. वोतो प्रकृतिके आकार है. उनमें वो रहता है वो आप अक्षर है. सदा एकरुप, अणु, ज्ञान आनंद, विमल स्वरुप है.

३ तीसरा मुख्य तत्व इश्वर–वो एक है, सदा एक सरीख है, सर्वज्ञ, सर्वद्रक, सर्व शक्तिमान ओर श्रम, तंद्रा, भ्रम, क्रोध, कामादितें सदा रहित.

जो त्रिविध अचेतन ओर चेतन, उपर कहे, उनके स्वरुप, स्थिति, ओर प्रवृतिके सकल भेद, सो यह सर्वेश्वरके सदा आधिनमें है.

तीन प्रकार अचेतन ओर चेतनके स्वरुपजो उपर कहै उनकीसत्ता वाको लेके है. स्थिति कहे तो उनकी ओर कालमें अनुवृति. वामें नित्य वस्तु जो चेतन वाकी नित्य ओर अचित, अनित्य, की

अनित्य है, कहे तो वामें इश्वरके संकल्पतें न्युनाधिकता होती है. उनकी प्रवृति सो व्यापार, वो वो वस्तुगत धर्म रहेपर वो वो धर्मका प्रकाश अप्रकाशरुप प्रवृति इश्वरके संकल्पके आधिन है. जो वस्तुमें वाका असाधारण–खास–धर्म न रहे तो वो वस्तुको वस्तु करके हि न कही जावे.

जीवको ज्ञान आदि स्वरुपवान वेसेहि कहा. वो फीर सर्वेश्वरका शेषभूत हे वोभी वाका एक लक्षण है. जेसे अणु होके चेतनसो जीव वेसे विभु होकर चेतन अनन्याधिन निरुपाधिक शेषी सो इश्वरके लक्षण है. जीव ओर इश्वर दोनो आत्मवर्ग करके उनका साधारण लक्षण है. दोनो चेतन है कहेतो आपको आप जानने वाले प्रत्यक् है. ज्ञान स्वरुप तेसे ज्ञानवान, ज्ञानके आश्रयभी है. एक स्वरुप करके ज्ञान, दूसरा वाके आधारसे रहेता धर्मरुप ज्ञान गुण है. अहं करके जो भास होता है, वो स्वरुप भूतज्ञान, ओर अन्य जो भास होता है सो गुण धर्म भूतज्ञान करके है. सूर्य ओर रश्मी. दीप ओर तेज. दोनो प्रकाश तेसे यह दोनो ज्ञान. (एक धर्मी एक धर्म, गुणी ओर गुण विशेष्य ओर विशेषण करके भी कहते है.)

जीव इश्वरमें अणु विभु करीव शेष शेषी लक्षण भीन्न है. प्रणवमें प्रथम अक्षर " अ " सो नारायण, वो शेषी रक्षक श्रीपति. ओर वाका " म " जीव सो शेष. मध्यम " उ " कारसें निरुपाधिक शेष सो अन्यका नहि, एसा समजाया है. भगवानको लेके, भागवतके शेषत्वमें निरोध नहि. वा भगवानकी शेषीत्वकी वृद्धी करनेवाले है. यहतो हम चेतनकी स्थिति–अब प्रवृति पराधिन परार्थ कतृत्व, ओर भोकतृत्व यह चेतनोमें है. इश्वर स्वयंभोक्ता है. जीवोमे कतृत्व, भोक्तृत्व वो प्रकटावे तब तेसा होता है. तबहि हमारा कतृत्व भोक्तृत्व परार्थ वाके आधिन कहा.

अव भेदके विशयमें कहते है—बद्ध चेतनोमे अन्योन्य भेद—अविद्या, कर्म, वासना, रुची, प्रकृति संबंध करके, स्थितिमें भेद—दीखतेहि है. परस्पर ज्ञान सुख आदिके भेदभी वाको लेके, ब्रह्मातें स्तंब पर्यंत कहे है. यह बद्ध चेतन, स्वस्व कर्मानुसार इश्वरतें शरीर पाते है. ओर उनको वो आप धर्मी ज्ञान स्वरुप, अपने धर्म भूतज्ञान करके धारते है. धर्मी शरीरको धारता है तवहि शरीरकी सत्ता बनी रहती है, वो अपनी जाग्रदादि अवस्थामें, जो शरीरको धारता है, वातें पुरुषार्थ, उनके लीये उपाय जो इष्टके लीये ठीक कीये तो, परम एकांतीक बनकर, भगवद अनुभव कैंकर्यादिके योग्य हो जाता है. ओर पाप कीये तो, वोहि शरीर धारण, विपरीत फल भागी बनाता है. जीव शरीरको तजता है तब वाके संघात बीखर जाते है. वो इश्वरके पदार्थ तो हैहि. वो जीवके लीये फीर नहि काम लगते है. बद्ध मोक्ष पावे वहां पर्यंत उनकी प्रवृतिके भेद पुण्य पाप वा कुछ नहि एसे त्रिविध रहते है.

मुक्तोका अन्योंते भेद—उनके बंधकी निवृत्ति ओर स्वरुपके आर्विभाव होता है, यह एक प्रकार है. उनकी स्थिति के भेद पूर्व अनादितें, न रहा सो आर्विभाव भया, ओर अव वो आर्विभाव सदा बने रहेगा. उनमें परस्पर भेद कोइ कव मुक्त भया, कोइ कव, वस येहि है.

उनमे प्रवृतिका भेद—अनादि कालके पीछे पूर्ण भगवद अनुभव पाये वाते पेदा भयी जो प्रीति वो वो करालेती है जो कैंकर्य, उनमें भेद पडे. कोइ कुछ करे, कोइ कुछ करे.

नित्योंमें भेद—वो अनादिते आर्वीभूत स्वरूप वाले परतंत्रहि बने रहे है. उनको स्वामीका अनादितें अनुभव सुख है. मुक्तको अब प्राप्त भया, परंतु वो फीर नित्यसें कमती नहिं होता है. फीर उनकी उनकी स्थिती समान रहती है.

प्रवृत्तिमें भेद—वहां अनंत गरुडादि अधिकारी विशेष उनके उचित कैंकर्यमें नियत है. नित्य मुक्तोकोभी सर्वविध कैंकर्यकी सिद्धि है. परंतु वहां सब स्वामीके अभीमत, वाके अभिप्रायानुगुण कैंकर्य करनाहि चहते है, स्वाभिमत कैंकर्य की रुचीहि नहि उठती. फीर जाने स्वामीका चहा कीया, वो ठीकही कीया, एसा अन्यकी क्रुनितें, संतोष आनंद होता हैं. सवको स्वामीका इच्छानुगुण कैंकर्य हो येहि ईच्छा रहती है. में अमुक करुं यों नहिं रहता है. क्योंकी वा करके फलमें तारतम्य नहिं, प्रीति हि बनी रहती हैं, सब एक मन है.

सर्व जेसे ज्ञान स्वरुप समान तेसे ज्ञानवानभी समान है. धर्मीका वो धर्म, धर्मीके आश्रय नित्य हैं. परंतु इश्वर ओर नित्यका वो ज्ञान विभु है. अन्यका संसार दशामें कर्मानुरुप बहुविध संकोच विकासवाला बनता है. मुक्तावस्थामें वो पूरा खूल जानेसें, फीर सदा उनका ज्ञानभी विभू होता है.

उनकी प्रवृत्तिसो विषयका प्रकाशन, ओर प्रयत्न दशामें शरीर आदीको प्रेरना वो है. बद्ध दशामें संकोच विकासभी सही. फीर अनुकुल प्रतिकुल प्रकाश न करके भोगके भेद है. भोग वाहिका नाम जो आपको अनुकुल प्रतिकुल करके, काहुकाभी अनुभव मीले. ईश्वरको सर्व अपनी विभूति होनेते वस्तु मात्र स्वभाव सिद्ध अनुकुल है. वेसाहि अनुभव नित्य मुक्तोकोंभी होता है. संसारीमें काल भेद करके पुरुष भेद करके अनुकुल, प्रतिकूल, उदासीन यह भेद है. वस्तुगत स्वभाव तो जो है सो है. परंतु चेतनको कर्मानुगुण सत्य संकल्प इश्वर फल विविध देता है. ओर वो कर्मो के फलोका अनुभव करनेके लीये, बद्धोमें स्वरुप योग्यता, सहकारी योग्यता होती है. स्वरुप योग्यता कहे तो चेतनका परतंत्रत्व, सहकारी योग्यता कहेतो

वाका अपराधीत्व. नित्य मुक्त परतंत्र चेतन होनेतें, उनमें स्वरुप यो-

ग्यता है. परन्तु उनमें स्वतंत्रत्वतें आज्ञाका अतिलंघनरुप सहकारी योग्यता नहि है.

जीव इश्वर, सर्व आत्मामें, उनका आत्मस्वरुप, आपतें आपको भासना यह है ही. परंतु उनका ज्ञान, धर्मभूत प्रकाश (गुण, प्रभा) सर्वमें स्वरुप साथ लगाहि है. उनको ओर विषय प्रकाशनके लीये वो चाहिये. आपको जाननेको तो आपहि है, वो उनकी प्रत्यकत्व है.

हमारे धर्मभूत ज्ञानतें, हम ओरके ज्ञानकोभी जान सकते है. ओरकों तो जानतेंहि है. त्रिविध अचेतनका ज्ञानभी वातेहि होता है.

अचेतन नाम जो ज्ञानका आश्रय नहि है सो. वो ओरको प्रकाशे आपको आप न जाने, न अन्यको जाने. त्रिविध अचेतनको संग्रहसें कहेतो प्रकृति, काल, ओर शुद्धसत्व, उनमें सर्व भेद आ गये. जडमें तो स्वयं प्रकाश है ही नहिं. परंतु शास्त्रमें कहते है की शुद्ध सत्व द्रव्य स्वयं प्रकाश है. क्योंकी वो ज्ञानात्मक है, त्रिगुणात्मक नहि है. परंतु जेसा धर्मभूत ज्ञान सवको प्रकाश नहि होतातेसे, यह भी सवको प्रकाश नहि होता. मुक्त नित्यको वो प्रकाश स्वरुप दीखता है. हमारा धर्मभूत ज्ञानभी तो हमको वद्ध दशामें विषय प्रकाशन समय, प्रकाश होता है, सदा नहि. तेसावाका समजना. जेसे आत्मानुभव होगा वेसा शुद्ध सन्यका भी होगा. कर्म हठजाकर धर्मभूतज्ञान सदाके लीये, संपूर्ण विशुद्ध होगा. तब वातें शुद्ध सन्यका अनुभव होगा, जेसे धर्म भूत ज्ञानका संकोच विकास होता है, वेसा शुद्धसत्वमय द्रव्यके विकार पृथिवीरुप रसगंध आदि होता है. प्रकृति जेसा वोभी तो द्रव्यहि है. ज्ञातृत्व उसमें भी नहिं ओर वा विकारी है. वाते वाके सर्व भांत पदार्थ, आकार वन सकते है. या प्रकार त्रिविध अचेतन संग्रहमें कहे.

अब यह त्रिविध अचेतन धर्म प्रकृति कहे तो ईश्वरके संकल्पके

अनुसार उनके विचित्र परिणाम होते है. उनमें त्रिगुण द्रव्यके स्वरुप भेद, तीन गुणोके जुदे जुदे आश्रय करके है. वो सतत परिणामी है. वो तीन गुण सत्व रज ओर तम यह है. वो जब तीनोगुण समान होते है, तब महा प्रलय होता है. जब वो विषम होता है, तब श्रष्टी स्थीति होती है. गुणोकी वीषमता में महदादि वीकार होता है. प्रकृति महतत्व, अहंकार, तन्मात्रा पंचमहाभूत एकादश ईद्रिये एसे चोवीस तत्व कहे जाते है. कोइ न्युन अधिक कहते है. जो है उन्हीकोंहि उनमें अवांतर भेद है. फीर उनके अभीमानी देवता है. उनकी उपासना, उनके अधिकारी है, वो सर्व आत्मा तें, अन्यप्रकार है. हमको इनका ज्ञान होता है. यह सर्व फीर इश्वरके अस्त्र भूषण करके रहते है.

इश्वरका कौस्तुभमणी, वो आत्मा पुरुष मात्रका अभिमानी, वेसे मुळ प्रकृति श्रीवत्स, महत्व गदा, ज्ञान अज्ञान नंदक खड्ग, उसका भीयान सात्विक अहंकार, राजस अहंकार सो सारंग, शंख—मनः सुदर्शन चक्र कर्मेंद्रिय—शर—ज्ञानेंद्रिय, सुक्ष्म स्थुलभूत वनमाला—एशे सर्व भुषण अस्त्ररुप करके, सर्व तत्वधारी, सर्व वेद्य प्रतिपाद्य गरुड वाहन वाले लक्ष्मिनारायण है.

चोवीस तत्वोके परस्पर भेद प्रसिद्ध है. सत्व गुण स्वसत्ता भासक, वाते विपरीत तामस है. यह लीला विभूती अनंत है, वेसे नित्य विभूतीभी अनंत है.

त्रिगुण द्रव्यके प्रवृतिके भेद—बद्ध चेतनोके भोगके रुपमें है. इश्वरकी लीलाके परीकर सम विषम होके बनतें है. वो वो चेतनोके लीये, देह ईद्रि आदिन, व्यापार करतें है. यह रजतम बद्धोकों—यथार्थ तत्वको टांपके भोगके लीये विपरीत ज्ञान पेदा करते है. वोहि सत्वकी वृद्धिं करके तत्वोंका यथावत् प्रकाश करके मोक्षके हेतु होते है. यह सर्व इश्वरकी लीला रसावह होते है.

शुद्ध सत्वके स्वरुप भेद—उनमें रजतमका मीश्रणहि नहि. सत्व-गुणहि वामे रहता है वाकी वेसीहि स्थितिभी है. वाकी स्थितिके भेद नित्य मंडप गोपुर प्राकारादि, ओर इश्वर ओर नित्योके विग्रह होते है वोभितो नित्य रहते है. इश्वर, नित्य ओर मुक्त, जव अनित्य इच्छासें विग्रह धारे तो वेसे अनित्य वनते है. वाकी प्रवृतिके भेद—नित्य मुक्त ओर इश्वर इच्छानुगुण परिणाम पाकर, शेषी के भोगके उपकरण वनकर शेषोंको कैंकर्य के उपकरण वन रहते है.

कालतत्वके स्वरुप भेद—वो नित्य है विभू है. ओर वोहि वाकी स्थितिके विषयमें. प्रवृतिभेद—कला कांष्टा पल घडी प्रहर सृष्टी आदिके उपकरण करके कहे जाते है. यह जो तत्व है सो स्वरुपतें नित्य है. नाम उपयोग अन्य हो, वालीये उनकी अवस्थां वदलती है तव कोइ नष्ट भये करके कहे जाते है. वो अवस्था वदलेपर आप प्रवाह रुप नित्य है. अनित्य है करके, सजातीय विजातीय करके वोला जाता है.

यह पदार्थोंके, स्वरुप स्थीति ओर प्रवृतिके भेद इश्वरके स्वाधिनमें है. इश्वर स्वस्वाधीन है. इश्वरके स्वाधीन यह है कहे तो, इश्वरकी सत्ता वीनां इश्वरकी इच्छा विना इनकी सत्ता आदीका अभाव है. धाते समस्त वस्तु स्वभाव सिद्ध इश्वरकों अनुकुल है. उनके स्वभाव इश्वरकी इच्छाके आधीन है. वाते इश्वरको नित्य मुक्त सव अनुकुल है. वद्धोंमें कर्मानुगुण पुरुष भेद रहेपर, यहां अनुकुल प्रतीकुल उनको हो. इश्वरकों वद्धोके स्वरुप सर्वदा अनुकुल है. वोवाकी इच्छा सिद्धहि है. आत्माको जो कोइ तत्व अनुकुल कर्म वश करके हेय भुत शरीर वनता है वो भ्रमतें, ज्ञान हिनोको अनुकुल भासता है. वो कर्म करके उपाधीरुप समजकर, मुमुक्षुको प्रतिकुल, त्याज्य लगता है. मुक्तोको उनके शरीर स्वाभाविक अनुकुल होनेते उपादेयं लगते है. अहंकार ममकार मुक्त हमारा है करके स्वीकार करने में

फीर प्रतीकुल वो होता है. स्वरुपका ज्ञान उत्पन्न होके स्वामीके शेषत्वका ज्ञान होने ते अनुकुल लगता है.

यह सर्व सत्तावाला इश्वरका स्वरुप सत्यज्ञान अनंत आनंद अमल करके है. ओर जो वाके गुण दिव्य मंगल विग्रह आदि सर्व इश्वरके, निरुपीत स्वरुपके विशेषण है. यह गुणोमें ज्ञान वल ऐश्वर्य विर्य शक्ति ओर तेज यह छ गुण वाके परत्वके उपयुक्त है ओर सौशील्य वात्सल्यादि वाके सुलभत्व उपयुक्त है. यह सर्वगुण सर्वदा स्वरुपके आश्रित है.

पर, व्युह, विभव, अंतर्यामी ओर अर्चा, यहां पांच भेद भगवानके रुपमें है. पररुपमें ज्ञानादि छे गुणका अनुसंधान करनेमे आता है. ओर तीन जीनको व्युह कहेते है उनमें ते छेमेंसे दोदो गुणका अनुसंधान खास कहा है. जेसे उपनिषद्में भिन्न भिन्न विद्यामे, भिन्न गुण उपासनाके कहे है. तेसे वो तीन व्युहके नाम संकर्षण प्रम्द्युन ओ अनिरुद्ध है. संहार, स्थिती, ओर उत्पत्ति—करके उनका सबंध कहा है. जाग्रत स्वप्न ओर शुषुप्ती करकेभी अभीमानी कहे गये है. परसो वासुदेव, वो परमपदनाथ है. ज्ञान वल प्राधान्य शंकर्षण हर, ऐश्वर्य वीर्यप्राधान्य प्रद्युम्न पालक, शक्ति तेज धारक अनिरुद्ध कर्त्ता—जीनकी नाभीतें ब्रह्मा भये करके कहते है. तीनमेंतें केशवादि बार व्युह, ओर पद्मनाभिदि छत्रीसकाभी वर्णन शास्त्रमें है

रामकृष्ण सो वीभव है. मत्सकुर्म वोहि वर्गमें. इनको अवतार कहेते है. वो वो प्रयोजनको लेके वो वो कार्यके अनुगुण स्वेच्छा करके जीतने गुणका जो रुपमें प्रकाश करना उचीत उतना वहां लो वेसा रुपधरते दीखाता है. परव्युह अवतार के लीये वींब बनाके वामे सेवक सेवा करते है. उनके लीये उनमें आविर्भाव होता है. व्रो अर्चा अवतार है. सर्व के हृदयमें सुक्ष्म विशेष रुप करके स्थिति

है. वो अंतरयामी अवतार है. अष्टांग योग सिद्ध हृदयमें उपासना करनेवाले योगी लोक वाकी उपासनाका अधिकारी है. यह अवतार के रुपभी शुद्ध सत्वमय समझने. उनको कर्म फलका सबंध नहि है. यह अवतार सव सत्य है. वामें इश्वर पूर्ण है. वाके ज्ञानादिका उनमें संकोच नहि है. उनके प्राकत्यका कारण इश्वरकी इच्छा मात्र है. धर्म रक्षा करनेकी अपेक्षा वो वालीये काल, ओर साधुका परित्राण आदि, वो धारनेके प्रयोजन है. यह अर्थका निश्चय करके, एक जन्मभी अपने अधिकारानुगुण, सुप्रकार उपाय कीये तो येहि जन्मके अंतमे मुक्त होते है. स्वतंत्र प्रपत्तिनिष्ट होके शरण्यका पुरा ज्ञान मीलाना. वो उपाय के अनुष्टान समयमें महा विश्वासादिमें स्थीर रहे तो वो उपकारी पूरे होते है. एसेहितो अर्चा अवतार मोक्ष देते है. रुषी मुनीयेही कही गये हैं. परांकुश प्रभृतिनेभी, अर्चा अवतारका रहस्य, ओर वाकी वीलक्षणताका अनुसंधान करके, वो प्रवाह प्रतापतेंहि परतत्वका साक्षात्कार कीया है. इश्वर एसा है जो अपने आनंदके परिवाह करके सकल जगतकी सृष्टि स्थिती संहार मोक्ष आदि व्यापार कर रहा है.

यह इश्वर सर्व अवस्थामे श्रीयुक्त, सपत्नीक रहता है. तबहि माता पिता करके, पराशर परांकुशादिने वेसा अनुभव करके स्तवन कीये है दंडधर पुरुषाकार भगवानके साथ लक्ष्मीका अविभक्त व्यापार है. खास धर्म (शरणागति) की आधार एसे श्री का भीन्न व्यापारभी है. शीक्षा में स्वामी ओर दयामें देवी. एसे उभयके रुपके उचीत व्यापार है. इश्वर इशितव्यमें, उपाय उपेयमें हमारे दंपती दैवत है इति.—

श्रीमतेनारायणाय नमः—

परदेवता पारमार्थाधिकार.

प्रकृति पुरुष ओर इश्वर विषयमें सामान्य तो कहा. परंतु वो

परदेवता कोन या विषय निश्चय नहो तो, परम एकांतिकका लाभ न मीले. ओर परम एकांतीक बने विना मोक्ष नहि मीलता है, वातें इश्वर एसा एक खास देवता है यह निश्चय करना आवश्यक है.

चेतन ओर अचेतनके वीचमें अत्यंत भेद है. यहतो प्रमाण सिद्ध है. ब्रह्म सर्व देवतात्मक है, एसा पक्षभी नहि ठीक है. सर्व देव ब्रह्म नहि है. जीव इश्वर एक नहि है. देव जीवका भेदभी सुख दुःख करके प्रमाण सिद्ध है. सर्वका अंतर्यामी एक रहे परभी, ब्रह्मा रुद्र आदि सर्व देवतामें ईश्वर समान वातें सर्व समान यह पक्षभी ठीक नहि है. यह देवताके मुख्य ब्रह्मा रुद्रभी पेदा भये कर्म वश्य है करके प्रमाण सिद्ध है. सर्व देवके पिता ब्रह्मा महादेव सह नाशपाके प्रलय हो जाता है, तव एक देवता रहेता है वो नारायण है. नारायण पूर्व रहे, उनते ब्रह्मारुद्रादि प्रकट भये. पहेले नारायणतें ब्रह्मा उनतें महादेव—वो नारायण सोहि सवमें रहा विष्नु जो स्वेच्छासें ब्रह्मा रुद्रके वीचमें भी, अवतार लेते है वाते त्रिमुर्ति समान है करके कहते है. परन्तु वास्त्वीक वो नारायण उभयके कर्त्ता है वोहि अनाद्यंत नारायण होनेतें तीनो समान नहि है यह भी सिद्ध है. क ब्रह्मा, इश महादेव, उनका रक्षक सो केशव वो नारायणका नाम है, वाके प्रसादतें ब्रह्मा ओर क्रोध तें रुद्र पेदा भये एसे प्रमाण है. तव-हि एक रज ओर अन्यतम प्राधान्य कहे जाते है. पूर्वमें सर्व देवने नारायणके जो जो नामतें जेसा जेसा चाहिये वेसा आराधन कीया वातें नारायण तें सर्व देव वोवो अधिकार पाये है.

ब्रह्मा कमलते प्रगटे फीर गभडाये "तप" शद्ध सुनकर तप कइ हजार वर्ष कीया तव उनको स्रष्टाके दर्शन भये, सोनारायण जीनकी नाभितेंसे नीकले कमलमेंतें वो ब्रह्मा प्रगट भये हे.

महादेव भी महामेघमे आपके देहको होमने तें "हर"

पद पाये है. या प्रकार सात्विक शास्त्रोको प्रमाणोंतें सिद्ध है. वाते ब्रह्मा रुद्रादि सर्व देव मायाके परतंत्र त्रिगुण के वश, ज्ञान संकोच विकासवानहि बनते है. तवहि ब्रह्माके बेद हरे गये, महादेवको पितु शिरछेदन तें हत्या लगी, यह वृतांत है. ओर वो नारायणतें हि दुःखको दुर कर सके, वोभी वहांहि कहा है. वो अपने पदपरभी नारायण उनका अंतरात्मा होकर वानें दीये ज्ञानादितें, कैंकर्यरुप अपना अधिकार चला रहे है. तवहि तो वामे विघ्न आये तो नारायणके शरण जाते है. ओर वोहि उनके संकट हरते है. उनके अधिकारमें स्थिर वना रखते हैं.

वो नारायणके वडे अधिकारी यह श्रष्टीमें रहेपर उपासना करने योग्य नहि है. क्योंकी उनके भी देह प्राकृत अशुद्ध है कर्म के फलरुप है. तवहि ब्रह्माने स्तंव पर्यंत एसी गीनती होती है. सर्व चेतन स्वरुप ते समान सर्व वोहि त्रिगुण प्रकृतिमें वद्ध है. वो सर्व स्वरुप तें अणु ओर नारायण विभू है. वहां कहां मुकावला ? वेसे कोटी चेतन ओर अपार अचेतन मिश्र जो उभय विभूति, वाका एक स्वामी सो वो नारायण है. सर्वका वो तो एक शरीरी, सर्वका वो एक इश्वर है. यह सर्व वाके प्रकार है. वो प्रकारीको लेके वो वो नारायण है करके, कहे गये है. वहां भ्रम उठता है. वो सर्व वास्त्वीक शरीर है. यह नारायण उनका आत्मा है. वेसावो तो कभी समजतें भी है. ब्रह्मारुद्र संवादमें कहा है. तुमारा आत्मा वोही नारायण, मेरा, सर्वका समान आत्मा है, वो सर्वका साक्षी है. वाको कोइ सद्य नहि देख सकता है. अर्थात यह देव मात्रभी वाके शेष है. ओर वो उनका शेषी है. तव वो देव कहते है, हमतो उनके दास है. हमारे जेसे असंख्य दास वाको है. या प्रकार नारायणके समान कोइ नहि है, फीर अधिक कहांसे. तवहि वो अद्वितिय कहा गया है. वाका नाम पुंडरीकाक्षभी श्रुती स्मृति आदि सुप्रसिद्ध है.

जाते वाका पुरुषाकारत्व सिद्ध है. वातें कोई पर नहिं, पवित्र नहिं, न कभी भया, न होगा. वो मात्र साकार ऐक जगे व्यक्ति रुप नहि जेसा वो आकार विषयमे वेसे सर्व चेतन अचेतन में वसा है. वातें वाको वासुदेव कहतें है. ओर फीर कहते है की वासुदेव तें कोई मंगल नहिं, वासुदेवतें पर कोइ न पावन हैं, न दैवत है, ओर उनको मात्र प्रणाम कीये तो वो प्रसन्न होते है. वेसे सुलभ भी तो वोहि है. वो सर्वका राजाधिराज है, सर्वेश्वर है. जाके उपर वाकी कटाक्ष जन्मतें पडे, वो मुमुक्षू हि होता है; ओर ब्रह्मा रुद्रकी पडे तो रजतम मय होता है. याते मुमुक्षुको अभीभी, ओरको कटाक्षतें वचना ओर वाकी मीलाना तव काम वनता है. तव हि कहा है, संसार सागरमें डुवते गोथे खाते विषयोमे फसे जीवोकों, विश्नु विना ओर नाव नहिं है. फीर कहा है की वडे वडे देव यह प्रकृति मंडलको लेके कहे जाते है. वेसे ब्रह्मा शीवादिक कोभी बुद्धिमान नहि सेवते है. क्योंकी वो कीतना केसाभी दीयेतो अंत नश्वर हि होता है. वो आप भीतो छूटनेको नारायणको ध्याते है. तवहि शास्त्रका घोष है की, नारायण हि सदा ध्येय है. मोक्षके लीये उनकी हि सेवा कीयेतो आचार्य, वनते है. परंतु मोक्ष दातातो श्रीहरी ओर मोक्षतो वाकी हि सेवातें है. जो आसुर प्रकृति होते है, उनको यह सत्य, प्रकृतिके दोषतें नहिं रुचता, वो इतर देवमे परत्व बुद्धि, इतरकी याके समान बुद्धि करते है, परंतु अंत वो पस्ताते है हि. कोइ वढके विश्नु द्वेष भी करते है कया, वैश्नव देवके शत्रु वन बेठते है. उनके रक्षक देव धरे रहते है, ओर वो मारे हि जाते है. याहि सत्यके भरे इतिहास है. देखे रामायण महाभारत. असुरोको शिक्षा देनेमें एक उपाय उनकी बुद्धिमें भ्रमकरना यह भी है. या लीये वडोवडो तें भगवान शास्त्र वनवाये वो चल गये है. महादेव ब्रहस्पती आदि वाके कर्त्ता है. असुरो तें देवोका या प्रकार विना लढाइ रक्षण होता है,

वो अपने पापोके फलमें आप कुपंथ पकड कर मारे जाते है. नष्ट होते है. रावण विभिषण, हिरण्यकश्यप प्रल्हाद आदि द्रष्टांत विश्व विदित है. ओर देवतें क्षुद्र फल सद्य मीलतें है. वातें मंद बुद्धि वामे सद्य लगते है. वो विषमय मधु है, वेसा परिणाम तें पाया गया है. वो देव जो फल देते है. वामे भी प्रताप श्री हरीका है, वाके सेवनका है, जो सेवामें मीलाया वामे तें वो देते है. वाकी इच्छा–नियमके आधिन रहकर देते है. आप सुख दुःखमें परतंत्र है, फीर सेवकोका यथेच्छ कहांसे कर सके ? मर्यादा छोडे तो उनको सहना पडता है. नारायण उनका कीया फेर देते है. हिरण्य मारा गया रावण नष्ट भया; ओर विभि-षण प्रल्हाद विना श्रम वो फलभी पाये. जो सत्य अंतस्वामी तो हे सोहि है ओर वो नारायणहि है. ओर जो सत्य फल मुक्ति, वोतो कहि गयेकी नारायणकेहि वश, घाकेहि सेवनतें है. वो देवोकाभी मुक्ति दाता है वहां सर्व बद्ध वाके समान परतंत्र है. वाकी सेवा, मोक्षके पहिले यह लोकके भोग चहेतो वोभी देती है. जाते इतर देवके सेवनका कोइ हेतु करके प्रयोजन हि नहि रहता. जनक अंब-रीष केकय के द्रष्टांत है. ओर सहस्र ऋतु इंद्र, यह पद वाकी सेवाके हि फल करके है. फीर वो सेवा ओरोंकी सेवा तें सुलभ सुखद है. ओर जो वाको मोक्षके लीये आराधे, तब तो आप उपाय बन जाते है. सेवकके सेवकसे होते है. उनको ज्ञानमें दऊं, जाते भीतरका अ-ज्ञान जावे उनका भावमें बना रखुं, ओर अंत वो ज्ञानभी में खोल दउं जातें मोकों पावे. यह आपके वचन है. एसे शरणागतके उ-द्धारक आपबन बेठते है. आप अंत भूलेको स्मरण करातें है. मुर्छी-तको साक्षात्कार अंतकालमें एसा कराते है की, जाते वो सद्यहि विशुद्ध होके परमपदके मार्गपें चढ जाता है. एसेहि प्रमाणों ते प्रमाणीक शास्त्र भरे है. जीनके दुष्कृत है उनको यह नहि रुचता

जीनको काम है वो देवतातरमें फस्ता है. वोहि परम दैवत समजता है. ' बुद्धि कर्मानुसारिणी ' यह न्याय ते सर्व व्यवस्था ठीक होती है. जुठी श्रद्धाका फलभी वेसा. जो देवोके शरीर है उनको भगवानके शरीर मान ले वोहि भूल तवहि फल–परिमीत होता है. भगवानका साक्षात शरीर हो वाकाहि सेवन कीये तो, भगवानका साक्षात सेवन ओर वाका अनंत फल मिलता है. ज्ञान पूर्वक कृती ओर वो ज्ञान यथार्थ हो तो फल यथार्थ मिलता है. भूल भ्रमका फल वेसाहि आता है यह सुधि वात है.

परिमित फलके लीये भी भगवत सवंध वस है. आर्त अर्थी द्रुपदि ध्रूवभी अंत ज्ञानी वनते है. ओर जो स्वामीकोही चाहने वाले है, उनको स्वामीनो वेसेहि चाहते है. फीर वो शीघ्र परम फल स्वामी कृपा बलते पावे वामें कोन वडी वात है. या प्रकार, सर्व कर्म सर्व देव सर्व फलका स्वामी एकपर देवता सरवेश्वर नारायणहि है.

श्रीवैश्नवोंको यह ज्ञान तीनोमंत्रोमें दीया जाता है. श्रीमत् अष्टाक्षरमें प्रथम प्रणवमेंहि प्रथम अक्षर (अ) करके फीर मंत्रमें नारायण करके, कह देते है की, हम वाके लीये है, यह वेदका सार, वोही रुपी मुनी आचार्य प्रीय द्वयमे, दोनो बेर नारयणकरके उपाय ओर नारायणकरके फलमें भी कहा. ओर सर्व मान्य गीतामें आप, मेरा एकका शरण पकड करके उपाय, ओर ' में ' तोकों सर्व पापो तें छोडुंगा करके फलमें, कंठतः कहने है; तो हमको अव वाके हि वने रहेना वो एक करके कहते है तो देवतांतरोका सेवन छोडनां हि. आचार्य हमको श्रीमन्नारायण करके उपाय फलमें, ओर विशेष ज्ञान देते है. वो नारायणको फीर श्रीयुक्त हि परदेवता समजना. भगवान पराशर, आलवार यह रहस्य हि कह गये है. सोपूर्वाचार्यने भी मीलाया है. अनुभव सिद्ध येहि सत्य है करके

निश्चय कीया, ओर फीर हमको या प्रकार, था विस्तारमें दीया उनके वलिहार—ओर क्या कहे. इतिः

मुमुक्षुत्व अधिकार. ८

यह शरीरमें क्षेम कहां है ? वो जो भोग भोगता है वो दुःख मुल दुःख प्रद सुख स्वल्पवान है. ओर वाके त्रीताप सदा बने रहते है. आत्माको वो वा लीये मीलता है. वातें भूलाता अंत रुलाता है. वाते हमको हमाराहि वीचार करना चाहिये. हम आत्मा स्वयंप्रकाश, ज्ञाता, कर्ता, भोक्ता, शरीरी, अणुनित्य निरयव, छेदनदाहन शोषण न वने एसे वृद्धि क्षय रहित स्वरुपतें है. यह लोकतें परलोकमें, ओर देहमें, हम जाके वाको मीला सकते है. याते वढीये वहांके भोग मीलानेका पुरुषार्थ यहांहि कर सकते है. जों नर्कपतन जन्मांतर क्लेश आदिका भय है, वो उनके कारण भूत कर्मोंकी निवृत्तिसें, निवृत्त होजा सकतें है. ओरोका आश्रय कीये तो अशुभ मीलता है. स्वर्ग देवलोक वेसे नश्वर समजके उन प्रयास तें बचके, भगवत्कैं-कर्य रुप स्वरुप प्राप्त वैभवकी अपेक्षाके योग्य होके, सर्व अपेक्षीत संग्रहभूत जो श्रीमत् अष्टाक्षर वो मीलाके वाके सारतम अर्थोका अनुसंधान करते वामें " म " कार जो प्रणवमें है वाते अपनेको ज्ञाता जानकर देह ओर वाके अनुबंधिमें ते अहंकार निकाल डाले—

प्रथन अक्षर (अ) ओर वाके साथ रही लुप्त चतुर्थी तें, जो अर्थ समजा गयाकीं, हम नारायणके अर्थ है वाते आप ओर आपका करके जो माना गया है, वामें तें अहंकार ममकार निकालडालकर, फीर हमारा स्वातंत्र है करके जो मान रहे, वो " उ " कार समजके वाकेहि लीये है, वाते वेसे बन कर अपने लीये भी आपको स्वतंत्र न समजे. फीर ओरके शेषभी न बने. नमेरा ओर कोइ शेषी है करके हि द्रढ माने. फीर नारायणके हि लीये एसा 'नारा-

यण ' तें समजके कैंकर्य करे. वोहि फल सदा मागे ओर सब वी-चारोकों उन्मुल करदे. एसे स्थीर प्रतिष्ठित ज्ञान वाके हो कर रहे.

वो प्रसन्न भये तो क्या फीर अलभ्य है ? ओरको सेवे तो अंत-वानहि फल है. यह लोक अनित्य ओर असुख मय है वाते वाकोहि भजे. पुत्र स्त्री धन राज्य वैभवमें ममत्व करनें ते दुःखहि होता है, स्वर्ग तें भी गीरना ओर वो भीती वहीं सुख भोगतें भी बनी रहती है. फीरवाके पीछे बंधन बने हि है. ब्रह्माका भूवन पाये तोभी वोहि बात है.

वाके उपर यह ब्रह्मांडके पार विष्नुका परमपद शुद्ध सनातन महाज्योतिमय है. वहां मुढ, विषयी, कामी, क्रोधी, नहिं जा सकतें है. जो अहंकार ममकार रहित, सुख दुःख रहित, नियत इंद्रिय वाले, ध्यान योगमें कुशल है, वो साधु पुरुष वहां जा सकते है. वहां रम्य काम्य चारी वीमान, हजारो प्रकारके क्रिडाके स्थान है. जाके आगे यहांके देवोके स्थान नरक प्राय है. वेसे वहां सदा बने है वो परमात्मा नारायणका श्री वैकुंठ है यह शीष्ट प्रमांणों ते सिद्ध सत्य है.

अल्प, अस्थिर, दुःख मुल, दुःख ते भरा, विपरित अभिमान-का मुल, ओर स्वाभाविक आनंदका विरोधी, यह छे दोष प्राकृत विषयमें है यह सबके अनुभवकी बात है. वाते उलटा भगवानका अनुभव विलक्षण अगाध है. एसा बिचारके, इतरमें ते विरक्ति ओर वामें आशक्तिकरनी चाहिये.

प्रवृत्ति धर्म जेसे ब्रह्माने कहे है, वेसे निवृत्ति धर्म रुषि नारा-यणने कहे है. वो निवृत्ति धर्ममें जो प्रवृत्त हो वो मुमुक्षु अधिकारी; पूर्व कहे प्रकार पर अवर तत्वको समजके, पुरुषार्थका निर्णय करके, इतरमें वैराग्य लाकर परम पुरुषार्थके उपायका अनुष्ठान करनेमें लग

जावे, उनका यह सुनना समजना सफल है. ओर जो श्वानके पुछ सम जेसेके वेसे वने रहते है उनको आप पस्ताना होगा. वाते जो सुनावे सो आचरने में त्वरा रखे, वो परब्रह्मको जाने, परम उत्कर्ष पावे, वोहि ठीक मुमुक्षु है. ओर वो वनने के भागी। भोगी हम है क्या ! नहोतो तैयार हो जाये आरंभ करे. इति.

अधिकार विभाग अधिकार ९.

परम पुरुषको प्राप्त करनेका उपाय, निवृत्ति धर्म कहा है. वाका जो स्वीकार करना चाहे, उनमें दो प्रकारके अधिकारी है. १ अद्वारक प्रपत्ति निष्ट ओर २ सद्वारक प्रपत्ति निष्ट. ओर स्वतंत्र प्रपत्ति निष्ट, ओर अंग प्रपत्ति निष्ट करके भी दो प्रकार है. जेसे भत्तिमें दो प्रकार साधन ओर सिद्ध भक्ति है तेसे.

आनुकुल्यादि अंग पूरें न समजे पर, आपको अगतिजाने, स्वामि रक्षण करेंगे हि एसा महा विश्वास धारे, ओर शरण्यको समजके आचार्य तें उपदेश पाये, वो वाक्य मात्र अनुगुण उचारण करके शरण गये तो वो अद्वारक है. हमहि स्वामीको कहतें है हमारा तुमहि रक्षण करो, हमारा भार स्वीकार करो, एसा कहेना एक वेर होतो पुरती है. प्रपत्ती हो चुकी जेसे 'भिक्षां देहि' कहे तो वो वो उनके कथन तें हि मील जाती है, तेसे परम उदार प्रभु यह कहेना स्विकार ले तें है; रक्षा करते है. शरण्यकी कृपा एसी प्रवल है की वाके आगे एसी उत्ती वृथा नहि जाती है. पापी हो तो भी शरण आनेके योग्य है एसे वहुत वचन प्रमाण है. यह एक प्रकार.

सद्वारक कहे तो आचार्य द्वारा. हमतो आचार्यको पिता गुरु सुहृद मानकर, उनके पुत्र शिष्य प्रिय वनकर, अपना भार उनपर धरेकी हम तें साक्षात शरणा गति नहि वनेगी, वालीये हमतो आपके शरण आये है. तो वोतो आप ओर आपके जो हो, सर्वका स्वीकार

करनेको हि आप शरणागति करतें हैं तो उनके हम भये तो हमारे लीयें शरणागति, उनकी शरणागतिके अंदर हि आ गइ. वो समर्थ स्वामिकी साक्षात शरणागति कर सकतें हैं. कोइ जंतु आप गीरीका उल्लंघन करे, ओर कोइ सिंहके अंगमें लग रहे, वो सिंह गिरिका उल्लंघन करे तो साथ या कोभी हो जाता हैं. वेसे आचार्य निष्ठ प्रपत्ति है. अंधको अनंध ले जावे, पंगुको नाव पार उतार दे, राजा पाये वो वाके सेवक भी पावे. एसे हमारे दयालु आचार्यके अवलं-वनतें हमारा कार्य सिद्ध होता है. राम स्वामीने कहा हमारे भरत महाराजाकी प्रजा सुग्रीव है, तो वाकारक्षण हमको करनाहि चा-हिये. वो पुरमें वसता हो वा वनमें तेसे हम श्रीरामानुजकी प्रजा भयेको हमारा कार्य भया०

व्यासादि ओर उपाय करनेको समर्थ रहे. भगवत वियोगको वो उपायकी पुरती हो वहां पर्यंत सहसके, वो अनन्य गति नहिं भये उन्होंने एसी प्रपत्ति नहिंकी. वो अंग प्रपत्तिवान रहे. सद्वारक प्रपत्ति करे तो उनको प्रारब्ध पूरे हो वहां लो जो उपासनामें विघ्न आवे, दोप होतो उनकोभी दूर करके, जव वो उपाय पूरा वने तव मोक्ष फल मीलता है. परंतु जो खास प्रपत्ति करे तो, फीर उनको तो वोहि उपाय है. उपायांतरमें लगे तो ब्रह्मास्त्रकी नाइ वो छुट जावे. प्रपत्ति ओर उपायको नहि सहती है.

अधिकारी होतो अद्वारक प्रपत्ति सद्य करले. साक्षात अनुभव हो जावे, जेसे श्री हनुमानजीने श्रीराम स्वामीके दर्शन पायेकी उन को पूरे हि पाये. वो फीर सदाके लीये जीवके साथ जीवनरुप ऐसे प्रपत्ति शीघ्र फल प्रदभी होती है. कैंकर्य कीये जाना, अनुभव कीये जाना सोतो अर्चा अवतारमें भी अपनी प्रीतिसें लगे रहे. ओर श-रीर अवसान पर्यंत वो कोइभी देशकाल, केसेंभी हमारी स्थिती हो; वो परीपूर्ण कैंकर्य वालेको मोक्ष देती है. स्वामीसें मागे तो वोतो

देनें वाले हि है. स्वामीसें क्या नहि वन सकता है ? वाकी शरणा-गतिं सर्व फल देती है. क्योंकी सर्वको सर्व फल देने वाले तो वोहि है. जेसे चार प्रकार भजने वाले आर्त, अर्थी करके कहे है. वाको कोइभी एक प्रकार भजो वातें याचो. उपाय पूर्ती ते फल प्राप्ती होती है. ओर उपाय हमको पूरा करना. यह सर्व उपायतें या प्रकार सुगम सुलभ शीघ्र फल प्रद है. परंतु सुकृत तार तम्यतें, उपायमें भी रुची होती है. अंतफलमें वीषमता नहि है. वाके परतंत्र है वेसे वनना वातें सदा स्वातंत्र्य प्राप्त होता है. ओर स्वामी साथ स्वामी समान मोज करते है. यह रहस्यहै. इति—

उपाय विभाग अधिकार १०

उपाय जो अधिकारीका कर्तव्य है वो कोइ ज्ञान विकाश विशेष है. वातें साध्य उपेयभी तो ज्ञान विकाश विशेष है. उपाय भूतज्ञान विकाशको करणकी अपेक्षा है, वो शास्त्र विहित चाहिये. कोइ एक विद्या विशेष वामें कहे गुणादि नियत वो होती है. उपेय भूतज्ञान विकाश करण निरपेक्ष स्वभाव प्राप्त गुण, विभूति आदि करके पूर्ण विषय होता है. जेसे गुण उपासे वेसे फलमें अनुभव करें वाका फीर कैंकर्य कीया करे यह उपेय है. उपाय ओर प्रपत्तिमें जो ज्ञानका विषयहै सो वोहि है, जो फलप्रद है, भोग्य वेश है. वो सर्वेश्वरहि है, कहे तो उपाय उपेय वोहि है.

इश्वरकों जो उपाय सीधा प्रपती नीष्ट होके स्वीकारतें है, उनकों ओर उपाय स्थान वोहि होता है, वो एक वस होता है, सव कर देती है ओर उपाय कीये तो, उनको कर्म योगतें आरंभ करके उपा-सनाकी पूरती पर्यंत दीन दीनके कर्त्तव्यमें वरावर आसक्त रहेना चाहिये. उन्होने वोजा अपने पर उठाया है. जो उपाय लीया है सो पूरा भीतो होनाहि चाहीये, वो उनकेहि करनेका है, उपाय पूर्ण

भयेते फल है. एसी ओर उपायमें कठीनता है. प्रपन्नको भगवान सब करा देता है, वाते उनको सुलभता है.

कर्मयोग कहे तो शास्त्र तें जीव परमात्मा याथात्म्य ज्ञान मीलाके; आपते वन सके वेसे कर्म, फल संगादि रहित नित्य निमित्त नियमपूर्वक करने, फीर देवार्चन तप तीर्थ दानादिकभी वनेसो करना प्रपन्नको भक्तियोग द्वारा फल मीलता है, तेसे कर्मयोगीको ज्ञानयोग द्वारा, वास्वतंत्र सपरिकर भक्तियोगतें फल मीलता है. वामे आत्मावलोकन साधन होता है.

ज्ञानयोग कहे तो कर्म योगकरके, अंतःकरणका जयहो तव प्रकृति आदितें विलक्षण, जाका आधार, विधाता, सेषी इश्वर है; वाका आधेय, विधेय शेप भूत, एसा वाका शरीर करके जो आप जीव, वेसा वाका निरंतर चिंतवन करना एसे कर्मयोग ज्ञानयोगतें, आत्मावलोकन होता है तव विषयोमे वि तृष्णा होती है. ओर जो आत्मानुभवके सुखकी खाडमें न जागीरेजो, परम पुरुपार्थ भूत भगवानका अनुभव मीलता है. वाके उपाय भक्तियोगमें प्रवृत्ति होती है. तव आत्मा मंजूषमें परमात्मा अंतरयामीके अवलोकनके लीये वो भक्तियोगमें लगता है. एसे आत्मा अवलोकनके साथ फीर भक्तियोग कहे तो, अनन्य निष्ट अनन्याधिन अनन्य शेष भूत भगवत स्वरुप आदि विषयक निरतिशय प्रीतिरुप तेलकी धार सरीख विना अंतरके स्मृति एसी वनी रहे, जेसे साक्षात्कार हो रहा है. वो परमपदमें प्रयाण हो वो समय पर्यंत दीन दीन अनुष्टांन तें वढती जाति ज्ञान विशेपकी संतती सोइ. वरणाश्रम धर्मयामें ज्ञान विकाश हेतुभूत होते है. उनके अनुष्टांनतें सत्वादिकी वृद्धि होती है. रजतम मुलभूत पाप दूर होते है. वाते वोभी कर्त्तव्यरुप रहते है.

यह भक्ति योग कामना भेद करके फल भेद वालाभी होताहै. आर्त अर्थी करके चार प्रकार भक्तके हि कहेहै. परंतु उनमें नित्य

युक्त ओर एक भक्ति करके ज्ञानीका श्रेष्टत्व कहा है. ओर धर्मच्य-वन है॰ मोक्षार्थी उनका सेवन नहि करते है. एसा आपहिने कहाहै. यह मोक्षके उपाय करके कहाजो भक्तियोग, वाको परभक्ति कहते है वाते ये स्वामीमोको दर्शन दे एसी लगनी लगती है. वो लगनी तें ही स्वामी कृपाकरके प्रसन्नहो कर आपका साक्षात्कार कर देते है याका नाम ‘ परज्ञान ’ है. वो स्वामी तो परम भोग्य भूतहि है. वेसे भगवत स्वरुपका साक्षात्कार होनेतें, अति प्यासें को तलावके दर्शन सरीख अत्यंत प्रीति वाके उपर उत्पन्न होती है. जाते स्वामीकी प्राप्ती होती है. यह भक्ति योग पूराभया फलप्रद भया॰

यह भक्तियोगमें त्रिवर्णका अधिकार है. उनमें भी ज्ञानके सं-कोच विकाशका तारतम्य है. जो उतना विलंब फलके लीये न स-हसके सो अधिकार पूर्वक जो प्रपत्ति करे तो, वो साधनरुप प्रपत्ति परभक्ति के स्थानमें मानी जाती है. उपासकभी यहां परभक्तिमें प्रवेश करता है. प्रपन्नकी भी वो दशा होती है. जो जेसा चाहे वेसा करे. भक्ति प्रपत्ति दोनो उपाय है. फल उभयका एकहि है. अनेक ब्रह्म विद्यामे उपासना भेद तेसी यहभी ब्रह्मविद्या (न्यास) नामसें प्रसिद्ध है. वो शास्त्र विहित होनी चाहिये. जेसे कायीक वाचीक मानसीक, तीनोकरण पूर्वक हो तब नमस्कारकी पूरती है तेसे प्रपत्तिभी पूर्ण होनी चाहिये यह सार है. इति.

प्रपत्तियोग अधिकार ११

ओर फल ओर उपायमे निस्पृह होकर, न्यासमें जो प्रवर्त्ते तें हें, उनको अधिकारीका स्वरुप जानना चाहिये. जाको फलमे अ-र्थीत्व ओर उपायमे सामर्थ्य हो सो अधिकारी है. अत्र सामर्थ्य कहो तो शास्त्रज्ञान ओर जेसा जाना वेसा अनुष्ठान करनां ये है ओर शास्त्रमे कहे वेसे गुण योग्यता भी चाहीये.

जो मुमुक्षु स्वतंत्र प्रपत्तिरुप मोक्षका उपाय निष्ट हो वाको शास्त्र जन्य ज्ञान तो वेसाहि चाहिये, जेसा उपासकोंकों होता है. विशेषमें वो आपको अकिंचन ओर अनन्य गति मानता हो. अकिंचन कहे तो ओर उपाय करनेमें अशक्त, ओर अनन्य गति नाम ओर प्रयोजन रहित, तथा ओर शरण्य रहित ओर प्रयोजन न रहेतो बस है. तीव्र मुमुक्षुत्व न होकर देह नीभे तो ठीकहि है एसाभी तो हो तो वाकों देर ते मोक्ष मीलता है. जेसे वायुके वश तृण, तेसे आपको ओर अन्यको भगवानके परतंत्र समजे वो अनन्य गति है. माता पितादि तजके राघवकेहि शरण काक गया, वो अकिंचन है. फीर प्रपन्नमें जाति आदि की परवा नहिं है. वो सर्वाधिकार है. इति.

अंगपंचक अधिकार १२.

यह न्यास विद्याके परिकर पांच है. अनुकुल्य संकल्प प्रातिकुल्यवर्जन, कार्पण्य, महाविश्वास, ओर गोप्तृत्व वरण, यह पांच अंग, ओर छटवी शरणागति, जाको सन्यास, त्याग, आत्म निक्षेप करके कहते है, वो अंगी है. परम पुरुषके उद्देशतें मोक्षार्थि अपने आत्माका समर्पण करे तो आत्म निक्षेप वो फल संग रहित अकर्तृत्वानु संधान पूर्वक होना चाहिये.

आनुकुल्य संकल्प ओर प्रातिकुल्य वर्जन कहे तो सर्व शेषी श्रीपति प्रति, प्रवृत्ति निवृत्ति वाके अभिमत होनी. हम वाके परतंत्र है तो वाके अनुकुलहि वर्तन रखना. वाके प्रतिकुलसें वचना आवश्यक है फीर ओर उपायकी परवा न रखे, ओर वाका महा विश्वास रखे. वो मेरा रक्षण करेगाहि एसी उपायमें द्रढता सो महा विश्वास वातें ओर उपाय एसे छोडने छेसे यह करके निरभय बने. जो पुरुपार्थ के लीये यह प्रपत्ति की, वो प्राप्ति हो वा लीये याचना सो गोप्तृत्व है.

मागे उसको मीले यह न्याय है, वाते अर्थात मागना, अपना अपना अभिप्राय निवेदन करना, इच्छित कहेनाकि वो देवे. कार्पण्य कहेतो पूर्व कहे अकिंचन त्वादिकका अनुसंधान, जो वने वामेंभी गर्व नहिं, कृपा जनक कृपण वृत्ति एसीकी जाते शरण्यकी कृपा हमारे पर प्रगट होवे. यह पंचकन्यास कालमें उपयोगी है वो संग होने चाहिये. या विना आत्म निक्षेप नहि वन सकता है.

सीताके पास रहि त्रिजटा के वाक्यो मेंसे यह सब अर्थ प्रगट होते है. वो सात्विक प्रकृतिवाली त्रीजटाने राक्षसीयों से कहा " अवक्रुर वचनोंसें वस करो " कहे तो प्रातिकुल्य वर्जन भया. " वाका सांत्वन करो " वाके अनुकुल संकल्प करो " राघवतें राक्षसोकों घोर भय आया है " कहे तो वो सर्व अकिंचन है वातें गर्व छोडे. अपनि कार्पण्यता स्वीकार करे " महाभयतें तारने को यह वस है " कहने ते रक्षण होगा एसा महा विश्वास भया. "हम वैदेहिकी याचना करे " यह गोत्पृत्व वरण हैं. यह पांच अंग पूर्वक कहा की " मैथीली प्रणिपाततें प्रसन्न होती है " वोहि आत्म निक्षेप है. न्यास पंच अंग संयुत सोया प्रकार ओर वो फलीत भी भयी. आपने तवहि कह दीया " में तु म्हारा शरण वनुंगी "ओर वेसेहि हनुमानजीके कोप तें वचाली.

यहां त्रिजटाने आप ओर आपके ओरोके लीये प्रपत्तिकी, तो ओरोको भी फळ प्राप्त भया. श्री वीभीषणके साथ चार राक्षस ओर गये, वो विभिषणके उपायतें वच गये. वहांभी श्री विभीषणने रावणको कहा श्रीराम स्वामीको जानकी दे द्यो. यह आनुकुल्य संकल्प है. रावणने वाका तिरस्कार कीया, तो फीर वो ओर वाकी संपत्तिका भी त्याग कीया वो प्रातिकुल वर्जन भया. रावणतें विरोध कीया है इत्यादि कथनतें, अकिंचन अनन्य गति भयेपर मे रावण

का छोटा भाई, वाते अपमान पाया परंतु आपको सर्व भूतोके शरण्य मानकर शरण आयाहों. एसा कहने तें कार्पण्य भया. निर्भयता तें राघवका शरणा लीया वोहि महा विश्वास कहा में राघवके शरण आया हौं येहि गोत्पृत्व वरण है. मोको क्षिप्र निवेदन करो में यहां खडा हौं. यह पुरुपकार द्वारा आत्म निक्षेप भया.

ओर कोइ कीसीके शरण जावे तो भी येहि होता है. आपको अशक्त समजे. शरण्यका विश्वास धरे, वाको अभिप्राय कहे के याचना करे. वाके अनुकुल वर्तन रखे, प्रतिकुलका वर्जन करे, तव काम वनता है. वो वना देसकता है. येहि मर्यादा शास्त्रकी है.

द्वयमंत्रमें येहि अनुष्ठान कीया है. वो श्रीमन्नारायण, सर्वज्ञ सर्व शक्ति कर्मानुरुप फलप्रद रहे पर, कोइभी उपकारकी अपेक्षा जाको नहि है वेसा अद्वितिय सर्वेश्वर रहेपर, अनंत अपराध वाले भी वाके शरण जा सकते है. अपराध अनंत रहेपर सरणागतिका व्यापार उपर कहे पांच अंगयुत फीर श्रीद्वारा होता है. वो सर्वज्ञ है वाते भूल नहि जायगा समर्थ है वाते तजेगा नहि, निरपेक्ष है सो ओर कुछ चहेगा नहि. हमको वाकेहि उपर भार धरने वाले बुज कर, फीर पुरुषकार वलसें रक्षण करेगा स्वामी है ही सो दासोको क्षमा देगा. अल्प उपकारको वडा मानने वाला है वाते, यह निमित्त कृपा करनेको मानलेगा. जेसे सर्व भौम प्रजाका रक्षण करतेहि है, दयालु दया करतेहि है. वोतो अपार दयासागर है, विभिषणने ओर कुछ नहि कीया रहा फीर स्वीकार कीया. हमारा संकल्प भयाके, वो संकल्प करता है. अपराधि काक रहाहि. सब ते वडा रहेपर स्वतंत्र है तो एसा कीये तो छोड देता है. कोसल जन जंतुको उद्धारनेका द्रष्टांत सुप्रसिद्ध है. जेसे कुमारको दूध पीलावे, वेसे भुखेको भी पीलाते है.

वातें प्रपन्नका परित्राण वो करते हि है. एसा सुलभ है तो स-

वेंकोइ क्यों शरणागत नहि होते है ? वाका समाधान येहि है की, दूष्कर्म करके जीनकी योग्यता नहि भयी. वो कर्म योगमेंभी नहि लगते है. तेसेहि जो सुकृतिने दोषोके तारतम्यसें, सत्संगसे सत्य स्वामीको पहेचाना विश्वास आया, सदाचार्य द्वारा शरणागत भये उनका बेडा पार है. इतना ज्ञान, योग सबको साध्य है. यह दया मार्ग सदा सबके लीये है. इति.

यह प्रपत्ति उपायमें अंगीजो आत्म निक्षेप सो केसा है सो विचारे. प्रणवमें प्रथम अक्षर 'अ' का अर्थ सर्व रक्षक सर्व शेषी सर्वेश्वर करके होता है. वाके प्रति आत्मा ओर आत्मिय–वाका जो हो सर्व उनके रक्षणका भार, ओर उनके रक्षणका फल, स्वामीके आधीन स्वामीके लीये स्वामीको अर्पण हो वेसा भरंन्यास–भार अर्पण–पारतंत्रता पूर्वक, अपने शेषत्वके अनुसंधान सहित, अपने आत्माको स्वामी पदमे धरना यह अनुसंधानका अनुष्टांन करना वाका नाम शरणागति–आत्मानिक्षेप न्यास–अंगी जो कहा सो उपायका यह स्वरुप है.

शेषी स्वतंत्र इश्वर अपने प्रयोजनके लीये आपहि रक्षण करनेको योग्य है. में अनन्य अर्ह, अनन्याधिन, वाका शेष हों. में आत्माभि मेरा कहके नहि हों. वाका हौं. अर्थात वाहिके लीये हों. वाणीसेंभी मेरा करके मोकोमें केह नहि सकता. मृतपींड भूतजेसा देह परतंत्र वाका देहिमें, नमेरा देहका रक्षण करनेको स्वतः समर्थ हों. वाते मेहि मेरा रक्षण नहिं कर सकता हों. आत्माराज्य धनपुत्र वाहन सर्व भगवानके है. एसा हि विवेकी सदा अनुसंधानमें रखते है. ओरवो सर्वेश्वर विना, ओरका पालन करनेका सामर्थ्य भी नहि है. सर्वका ठीक रक्षक वोहि है. वो जाका रक्षण करे वाका फल भागी भीतो वोहि होवे. यह न्याय है. वाते रक्षाके भरका फलभी, वाको अर्पण करना योग्यहि है. आत्म निक्षेप तबहि पूरा होता है.

हम वेसीहि भावना करे, यह आवश्यक है. मुमुक्षुकायेहि खास है की वो आप फलार्थी न वने. अचित वस्तु जेसी इश्वरकी, इश्वरके लीये है. वोहि बात चित् वस्तुके लीये भी है. अचितका परिणाम जेसा इश्वरके लीये, वेसा चितका पुरुषार्थभी वाकेहि लीयेहोना चाहिये. वोही सर्वका शेषी अपने प्रयोजनके लीये, हम तें पुरुषार्थ आपके वल तें कराताहै, वाते मुख्य फली वोही होना चाहिये. कोइ आप अ-चेतनका पीजरा वनवाये, वामे शुकको आपसें लाके धरे, वाको दुग्ध पानादि कराये, वोलना शीखाये, ओर फीर वो सुनके आनंद भि तो वोहि पाये. येहि हिसाब यहां है. शुककीनाइ हमको निर्मल र-हनाहि है.

स्तोत्र रत्नमे "वपुरादिषु योपिकोपिया" करके "में जो जेसा देह आदि होउं वो तेरे पादमें में मोको अर्पण करता हैं" एसा स्वरुपज्ञान पूरा नहो तो भी जेसे राज्य चिन्हवाली संदुक समजी गइ की वो राजको जाके सुपर्द करदी, आपने न रखी, त्यों राजने वो स्वीकारली. भीतर मांणिक्य है. वो जानना नजानना आवश्यक नहिं त्यों वो भी अर्पण होगया. स्वीकृत होगया. तेसे देहतें भिन्न आत्माका ज्ञान हो नहिं तो भी, देह साथ अर्पण करे, ओर स्वामी स्वीकार करे यह उचित है. अनादिकाल तें आत्मापहारि चोर रहे, वाते भगवानके निग्रह पात्र रहे; वो यह अर्पण करने ते अपराधक्षमा होते है, निग्रहका शमन होता है यह शास्त्रका तात्पर्य है.

दूसरा श्लोक संगहि है. में तुम्हारा हो हि. फीर तुमको मेने मोको अर्पण कीया यह केसा ! तुम्हारी हि वस्तुका दान तुमको क-रना केसे वनता है. यह समर्पण भो वेसा है. यह ज्ञानपूर्वक अर्पण कीया की वस्तु हमने भूलसें अपनी जानीमानी रहीसो भूल, वाने हमको चेताये तव सुधारी वाका वाको पीछा सोंपदीया. जुठा दावा

उठालीया. अर्थात अर्पण करनेमें, में मेरा, यह अभिमान भी नहिं रहेनां चाहिये. में भी तेराहि हौं, यह भाव वास्तविक है. ओर भार समर्पणमें वो आवश्यक है. शरणागति मंत्रके पूर्व खंडका येहि तात्पर्य है. वहां प्रार्थना भी अंतर्गत है महा विश्वास भी है. क्रीयापदमें अनुसंधान पूर्वक अनुष्टांन भी है. वेसेहि सांग प्रपदन एक बेरभी होनांचाहीये. ओर वो मोक्षार्थ हि होनाचाहिये. कृत कृत्यता तव हि है. कर्तृत्वत्याग ममतात्याग ओर फल त्यागपूर्वक, ओर अनुकुल-संकल्यादि अंगसहित गुरु परंपराते मीले शब्दोमें हृदय वचनतें, स्व-रुप, फलत्याग गर्भित आत्मा रक्षाका भर स्मर्पण करना येहि अनु-ष्टेय है. येहि पूरी प्रपत्ति है.

कर्तृत्वका त्याग क्यों करना कहेतो ? हमारा कर्तृत्व हमारे आ-धिन नहि भगवदाधिन है. वो करावे तव करसकते है. हम यावदा-त्मभावी स्वरुपतें भगवानके परतंत्र है यह ज्ञान वना रहेतो कर्तृत्व-त्यागका भावहि आवे.

वेसे ममता ओर फलका त्याग, आत्मा ओर आत्मिय स्वरुप तें भगवानकि हि वस्तु है. यह शेषत्वज्ञान आयाकी समुजागया, ममता फलत्याग भाव आप आया. जूठा दाया हठ गया. फल उपा-यका त्याग शरण्याके प्रसादतेंहि अनुष्टान ओर फल है, वो दाता न वनेतो, आपका सुख भोग न देता कोनका दावा केसे चलसके ! कोन क्या करे, क्या मीलावे, वोहि कृपातें ठहाराते है कीएसा करो, एसा फल देउंगा. उपाय, फल, याप्रकार वाके प्रसाद रुपहि है. प्रलयमें ते जगाये करण कलेवर आपकी वस्तुके आपने आपके संक-ल्पतें, एसे वनाके हमको दीयेकी फीर वाका एसा उपयोग कीयेतो, यह फलमें देउंगा. यह ज्ञान भी आपने दे, दीवाके फल देना ठह-राया. यह सर्ववाका सहज सौहार्द है. प्रसादका कारण आपहि आ-

पका संकल्पहि कारण. ओर संकल्पतें हि हमारा कार्य वो वनाता है तब हि वनता है. एसा इश्वरका स्वभाव है यों शास्त्रतें पाया गया है. वाते वाकी या प्रकार सांग शरणागति करके निरपराध कैं क-र्यमें जीतना काल प्रारब्धका होउतना पूरा करना शरीरके अंतमें मोक्ष फल है. इति.

कृतकृत्य अधिकार. १४

प्रपत्ति उपाय कहचूके उनको फीर उपाय करके, अपने इछी-तकेलीये कुछ भी करना वाकी नहि रहता है. जो फल मीलना है वो शरण्यसें वो स्वतंत्र सत्य संकल्प सकल फलप्रद श्रीपति आप ' माशुच ' शोच नहि करना करके उनके लीये कहता है. जो अपना भार वाके उपर धरतें है. वालीये भी आपहि कहतें है. ओर सव छोडकर मेरा एकका शरण वरण करले, जो वेसा करते है उनके लीये सर्वेश्वर उनका भार आप उठालेते है. वो भी वहांहि कहदेते है कीमेंतोको सर्व पापोतें मुक्त करुंगा. तो फीर हमको चाहियेकी वेसा होगाहि ओर वोहि करेगा. वो करना वाको कोइ वडी वात नहि है. वाते हम निःसंशय निर्भार वनेरहे. फीर पुरुषार्थ वा उपाय करके ओर न चहेन आचरे. अकिंचन महा निधि पावे एसा काम वना समजके, ओर प्रसंन मन वनेरहे.

फीर कैंकर्य करना तो स्वरुप है. दास—कींकर उसका नाम, जो कैंकर्य करे सो. जहां लो यह देहमें रहे वहां लोभी तो वाके कैं कर्य में हि लगे रहे. वो कैंकर्य यहां साक्षात नहि हो सकता, व स्वामी साक्षात आज्ञा करते है. शास्त्र वाकी आज्ञा है. ओर वामें वर्ण आश्रम देश कालको लेके जो हमारे लीये पंच यज्ञ नित्य नैमित्तिक ठहरा हो, वाके हि अनुसंधान तें, वाकी हि सेवा समजके वरावर कीये जाना. यद्यपि वामे ओर देवरुषी पीतृके नाम आते है.

यहां भी माता पिता आदि षीचमें दीखाते है. परंतु न हम उनके लींये करते है. आज्ञा है वाते वेसा उतना करते है. वो भी तो स्वामीके शरीर है. वो सेवा लेनेको स्वामीने ठहराये, वेसे वाके प्रतिनिधि है. वा ते वोतो न उपाय करके करना है. न फलके लीये करना. उपाय हो चुका. फल यहांसे हि स्वामीका कैंकर्य मील चुका येहि कृत कृत्यता है.

माशुच शब्द वाको हि कहे जाको अपने पापोका, वाके फलों-का शोच होवे ओर वो तब हि जावे जब स्वामीका कहा करे, सो सदाचार्य समाश्रयण द्वारा. द्वय मंत्र मीला, प्रपत्तिभइ, वाके शरण गये, भये, तो फीर जो हमारा कर्त्तव्य वाने ठहराया, वोसविधि वाकी आज्ञानुसार, हमको सांगोपांग करनाहि आवश्यक है. वो भया उनको फीर स्वामीहि कहतें है अवशोक छोड द्यो तो हम भी वो छो-डहि देवे. स्वामी वचन पर महा विश्वास रखके अपनेंको कृत्य कृ-त्यहि माने. ईति.

स्वनिष्ठा अधिकार १५

शरणागति भयी कृतकृत्य मान लीये परंतु अपने आज्ञा कैंकर्य मे लगे रहे पर, स्वनिष्ठामें ओर भी वात समजनेकी है. वो यहकी हमारा परिभव यहां होता है. देहावसान पर्यंत ओर विघ्न करते है. हमारे देहादिक ते परिभव होता है तव केसा विचारना ! जोबद्ध वैरी कष्ट देतो उनको मोह भया है वो मुढ है. जेसे वंदर कुत्ते वेसे उनको मनुष्य देह पायेपर देखकर उनको क्षमा ओर उनपर दया रखनीकी यह वडे दुःखी होंगे.

हमारे लीये हम अमर्याद क्षुद्र है हि तो हमारे प्रारब्ध तें हमको कष्ट आता है, वा तें अव वेसे न रहेकर, जो स्वामीने कृपाकी द्रष्टी खोली वाका लाभ ले, ओर वाका विस्मरण ओर उपकार

स्मरणमें मनको रोफ रखे. क्योंकी यह हम समज चूके है की, हमारा तेसें सर्व क्षेत्रज्ञोके आत्मा परतंत्र है. कर्मके वश सवकी कृति मति है. स्थिति है तो हमाराजो ओरोतें पराभव होता दीख पडता है वामें भी शेषी स्वतंत्रका हाथ है. वो उन द्वारा हमको प्रारब्ध भूगाता है वा ते उनके प्रति हम निर्विकार रहे. इश्वर जो कराता है वो तो हमारे प्रारब्ध भोगाता है. भोगने हि ठहरे पापोको कमती करता है उतनी हमारी मुक्ति समीप आती है. हमारे रोगोके उपर प्रयोग ठीक चलता है. शीघ्र आरोग्य प्राप्त होगा यह होना आवश्यक रहा. हमने अब जाना यह दुःख के विषयमें कहा.

अब सुखके विषयमें भी वोहि न्याय है. वो भी वातें हि मीलता है. ओर वो हमारे हि कर्मके फलमें. त्यों सत्य रक्षक (अ) (उ) करके वोहि है. हम वाके हि शेष है सो ओरमें रक्षत्व बुद्धि नहि करे नहम आप कुछ करे वाकर सकते है एसाभि मानना.

मृत्युका भय कृतकृत्यकों तो नहि होता है. हो तो भी क्यों भय धरना ! यह देहका वियोग तो होता हि है फीर क्या होगा ! सो वीचारे तो भय धरनेके बदल उमंग धरनेका प्रसंग है. जानकीको द्रढ रहाकी वनमें संग चले तो गजसिंह मोको क्या सतावेवो आपके संगमे रहा देखकर ओर भाग जावेंगे. वेसे स्वामी हमारे संगी भीतरहि है ओर तवहि वोहि जानकी वियोग कालमें भी रावण ते एहि कहने लगीकी, तुं क्या मोको मारे में तोको भस्म करद्यों परंतु स्वामीकी आज्ञा नहि है, ओर में तपमें हों. तेसे हमको भय धरना नहि चाहिये. धैर्य धरना ओर जेसे जांनकीने हनुमानजीसें कहाकी वोहि विघ्न विदारके स्वीकारे येहि ठीक है. तेसे हमारे लीये भी वो जव जो उचीत करना सो करता है. करेगा ओर वोहि परम श्रेय है, एसे द्रढ वने रहके महा विश्वास पूर्वक, अन्यका

शरण उपाय न लेकर स्वनिष्टामें वने रहेके–कालक्षेप फरना. अंत-वाहितें उद्धार स्वीकार है हि. स्वामीने चर्मके पुर्वार्धमें कहा है वोहि निष्टा वनी रखनिद्वयके पुर्व खंडमें वोहि अनुष्टांन शीखे है सो आचरना. मुलमंत्रके मध्यपदका वोहि अर्थ है सो अनुसंधान वना रखना. वोहि तो उपायमे हमारी निष्टा है.

उत्पत्ति स्थिति ओर नाश यह लीला विभूतिका सदाका क्रम है उत्पति नाश तेसे स्थिति भीतो यहां अस्थिर हि है. थाको अस्थिर कोइ नहिं वनाता वो जगकर्त्ताका कार्य है वाका समय वोहि जानता है. वो काल वाके वश वाके संकल्पाधिन है. पारब्ध भी वाका संकल्प है वो सत्य संकल्पका सत्य हि संकल्प हो वहां लो वेसे सुख दुःख हमको भोगने हि है. हमने भी वो स्थिति स्वीकारके शरणागति की है. आर्तवनके सद्य मुक्ति नहि मांगी कोइ नइ अनजानी वात है हि नहि. वाते वामे देहयात्रा चले वहां पर्यंत आसक्ति नहि रखनी.

गृहस्थ जो गृहकार्य करते है वो आसक्तिसें नहिं करना, किंतु कर्तव्य धर्म समजके करना. प्राज्ञ आहारकी चीता नहि करते है. धर्मकी चींता करते है. आहार के लीये कर्त्तव्य नहि. धर्म पालन हो आज्ञा पालन हो, वालीये करना है. आज्ञा पालन थया शक्ति यथामति भया फीर पुरता संतोप. प्रत्य वायसें वचे येहि लाभ अन्य इच्छा नहिं रखीन रखनी तवहि कहा है, सुखमें न रंजन पाते है. दुःखमें न धभडाता है.

या प्रकार हर्ष शोक विना स्वरुपके अनुरुप परम प्राप्य जो कैंकर्य है, वा में हि रुची वनी रखनी ओर जहां लो जेसा जीतना वने उतना वो करना. वो यहां ठीक यथेच्छ नहिं हो सकता, तो वा लीये आतुर वनना त्वरा करनी चाहिये. मूल मंत्रमें नारायणं

पदमें चतुर्थी—द्वयमें भी वेसे हि कहा चहा वामें निष्टा वोहि स्वनिष्टा है वो पुरण प्राप्त हो वा लीये विकल क्यों न वन जाय क्योंकी पापोके लीये. वाकी प्राप्तिके विघ्नोके लीये तो स्वामीका वचन है की में सर्व पापो तें छोडुगा परंतु वा लीये जीतनी मेरी त्वरा उतनी स्वामीकी त्वरा. वात जरुर वनेगी ओर वोहि वनानी है तो वा लीये जो उपाय स्वीकार कीया है, वामे द्रढ धीर आतुर लगे रहे. येहि स्वनिष्टा है ओर वा लीये प्रारब्ध कर्ममें, संस्कार के साथ अर्चावतारका भी तो संग भया है. वा के साथ काल क्षेप कीये तो ओर कोइ कुछ अधिक नही चाहिये गा. यहां ते कैं कर्य आरंभ वहां पुरा, यहां भी प्रसाद जीवन, वहां भी महाप्रसाद हि न अन्यका संग संवंध इति.

उत्तरकृत्य अधिकार. १६

प्रपन्नभये, कृतकृत्यभये, स्वनिष्टामे स्थीरभये, उतनेसें संतोष नहि मानना चाहिये. धनी धनके लीये, विद्यार्थी विद्याके लीये, उत्तरोत्तर यत्नकीयेजाता है. वेसा हम चेतन है करना यह हमारा स्वभावहि है तो अधिक जानना अधिक करना. भक्तको भक्ति तेसेकिंकरको कैंकर्य, वाते अव वालीये यहां अधिक कहते है. जाको जाका छंद वाको वाकी तृप्ती नहि होती तेसे यह विषय जीनको प्रीय है उनको अधिक जाने अधिक करे त्यों अधिक स्वादुमय लगे ओर चहे, यह वनाइ रहता है. मुक्त भयेपर भी कैंकर्यमें लगेहिरहे को नित्य नवीन कैंकर्य करना वो भोग्यतमहि लगता है, वेसा यहां सेवकको भी होता है वामे न ओर प्रयोजन न ओर फलकी अपेक्षा है. यहां सेहि कैंकर्यका काल विधी प्रकार सामग्री स्वाद वढाये जाते नित्य कैंकर्यमें अंत निर्विघ्न लगजावे. यहमानो सीडीही है संकल्पही है. ओर वढाना कैंकर्य वढाना गाममें ते दिव्यदेशमें जावसे, वहां

धाममें तें भगवत मंदिरमें अधिक रहे. वहां मात्र देखनेवाले मीटके कैंकर्यमें लगे वो वाहीरका छोडकर खास संनिधिमें करे. वो परिचारीकी छुटकर अर्चकपन मीले. वो भगवान शास्त्रोक्त सेवा स्वीकारते है फीर साक्षात होकर आज्ञादेवे. वेसेंहि पूर्वज ६ढे. वडे कहे गये आचार्य आलवारका वेसाहि ईतिहास है, वोहि पंथमें हम लगे है तो वोहि क्रममे वढनेका प्रयत्न येहि हमारा उत्तर कृत्य है.

श्री लक्ष्मणकुमारने वनवासमें वालीयेहि संग कीया. श्री रामानुज वालीयेहि श्रीरंगधामी भये. अभी अर्चा अवतारमे भी, श्रीरंगनाथके कैंकर्यका भार उनके उपर मानाजाता है. श्री वेंकटेशजीमें श्री यमिराजके प्रतिनिधीजीयरहि खास कैंकर्यका भार वहन करते है. इत्यादि.

भगवानने गीता उपदेश अर्जुनको दीये पर भी कहा, अभी अधिक प्रणीपांत परिप्रश्न ओर सेवा करके ज्ञानी तत्वदर्शीयोतें उपदेश मीला वो न्यायतें ज्ञानभक्ति कैंकर्य उत्तम प्रकार होसके वालीये वेसा मीलाना, वढाना यह मुख्य उत्तर कृत्यमें ते एक समजना चाहिये. अष्टादशवेर श्री भाष्यकार रामायण पढे. वीसवेर श्री वेदांत देशीक स्वामीने श्री भाष्यकाल क्षेप कीया. भगवत् विषय अगाध है. श्रुति पार नहि पाती, वहां इतर तृप्ति कयों करे! संसर्गतेंहि मंद अमंद होता है, आलसु उद्यमी होता है, मूर्ख पंडित होता है. व ते जो भगवानके अंतरंगहो, हमते कोइभी प्रकार बढकेहो इनका सहवास करके, उनके अनुष्टांनमेंतें जो हमारे वर्ण आश्रम जाति स्थितिसें वनसके वेसा होवो शीखके अनुष्टांन करना. वामे फीर गर्व नहिं करना भगवत्कृपा विशेष हि समजनी. परांकुशनाथ मुनीआदी आपको केसे निकृष्ट मानते रहे. स्तोत्रमें " नधर्मनिष्टो " आदि वचन सिद्ध है. जो पूर्ण मानेसो रुक गया जो अपूर्ण मानेसो वढता है.

सव यह विपयमें अपूर्ण हि है. वद्ध है येहितो सदौष है. फीरये दोषोते मन क्षणमें एसा पाप करदेकी जाके भोगतें कल्पवीत जाय वाते सदा सत्संगमेंहि लगे रहेनेमें हि कुशलता है. आज्ञा कैंकर्यके साथ अनुज्ञा कैंकर्य वढाना. सात्विक आहार विचार संगति वढाना. अयोग्य विषयोकी वासना जो जो शेषहो उनको हठाते जाना ओर वो सर्वमें महान सहायभूत हो. वेसा साक्षात सत श्रीहरीका संग वढाना वो उत्तम है.

अधिकारी विशेष जामे सानिध्य स्थापन करदे, वेसा अर्चा अवतार रुप, दीव्य मंगल विग्रह मीलाकर, मंत्रतें बीवमें षाड गुण्य आतेहि है वेसे विधिसें वामें प्रगटाकर वाके सेवनमें लगजाना वाके दर्शन स्पर्श प्रसादका माहात्म्य पारावार है. जोजो आचार्योंके कार्य बने सोवेसेहि, वातेहि वने है. आलवारोका यह लोकमें जीवन अर्चा अवतारहि रहा.

वो संपूर्ण सांगोपांग हो सके निभसके विघ्न आयेतो दूर हो सके वा लीये आचार्यवानहि रहेना. वाकी सेवा बहुत सीखनेका वढनेका साधन है. वेसेहि भागवत सेवाभी वस भगवत भागवत आचार्य कैंकर्य निष्टा परायण, येहि हमारी मर्यादा है. भगवानका सेवन यद्यपी वो कृपातें आश्रीत परतंत्र वन रहेते है, परंतु हम वोकोन केसे कीतनी बडी कृपा करके एसे भये है, यह समजते है वेसेहि उपकार बुद्धि प्रेमवृत्ति सेवाकी सेवामें सावधान उत्साहि रहे; सती जेसे प्रीय भर्ताका, जननी स्तनंधय शिशुका, ओर मित्र मीत्रका, जेसा लालन करते है; वेसे हम हमारे सेवाके भगवानके सेवनमें रतरहे. यहतो प्रीतिकरके फीर अपराधकी भीती, उपचारमें अपचार न वन जावे वालीये कहा है. जेसे युवान राजा, जेसा मदमस्त हाथी, जेसा प्रिय अतिथी वेसीवाकी सेवा करनी. वो स्वामी है, सुहृदहै,

गुरुहै, पिताहै, माताहै, वेसावो एकहि सर्व विध बंधु है. उतनागुण प्रेम वाकी सेवामें दरसाना यथार्थ है. श्रीपतीके दोगुण परत्व, ओर सौल्यत्व, सोदोनोको वरावर लक्षमें रखके, सेवक वने रहना. श्री-भरतसुरीको पादुका मीली वाकी सेवा उन्होनेकी, फीर साक्षात् कैंकर्य मीला यह अनुष्टांन द्रष्टांतके लीये उत्तम है.

अब अंतमें यह उत्तर कृत्यमें मन वाणी काया करके क्या त-जना ओर क्या स्वीकारना सो सारभूत कहते है.

विषयोंको विष सरीख दूरतें हि तजनें विषतो पाये तो मरे, यह तो स्मरणतें मारते है. पांचो विषयोंका यह स्वभाव है. कैंकर्य-कीरुची शीथील करनेको वो वीषया स्वाद प्रधान कारण होते है. भगवानको भूलानेको हेतुभी वोहि होते है. कृतज्ञ सवसें अधिक अ-र्चाके वने रहेना क्योंकी उनकी प्रथम कटाक्ष तेहि ओर सव वात वनी है. कार्पण्यता शिथिल न हो जावे वालीये, अपना उत्कर्ष नहि कहेना. उपाय निष्ठाका विस्मरण नहो वालीये द्वयके वक्ता अ-र्थानुसंधान पूर्वक वने रहेना. प्रीतिपूर्वक कैंकर्य अंगीकार करनेमें भगवानकी अकृपान हो वालीये करणत्रय करके ब्रह्मविदके अपचा-रतें वचना, करणत्रयतें कर्त्तव्यमें प्रधान, भगवानके कैंकर्यकी पर्यव-सान भूमी भूत, शास्त्राज्ञानुष्टान आचार्यादि भागवत कैंकर्य है इति.

पुरुषार्थ काष्टा अधिकार. १६

भगवत कैंकर्यसो भगवत कैंकर्य पर्यंत होनाचाहिये. परमात्माका अतिशय जाकरकेहो, वालीयेजाका स्वरुपहो वो परमात्माका शेष है वो परन्तु आपनी शक्ति अनुगुण शेषीका अतिशय करता है अ-चेतन तें जीव शरीरके साथ, स्वामीका अतिशयकरहोसता है. वो जव शास्त्र विरुद्ध वर्तन कर्ता है, तव शास्ता दंडधर इश्वरको लीला-रस उत्पन्न करनेके रुपमें अतिशयकरहोताहै ओर, जव वो शास्त्र

अनुगुण वर्तता है, तव वो समजता है की स्वामी शुभ कर्म तें संतोष पावेगा, दूष्कृतिसें नहि संतोष पाते है वा ते वो अपने शरीरके उषको तोउत्पन्न करता है, जातेवाके औदार्य आदि गूणोंका परीवाह करता है, भगवानकी भलाइ बढाता है, तबहितो भगवान उनकोउदार, ज्ञानी मेरा आत्मा है करके कहते है. ऐसे भागवत स्वामीका श्लाधनीय अतिशय करनेवाले है. नित्य मुक्त इश्वरके अभिप्रायको साक्षात् जानकर करनेका कैंकर्य करनेमें, प्रहर्षपाते आपका जीवन सनाथ करते है, नाथका अभिष्ट अतिशय करते है. वो स्वामीकी इच्छानुगुण भोग उत्पन्न करके वाद्वारा अतिशय वहां करसकते है, वेसेहि यहां भागवत शास्त्रद्वारा इश्वरका अभिप्राय जानकर कैंकर्य करता भया कृत कृत्य होता है या प्रकार दोनो समान कृत कृत्य होते है. शास्त्र विरुद्ध वर्तन स्वामीको लीला रसहो, परंतु कर्त्ताका वो अनर्थ करहोता है. वद्ध दशामें शास्त्रद्वारा, ओर मुक्त दशामें प्रत्यक्ष ईश्वरका अभिप्राय जानकर तदनुरुप वर्तन करना, इश्वरको लीलारुप, ओर कर्त्ताको पुरुषार्थ रुप होता है वो आपके भि अभिमत लगता है वाते चेतनको योग्य है की बुद्धिपूर्वक प्रवर्तन कालमें, अपने पुरुषार्थके अनुगुणहि वर्तन करे. वो करना इश्वरका अभिप्राय हि होने तें व.को प्रिय होता है. इश्वरको सब तें अधिक प्रीय, कहचूकेकी भागवत है. वाते उनका कैंकर्य आपको वेसा हि अभिमत है; तो वोहमारा उत्तम कर्तव्य ठहराहि. कहा है " सर्व आराधनोमें विष्णुका आराधन वडा है, वातें भी वडा आराधनसो वाके जनका वने सो है. ओर आप कहते है, मेरे तें मेरे भक्तमें प्रीति करे वो मोको अधिक प्रीय है. भगवानको प्रणाम करे उनको हमारे प्रणाम है, एसा शिष्ट कहगये है. उनके आश्रयसें पतित पावन होते है. राजा राजकुमारको लालन कीये तो अधिक प्रसन्न होता है; वेसे भागवत कैंकर्य ते भगवान अधिक प्रसन्न होते है. फीर

जेसे देवोके नामसे जो वैदिक करते है वो अधिकारी होंने तें भगवानका हि कैंकर्य गीना जाता है; वेसे वह तो भगवानके शेषहि है, भगवान उनको तो अपने आत्मा हि कहते है, ओर उनमें भगवान सदा प्रकट है, वो भगवानके मंदीर मूर्तिहि है, तो वो सद्वारक भगवानका पूजन मानना भी उचीत है. राजा अपने शस्त्र, हाथी वा अश्वको गलेमें विविध हार डालतें है, वो आपहि के धारणवत मानते है. वेसे स्वामीके भोगके उपकरण सो भागवत है, क्यों की वी अपनेको स्वामीके अत्यंत परतंत्र मानते है वेसाहि वर्तन करते है, वाके इष्टमे हि उपयोगी होतें है. उनका वो शेषत्व यावद् आत्म भावी है, वाते वो कैंकर्य भी वेसाभया.

यह भागवत शेषत्व लेने देने सरीख परस्पर होता है. भगवान पूर्ण है, भागवत अपूर्ण है, यों करके भी भागवत कैंकर्य करना आवश्यक है. उनका जो कीये सो वो स्वामी हेतु हि मानते है वेसे भी भागवत कैंकर्य सो भगवत कैंकर्य हि होता है, ओर वा तें पतिव्रतमें भंग नहि होता है. पतिकी चितानुगुण चिंता येहि तो पतिव्रताका धर्म है, तो हम भी जहां पतिकी प्रीति वहां प्रीति करे; येहि तो भागवत कैंकर्य है. यह अन्य शेषत्व नहिं ठहरता, फीर वो परस्पर करते है. करनेवाला भी तो भागवत, ओर सेवा लेनेवाला भी भागवत, दोनोका सवंध स्वामी सेवा संवंधसें है, सो यहांतो ठीक, परमपदमें भी परस्पर नीच भाव करके हि वर्त्तन होता है. एसे वो भगवानके हि कैंकर्य सरीख हि ठरता. स्वामी सेवक भावहि उभय स्वामीको अभिमतहि, स्वामीकी सेवाहि करते हे. स्वामी भी सेवा लेने समय, सेवक सेवा करसके वालीये वाके आधिन होतेंहै. वोहि न्याय यहां है. या प्रकार भागवत कैंकर्य स्वामी कैंकर्यहि है, स्वामीको इष्ट तम है, वाते भगवानके कैंकर्य ते भी विशेष माना गया है, ओर वाते हमारे लीये पुरुषार्थकी पराकाष्टा है. इति.

शास्त्रीय नियम अधिकार १८.

या प्रकार शेषत्व सबंधं होने तें, भगवत भागवत विषयमें कर-नेका जो कैंकर्य, वो शास्त्र अनुसारहि होना चाहिये यति राजकी अंतीम दशामें सब शीष्य लोकने सहगमन चहा, तब आपने कहा, हम तुम कोइ स्वतंत्र नहि है, शास्त्र आज्ञामें है, वाणी मन कायातें शास्त्र आज्ञानुसार हि वर्त्तन करजा आवश्यक है. प्रारब्ध पूरे हो तब हि परम पद जाना होगा, मेरे सांथ देह त्यागने ते, मेरे साथ नहि आसकते हो, तब उन्होने पूछा प्रारब्ध पूरे हो वहां पर्यंत केसे काल वीतावे ? तब आपने यह कहाकी, श्रीभाष्य पढकर, वाका प्रवर्तन करना; वेसी योग्यता नहोतो, द्रवीडवेद पढकर वाका प्रव-र्तन करना; वेसी योग्यता भीन होतो अनुकुल दीव्य देशमे चंदन, कुसुम दीप आरोपण, मालाकरण आदि कैंकर्य करना; वोभी बन शके एसा नहोतो, द्वयको अर्थ के साथ अनुसंधान कीया करना; वोभी न बन शके तो, कोइ भागवतमें अभीमान धरके उनकी सेवामें उनके स्वीकृत बने रहेना.

एसा बरतन करनेमें तीन बात याद रखनेकी है. जगजनमें हि रहेना है तो उनतें तीन प्रकार व्यवहार रखना अनुकुल, प्रति-कुल, वा उदासीन. श्री वैष्नव सो अनुकुल भगवान के द्वेषी सो प्रतिकुल, ओर जो एकमें भी नहि वो संसारी, उनतें उदासीन. अनुकुलोंकों देखेतो चंदन कुसुम आदि सरिख उनको अभिमत समजकर, उनके साथ प्रीतिपूर्वक वर्तन करना. प्रतिकुलोंको देखेतो, सर्प, वीष, आग, सरीख उनतें दूर हो जाना. सामान्य मीलेतो जेसे घास फूस सरीख बेपरवा रहेना.

अनुकुल के संगसे ज्ञान बढता है. जो वेसे न हो उनपे दया रखना वेसा उनतें नहि बनता है, वाका कारण काम प्रवण्यता है. अर्थ काम हेतु वालेको वैष्नवमें अनादर होता है, वोवाके विरोधी है,

वाते श्रींपती अप्रसन्न होते है. राजाकी संनिधीमें वाके पुत्रका अनादर, वेसा श्री वैश्नवके अनादरसें श्रीपतीकी अप्रसन्नता होती है. राज पुत्रका आदर कीये तो राजा रीझता है. वो हि न्याय श्री वैश्नवके आदरका भी है. अर्थ काम हेतुमें आदर, वो जेसे राज महीषीका क्षुद्र जंतुके पास भीक्षा मागके पाने मे आदर हो. भगवान ओर विषय एक में भी मावण्यतान हो वो रत्न पथ्थर को समान बूझने वाले बे कदर जेसे है. उनका ज्ञान वृथा होता है. वो हि भगवानकी कृपाका अनादर भयालाभ न लीया.

दूष्टों ते काकणी भीन लेनी, त्यों पर द्रव्यमें अंध, परदारमें नपुंसक, परके अपवाद में मुक हो, वो श्रीपतीकों अति प्रिय है. अर्थात् धर्म विरुद्ध अर्थ काम तें हि भोगना. धर्म अविरुद्ध अर्थ काम होतो वामें अनादरभी अनुचित है. पुत्र रहेपर पीताका अनादर करे तो, तातवापें प्रसन्न नहि होते है. वेसा भगवानका सेवन; भक्त न कीये तो भगवान प्रसन्न नहि होते है.

प्रतिकुलके संसर्गतें अनुचित होता है. जो महात्माका द्वेष करे, ओर केशव को न स्मरे, उनके संगतीर्थ क्षेत्रमें भी नहीं वसना.ओर जो मूढ, पापी, क्रुर, भगवतशास्त्रके दूषक हो, उनके साथ संवंध रखे तो भक्ति नाश पाती है. जो उदासीन हो उनतें हमभी उदासीन रहे वोहि ठीक है. विष्णु कींकर ओर इंद्रिय कींकरकों केसे बने ! जो वोहै सोये नहि, यह है सो वह नहि. दोनो अपने इष्ट त्रिषयमें लगे रहे येहि ठीक है. वो अर्थ कामपर हम नारायणपर उनका संवंध हमको ठीक नहि, अलग रहेनाहि ठीक है.

यह तीन प्रकारके वर्त्तनमें प्रमाण स्वेच्छा नहिं कींतुशास्त्रको समजना भगवानकी आज्ञासो श्रुति स्मृति, वाका पालन वोहि तो हमारा नियत कैंकर्य है. यहां स्वामी साक्षात् आज्ञा नहिं देते है.

अशास्त्र वर्त्तनसो आसुरी है. शास्त्रीयसो दैवी हैं. दैवी प्रकृतिको वोहि अनुकुल होगा. कैंकर्यमें साधनबुद्धि नहि करनी, कर्त्तव्य बुद्धि धरनी भक्त भगवानकी आज्ञा वाकी प्रीतिके लीये, वापें प्रीति होनेतें उठातें है. न कोइ ओर प्रयोजन करके, येहि हमारे स्वरुपके अनुरुप है. जेसे आज्ञा पालना तेसे आज्ञा भंगसें वचना वोहि रीती वोहि हेतु करके आवश्यक है. राजाका प्रीयभी राजाका धर्म सेतु तोडे तो राजा तेंहि शिक्षा पाता है. कृपा हठकर कोपका भागी होता है. जो अधिकारी कर्त्तव्यमें अपूर्ण हो, उनको पूर्तीकरनी, ओर जो विरुद्ध आचरणके हो उनको सर्वथा तजना उपाय पूर्तितें भगवानकी कृपा पूर्ति है, पूर्ण फल प्राप्ति है, यह नियम है. भगवानका अनुग्रह निग्रहका हेतुहि वाकी आज्ञाका पालन ओर उलंघन है. आज्ञा कैंकर्यके उपरांत, जीतनां अनुज्ञा कैंकर्य भी शास्त्रीय होसके उतना अधिक लाभ, शीघ्र परम फलकी प्राप्तिका हेतु होता है. या प्रकार वर्त्तनमें, कैंकर्यमें शास्त्राधारहि मुख्य है. स्वेच्छा चार नहि. इति.

अपराध परिहार अधिकार १९.

एसे भगवानकी शेषताकाहि स्वभाव वन जानेतें शास्त्र नियत कैंकर्य में एक रस जो अधिकारी है, उनको पीछेभी आपत्ति विनाभी बुद्धि पूर्वक अपराध होनेका तो संभव नहि है. वो वनेतो जो कैंकर्य निष्टा स्वीकृतकी हैं, वाके वो विरोधि होते है. प्रायःकरके, वेसेसें वेसे अपराध होना संभव नहि है. यदि उनतें प्रारब्ध कर्म विशेष करके, देशकाल अवस्थामें विगुणता आनेतें, प्रमाद आनेतें, अथवा शुशुप्ति आदि अवस्थामें, अपराध विशेष वन जायतो, वो उनको फल नहि देते है निवृत्त हो जाते है.

बुद्धि पूर्वक पापका आरंभ करके पाप कीयाहो तोभी कीये पीछे भयन पाके वाकी निवृत्तिके लीये, प्रपत्तिकाभी अनुष्टांन न करे, ओर सर्पवाले घरमे बास करने सरीख, प्रकृतिमें लगे रहेहो

तोभी, उनमें आत्मगुणकी पूरतीका अभाव होनेतें मंद धैर्य वाले रुषीयोंकी नाइ, स्वनिष्ठातें विपरित बुद्धि होगइ होतोभी, निसर्ग सुहृद श्रीपति उनका रक्षण करनेको उन्मुख हो चुका होनेतें, वाकी-वेसी बुद्धि वनी नहि रखने देतेंहै. वाकी बुद्धि ठीकाने आइकी वो जो अनर्थ हो गया वो समजाता है, वातें हानी होगी यह बुझता है, वाका स्मरण आनेतें लज्जा पाता है. वाको अनुताप होता है, वाका फल मीलनेके पहिलेहि वालीये प्रायश्चित करता है. ओरवो प्रायश्चित येहिकी, जो स्वामीने पूवे रस्ते लगाये रहे, वाकीहि फीर शरणागति करता है; ओर भगवान वो प्राय-श्चितकों पूर्ण मान ले ते है. अज्ञान वा ज्ञानतें परंतु जाने अपराध कीयेहो तो स्वामीकी क्षमा मागना, वो वालीये प्रायश्चित है, एसा प्रमाण है. जानकीजीने रावणको कहारहाकी, वो धर्मज्ञ शरणागत वत्सल है. जो तुं जीवन चाहताहो तो वाते मैत्री कर. वो शरणागत वत्सलको प्रपत्तिसें प्रसन्न कीये तो वो क्षमा करतेहि है. प्रारब्ध कर्म कठीन रहे पर भी क्षमा मागे तो देते है. वो अजामे-लके द्रष्टांतमें प्रसिद्ध है. यमने भटोंको कहा है की, स्वामीको नाम लेके पुकारे उनका में प्रभु नहि, उनको नर्क नहिं. कंटकको कंटक ते नीकाले, घावपर मलमपट्टा करे, वेसा वो प्रायश्चिततें सुधरता है. स्वामी कभी भी शरण आये को सुधारतें है, क्योंकी वामें क्षमा, प्रेम, दया, वात्सल्य आदि गुण है, वो एसोके लीयेहि है. वहां हि वो फलीत होते है.

वेसोका दंडनीय अपराध होतो, जेसे राजकुमारके अपराधके लीये वा आपकी सेवामें रात दीन प्रीतिसें रत रहे. अंतःपुर जनके कठीन अपराध भयेहो तो भी उनको शीक्षा करनेमें उनकी पूर्वकी कृति, भक्ति, प्रीतिका भी विचार रखते है, तेसे देहांतके बदले, काणे कुबडे बनाना, ओर क्लेश देना, तेसे यह अंतःपुर जनके भी-

भीतर समजकर, वाके तारतम्य अनुगुण शीक्षा करते है. उनते कइ दीन वोलतें नहिं. देशपार रखतें है. चाबुक आदि उनको मारे जाते है. काककी एक आंख फोडी दृष्टांत प्रसिद्ध है. बुद्धि पुर्वक पापका फल है सहि, प्रपत्ति में भी जेसी भावना वेसा विलंव अविलंव मुक्ति मे होता है, जेसा प्रायश्चित वेसा फल है. देहांतर मोक्ष प्राप्ती. आयुष पूरा हो तव मोक्ष प्राप्ती यह सव भेद वेसे हि फल के लीये है. राक्षसीयोंके पाप मैथीलीने क्षमा करवाये. हनुमानजीने नशीक्षादी परंतु उन्होंने भी पूर्व बुद्धि पूर्वक अपराध कीये रहेवाते, क्षमा भयी वहां पर्यंत, शिक्षा होगी क्या एसे भय ग्रस्त दुःख निमग्न रहि. येहि उनके अपराधकी शीक्षा उन्होने भोगी. शरणा गति सफल होगी यह भीठीक है. ओर बुद्धि पूर्वकका दंड सहना पडेगा वो भी ठीक है. मारनेको दंड उठाया दुःख पाये फेर न मारे, उतनी शीक्षा भयी ओर अंतक्षमाभिभयीं. उभयका फल है परिणाम कुशल है प्रपत्ति सत्य उपाय है, सिद्ध फल प्रद है, जीनतें वीलंव न सहन हो सके, वेसी प्रपत्ति कीये तो उनको फल प्राप्ति में विलंव नहिं होता है. यह वात भी है. हमारी मंदता ते मंदता त्वरा तें त्वरा जेसि प्रपत्ति निष्ठा वेसा फल है. शरण्य के गुण शरणा गतिका प्रभाव अमोघ है. सर्व पापतें मोक्ष करूंगा यह श्री मुखकी आज्ञा है सो सत्य हि है जेसी शरणागति वेसा फल है. फीर एकांतीक, परमएकांतीक, साधारण, यों वाकी पूर्वकी कृति सेवा भी गीनती में आती है. वाके मनका परितापादि भी न्युनाधिक होता है. सोहि वात दंड फलकी है. अधिकारानुरुप न्याय है. सेवक सेवा छोडेतो, वाते वो अधिकार के भोग भी छुटे. वेसे आज्ञा तोडने तें, वो पालनके लाभ न मीले. ये भी तो शीक्षा हि है. अपराध सो अपराध हि है. वाका फल हानी हि है.

मेरे तें पाप हो जावेंगे वेसा भविष्यका भय रहे, ओर वालीये शरणागति करे तो वो भी सफल होती है. वेसे पाप करनेका प्रसंग दूर हो जाता है. भले बीचारका फल भला है. स्वामी अंतर्यामी सर्वथा सर्वदा एक सरीख क्षमा शील है, वाका लाभ लेना चाहिये प्रार्थना करनी चाहिये ओर भविष्य में प्रारब्ध में क्या भि हो जावे वो भयतें वा विलंब अक्षमतें आर्त्त प्रपत्ति करे तो प्रारब्ध भी वो आरती तें कट जावे सद्य मुक्ति पावे.

सर्व अपराधोका आदि कारण अविवेक है. वातें स्वातंत्र अर्थ काम परायणता वाते अपराध, वो अविवेकका कारण पूर्व के अपराध वालीये भी प्रपत्ति उपाय है. प्रभु प्रार्थना तें बुद्धि सुधारतें है. अविवेक हठातें है ज्ञान खोलतें है कि हम अपराध तेंरुकते है. अपराधोमें वडा अपराध भागवत अपचार है. मुक्ति के फल में अनियम वाते हि है. वडा भागवत अपराध हो जाय तो भोगनेको एक दो जन्मकी देरी भी हो जावे, एसा सुत्रमें निर्णय है. वातें ब्रह्मवित् भागवतके अपचारतें वहुत हि वचना. गौ, गोमय, क्षीरकी नाइ, जाती गुणका वैशम्य रहो. वो कर्म फल ओर भगवत्संकल्प करके है वेसे कोइ हेतु करके भी भागवत देखे तोवाका तीरस्कार नहि करना पापी हो परंतु अनन्य भावतें भजने लगे तोवाको साधु हि मानना करके भगवान गीताजीमें कहतें है. वाकी भीतर की भक्ति को मान देना. वो भगवान का मान है अपमान सो भगवान का अपमान हि है. उनकी सेवामें फीर अतिभीनहि हो जावे. मर्यादा का संरक्षण, शास्त्राज्ञाका संरक्षण भी तो रहना चाहीये श्मशानका अग्नि, ओर यज्ञका अग्नि, देह गोष्ठी एक वात है ज्ञान गोष्ठी दूसरी वात है. उनका अपराध न हो यह तो सर्व प्रकार के भागवत के लीये समान है. ओर वो हो गये तो उनकी ही क्षमा की याचना करना, सुग्रीव

लक्ष्मणजी परस्पर फीर मील गये. लक्ष्मणजीका क्षमापन सुग्रीवने कीया, फीर उनकी क्षमा फीर लक्ष्मणजीने मागी.

ज्ञानवान बुद्धि पूर्वक पाप करजाय तों भी सद्य ठीकाने आता ओर पुराहि पछताता क्षमा चाहता है. बदरीकाश्रममें महादेव भगवान से लडे पूनी जब ब्रह्माने समजाये तब सद्य समज गये, नारायणके पांउ पडे ओर उनको क्षमा भी तो मीली. वहां उन्होने वो हि शरणा गतिका उपयोग कीया ओर वाते, स्वामीने प्रसन्न हो कर उनका स्वीकार कीया एसा प्रमाण है. जेसे भगवान क्षमा करते हि है, वेसे भागवत भीतो क्षमा करते हि है. जीतेंद्रीय तो उनका लक्षण हि है. वाते उनके अपराध के लीये, उनकी प्रपत्ति भी सफल होती है. हम शम दम भागवत लक्षण छोडे, वाका यह दंड, वेसे वो सजे रखे तो वाका लाभ है. जेसे भागवत सेवा श्रेष्ट वेसे भागवत अपचार प्रवल यह एक न्याय है. उभय में उनका शेषत्व भगवान पर प्रीति, ओर वातें भगवान कीवो कृति करने वाले पर प्रीति, अप्रीति, अनुग्रह निग्रह सामान्य सरल न्याय है. इति.

स्थान विशेष अधिकार २०

प्रपत्ति के पीछे जहां लो यहां रहे वहां लो, निर अपराधी, अनुकुल वृत्ति, परम पदके लीये बनी रहे, वोरुचीमें त्वरा होवे वालीये वेसे देशका वास भी सहाय भूत होता है घरकुटुंब यह सर्व विषमय विरोधी है. वैश्नव एकांतीकको घर गाम कुल छोडना, ओर वो सर्व प्रकार विश्नु संबंधी हों उनतें संबंध जोडना करके प्रमाण है क्योंकी वृत्ति के अनुगुण वास स्थान; जेसा काम वेसा धाम चाहिये तब ठीक बन सकता है.

यद्यपी कली महात्म्यमें पुण्य स्थान भी भ्रष्ट लोको ते व्याप्त

हो गये है. तो भी उनमें भले बूरे है. भागवतमें कलीके लीये, द्रावीडको वेसे हि पसंद कीया है. कि कावेरी ताम्रपर्णी आदि के तटपर उनका जलपान करनेवाले नारायण परायण वहुत होगे. जहां वहुत श्री वैश्नव वहाँ वहु सदाचार, भक्ति, कथा, उत्सव, भगवानका वैभव, और वहां निवास, वो हि प्रपन्नको वो सब अनुकुल सहायका लाभ मीलता है. वाते दिव्य देश निवास श्रेष्ट है. जहां भले साधु जन वसते हो वहां जावसो, वेसा भारतमें कहा है. क्योंकी उनके संग रहेतो हमारा धर्म वना रहता है. वाको हानी नहि होती है. ओर सत्संग प्रभाव ते सुबुद्धि होती है. आचार विचार सुधरतें है. स्वभाव हि उत्तम वन जाता है. फीर वो भागवत भगवत धाम ओर वहां कैंकर्य करनेको हि रहतें है, तो वो संग सहवास प्रभावतें हमको कैंकर्य करना यथोचित मीलना भी सुगम होता है. सब संग वो करना हि पडता है. रुची हो तो वाको उत्तेजन सहाय मीलती है. आलवार पूर्वाचारी तव हि तो, दिव्य देशमें रहे वहां का लाभ लीया ओरोको लेनेको वहां का माहात्म्य गाया, समुजाया अपना अनुष्ठान अनुभव दीखाया सीखाया. हम उनके वा लीये भये है तो वेसा हि करनेको वेसे स्थान के निवासी हि वनना ठहरा हि.

भगवानको अमुक स्थल अधिक अभिमत है. वहां आपका प्राकट्य अधिक रहता है, वाते वहां कैंकर्यमें लगनेमे विशेष लाभ मीलता हैं. क्षेत्र धाम महात्म्य मोक्षदापुरी, तीर्थ अर्चा करके तारतम्यका वडा शास्त्र है. उनमें ज्योंश्रेष्ट त्यों वहां वास करना श्रेष्ट है. स्वयंव्यक्त, दैवआदि भेद पांचरात्रमें समुजये है. वहांका महात्म्य कोशमें योजनमें करके तारतम्य दीखाया है. फीर कुछ करे तो भी भगवत धाममे रहेकर, न करे तो भी भगवत धाममें रहेकर एसे अनेक दोष कुसंगते वचनेको कुछन करके पडे रहेना भी, ओर स्थान ते भगवानका धामको श्रेष्ट कहा है, वो वास्तविक है. मन चंगा तो

कथरोटमें गंगा आदि वचन आपत कालके है. जीनतेवो न वनसके उनके लीये है. वेसे भी दीव्य देशमें जा बसे तो अधिक लाभ है. जेसे सच्चे धार्मीकवानप्रस्थ होतेहि हैं वनवास करके वो आश्रम निरत रहतेहि है. ग्रहस्थाश्रमके उपर की वो कोटी है हि वेसे एकांतीक दीव्यदेश वास, ओर वहां शिष्टोमें वसना ओर शिष्ट आचार कैंकर्यरत वनेरहेना वेसा हि देहांत निभाना करके अनुष्टांन करते है, करगये है, वोही हमारे लीये भी वो उपाय दशामें वो गतीके लीये श्रेष्ट आचार है. इति.

अथ निर्याण अधिकार २१

प्रपत्ति करनेके पीछे जीतना काल वाकी है, वामे निरअपराध अनुकुल वृत्ति रुची रखनी. दीव्यदेश वास करे तो पीछे राजाधीराज सर्वेश्वर उभय विभूती नायक, स्वाभिमत दीव्यदेश वासमें वाको स्थीर करके, अभिषिक्त राज्य महीषी कीनाई वहुयशा करके, आपके परम एकांतीक रुप वृत्तिवाला अधिकारी वाको वनातें है.

यद्यपी अपराधोतें वचे तो भी, एसा अधिकारी भये पर प्रारब्धकि विचित्रता करके, अहंकार ममकार उठ जावे, वाते देवतांतर वा उपायांतरमें लगजावे, तो वो भी तो वडे विघ्न है. परमपद निर्याणमें अपराधो कीनाइ विरोधी हि है. परंतु भगवानने जाके तारनेको एकबेर वचन देदीया है वो अंत तरताहि है. पापो तें मुक्त करुंगा । कहनेवाले अंत सर्व विघ्नोको हठातेहि है. भूले फीर रस्तेपे आगे वढाते है. जीतना वो दूर चला गयाहो उतनी देरी, फीर पीछे मार्गपें आने कोहो, उतना फल प्राप्तीमें विलंवहो परंतु यह विपरीत ज्ञान वेसे अधिकारीको चार्वाक सरीख नहि होजाता है. गीरगया फीर समालकर खडा होजावे तेसे कोइ कालमें वो पस्ताता है. अ-

हंकार ममकारादि विवेक वढने तें हठता है. ओर वो पीछे निरमल होता है. जो अपराध होगये उनकी क्षमा मागता है, ओर वो सफल होती है. योग्य कालमें अपराधकी क्षमा मीलती है. की वो पीछा ठीक अधिकारी वनजाता है. वा की प्रयोजनांतरकी रुची स्थीर रहती नहि. वो प्रारब्धकालके भीतर हि वाको वो दुःखरुप, अस्थिर, अल्पसुखमय, दीखने तें वामें अरुची वो भोगतें भोगतेहि होजाती है. सौभरीका द्रष्टांत प्रसिद्ध है. देवतांतर स्पर्श होतो भी. कोइ परम एकांतीकका मीलाप कराके, वाके नेत्र खोलतेहि वो आप लज्जा पाता है, ओर अव्यभिचारी वनता है. ओर फल मांगनेवाले उपायांतरमे लगनेवालेको भगवानकुपथ्य नहि कराते है. हित हि करतें है वेसे जाका भला चाहुं वाको मेंभीखारी वनाउं। करके वचन है. वेसे योग वनाके कटु अनुभव देके भी सुधारलेते है. पूर्वकी प्रपत्ति वाका कार्य वनातिहि है. वाकी बुद्धि कृति ठीकाने लातीहि है. भगवानकी युक्तिसें वो ठीकाने आजाती है. वेसे हि मंद विश्वासवालेको आप महा विश्वास भी अंत उत्पन्न कराते है. ओर प्रपत्तिके पूरे अधिकारी वनाकर, वो निष्टावंत अधिकारी भयाकी भगवानका प्रिय पूर्ण होता है. वो अनुतापवाला त्वरावाला वनाता है. विलाप करता वियोग दुःसह मानता है, ओर कव स्वामीसें साक्षात् जामीलुं यह लगनीमें हि प्रारब्ध पूरे होते देहावसान भयाकी परमपद जानेको सोने कीवा लोहेकी, परंतु यह देहको वेडी समजकर शरीर पातका कष्ट भीतो नहिं मानता है. वाके उत्तर पूर्व शेष पापका निर्णय सुत्रमे कहे न्यायसे होता है. वाके सुक्रत शेष वाकें सुहृदको, ओर दुष्ट कृतवाके द्वेषीको मीलते है. वो शुद्ध फीर कोन देशकालमें देह छोडे तो भी सूत्रमे कहे न्यायसें न्यास विद्या प्रतापसें वो हृदयमें अंतर्यामी वाको दर्शन देते है. वाका साक्षात्कार करके वाके हि अनुग्रहसें, अंत स्मरण स्वामीका हि पाता है. ॥ केवल मेरी हि दया करके मो-

को देखताभया ॥ करके गद्यमें श्रीमुखका बचन है. फीर वोहि योगीकी गतिसो यह प्रपन्नकी गति. भक्ति प्रपत्ति उभयते अर्चिरादि गति ओर परमपद प्राप्ती समान है. भक्त आप साधता है, वाको स्वामी सधाते है. वो भीतर ज्ञान ढांपने खोलनेवाले, सदा हृदयमें रहते हि है. सो काष्ट पाषाण सरीख अंतकालमें प्रपन्न हो गया हो तो भी आप कहचुके है में वाका स्मरण करके परमपदमें क्रम तें पहुंचानेवाला बनता हौं. वोहि अंतस्मृति ज्ञानदर्शन नाडी प्रकाशद्वारा वोही फल पाते है. येहि निर्याण अधिकारमें निर्णय है. इति.

गति अधिकार ॥ २२ ॥

या प्रकार सुषुम्णा नाडीमें प्रवेश करके मुमुक्षु यह स्थुल शरीरको छोडकर ब्रह्म नाडीरुप द्वार द्वारा वाहीर नीकल जाता है. जेसे वत्सल हारद कल भाषणवाले राजकुमार मुग्धको महाराजा उद्धार कर लालन करता कराता है, तेसे यह नाडीके वाहीर नीकलाकी देवयान मार्ग वाको मीलता है. वहां अर्चिसें आरंभ होकर दीवस, शुक्लपक्ष, उत्तरायण, संवत्सरके अभिमानी देवताओ के स्थानोमेसे जाता बढता, वायु आदि चंद्र ओर विद्युत लोकमें जाता है. वहां वाको अमानव पुरुषका संग होता है. वो वाको सहकारी वनता संग चलता है. उपर वरुण इंद्र प्रजापति के लोक भोगको भोगता देखता कहां भी न रुककर, उपनिषत् में कहे प्रकार, भगवानकी हि तजवीज तें वो “वैकुंठ नामका लोक जो दिव्य हैं, षाडगुण संयुक्त है, अवैश्नवोको अप्राप्य है, यह तीन गुण रहित है, जहां नित्य सिद्ध मंडली भरी रहती है, पांचकाल परायण जहां जाता है, जहां सभा, महालय, वन, उपवन, वापि, कुप, तडाग वृक्ष मंडप वने है, सब अप्राकृत, सूरकोवंद्य, कोटीसूर्य सरीख प्रकाशीत है, वो शुद्ध सत्वमय, सर्वोत्तम प्रदेशका में कव साक्षात्

कार करुंगा एसी नीरंतर भावना याचना (जीतंते स्तोत्रादि में कही रीती) यहां करता रहा वो प्रपन्न वोहि स्थानको, सुक्ष्म देह वहां जानेको मार्ग के उपयोगी रही है वा मे लगा भया आता है. वो देह विरजामें फीर छूट जाती है ओर वाको अप्राकृत शरीर फीर मीलता है. विर जाके उपरके प्रदेशमें मार्गमें एरं मदीय सरोवर ओर सोमसवन आते है. फीरवाको लेनेको आइभयी पांचसो अप्सरा, माला आभरणादि वाके हि लीये ले खडी वाकोवातें अलंकृत करती है. ब्रह्मालंकार होनेके पीछे वो ब्रह्मगंध–रस–तेजमें प्रवेश करता है फीर प्रजापति जीनके नाम है वैसे द्वारपालक जहां है वो राज्यद्वार गोपुरमें प्रवेश करता है. वहां वाको अपाकृत राज्योपचार कराये जाते है. आनंदमय मंडपमें गोष्टीमे वो वाका प्रवेश कराते है. तब अहोमें कहां ओर ये कहां एसा वो विचारकर अति नम्र हो जाता है. जो मांगता रहा सो स्वामीने अंत दीया क्या! यह वीचार ते प्रेम परवश हो जाता है. " वैकुंठमें रमाके साथ लीला करते श्यामसुंदर राजीव लोचनकोमें नेनो तें साक्षात् कब नीरखोंगा. " यह चाहता रहा सो प्राप्त भया. जेसे जानकीं मनोरथ करती रही वो सफल भये, तेसे यह भी सफल होते है. वो जेसा स्मरते रहे वेसाहि, निरतिशय भोग्यभूत अपने आत्माको प्रकाशीत होता है. ओर वहां समान भोगयुत सजातिय नित्य सुरीके साथ वाको उनके समान माना जाता है. ओर फीर उनके साथ या वदात्मभावी एकांतीक अत्यांतीक नित्य कैंकर्यमें उनके साथ स्थापीत होता है. जो स्तोत्रमें मांगा सो सदाके लीये, संपूर्ण पाता है. ओर फीर नित्य निरतिशय आनंदमें उन सब साथ, उन सब सभान रहता है.

महाभारतमें कहा हैकी मुक्त प्रथम श्वेतद्विप, फीर अनिरुद्ध लोकसें प्रद्युम्न, संकर्षण लोकको पाके फीर पर वासुदेवको परमपदमें पाताहै,

वोभी एक क्रम है, अर्चा विभवते व्युह ओर फीर परकों प्राप्ति होती है. करके पांचरात्रमें क्रम है. वो अधिकारी भेद करकेहै. हमकोतो जो वेदांत प्रतिपाद्य परंपरासें सीरवाया जोमार्गमें लगाये जो मनोरथ करवाये वो क्रममें वो सफल या प्रकार होते है होवेंगे. हम नित्य वोही गतिका स्मरण करते आशा धरते है, वो या प्रकार गतितें प्रपन्नको प्राप्त होती है. इति.

परब्रह्म परिपूर्ण अनुभव अधिकार २३.

या प्रकार गति विशेषते जो परमात्माका परिपूर्ण अनुभव करते है, उनकी क्या स्थिति सो कहतें है.

सर्वदेश सर्वकाल ओर सर्व अवस्थामें सर्वेश्वर अनंत जो है. वाके विग्रह गुण विभूति चरित्रको परिपूर्ण निर तिशय भोग्य मानकर, वाको विषय करके वर्तता है, यह अनुभव मुक्तका ओर इश्वरका तुल्य है. वाते वो परम साम्य पाता है करके कहा है. भगवानका स्वरुप (अनंत आनंदघन होने तें) भोग्य करके प्राप्त है. आपको जो भोग्य सो अन्यको केसे भोग्य होवे ? राजाको अभिमत भोगोपकरण भोग स्थानादिक, राणीकोंभी अनुकुल होकर, भोग्य लगते है. तेसे भगवानके स्वरुपके अनुवंधी ओरोंकोभी भोग्य हो वो ठीक हि है. या रिति सर्व प्रकार विशिष्ट सर्वेश्वर भोग्यभूत होता है. यह श्रुतिस्मृति भूमाधिकरणमें सूत्रमें प्रतिपादन कीया है.

यहां निरतिशय अनुकुल होकर परम प्राप्य होनेतें, भगवानके स्वरुपकों परमपद कहा है. यह भगवानके स्वरुपका परीपूर्ण अनुभव भोग्यतम वो स्थान विशेष प्राप्तिपूर्वक होनेतें, वो स्थानकोभी परमपद कहा है. ओर यह अनुभवका आश्रय होके जो अनुभवमें आता भग-

वानका विभूती भूत ज्ञान आनंद लक्षण स्वरुपकोभी परमपद कहते है. ओर यह तीनो ओरोंको प्राप्त होते है, वो यहां वेसी प्राप्ति कही है.

यामकार भगवानका स्वरुप रुपगुण विग्रह आदि, ओर शुद्ध सत्वका आश्रयवाली जो नित्य विभूती, यह सर्व भोग्य होते है.

यहां लीला वीभूतीमें जो पदार्थ, मुमुक्षुको त्याज्य करके शास्त्रमें कहे है, सोभी जेसे भगवानको अनुकुल करके भोग्य है, वेसे मुक्त को भोग्य लगते है. पीत्तके समयमें वीमारको दूध प्रतिकुल भासता है वोही पीत्त हठजाने तें भोग्य लगता है. ओर जेसे राजाका पुत्र केदमें होतवलो, वोताको प्रतिकुल दीखे, परंतु वो शिक्षातें छुटकर कुमार पदपाये तो, पीछे पीताकी विभूति करके अनुकुल दीखता है, वेसे मुक्तको फीर सब अनुकुल दीखता है. "तेरा संग वहां स्वर्ग तेरा वियोग वहां नर्क" एसे जानकी के वचनका न्याय है. वद्धोंको अनुकुल प्रतिकुल जो यहांके पदार्थ होते है, वाका हेतु वाके कर्म है. वो कर्म पूरेभये फीर कहीं कोईभी प्रतिकुल होना लगना संभवितहि नहिं.

मुलमंत्र ओर द्वयमंत्रमें चतुर्थी विभक्ति तें, जो कैंकर्य मांगा है, ओर वो प्राप्त होता है सोभी उपर कहा अनुभव परीपूर्ण होनेंते, जो वो देनेवाले प्रति; वाते प्रीति प्रकटती है, वो वाका परिवाह करा लेती है. वो अपना प्रेम दीखाना प्रेमते उठे मनोरथकी पूरती है. यह गद्यत्रय आदिमेंभी विस्तार तें कहा है. मुक्त दशामे जो विहारादिक कहे है, सोभी पुन्य पाप कर्म के फल नहिं. स्वामीकी ईच्छा बहुत रुचीकर होकर, वेसी हमारी इच्छा वनने तें वाके व्यापारमें हमभी लगते है, वो भोगें वेसे वाके साथ भोगते है अर्थात् वाकीहि ईच्छा के अंतर्गत हमारी इच्छा होनेते, वोवेसा कैंकर्यरुप होता है.

वातेहि भगवानकी प्राप्तीमें यथाभिमत कैंकर्य पर्यंत हो तब वाको पूर्ण ब्रह्मानुभव करके माना गया है. यह अनुभव फीर कभी

नाश नहि पाता है वेसे वचन श्रुति स्मृति सर्वत्र है. यह नित्य लोक में नित्य भोग्य नित्य कैंकर्य, यथार्थ हि कहा गया है. फीर भगवान जब स्वच्छंदसे अवतार लेके लीलाविभूतीमें आते है, तब भी यह अनुभवका संकोच नहिं होता है. वाते मुक्त संग आवे तोभी, पुनरावृत्ति वो नहि गीनी जाती है.

यह अनुभव पानेवाला यहां ते चाहे ब्रह्माकी देह छोड के जाय, चाहे शबरीकी देह छोडकर के जाय, मुक्त भये पीछे उनके अनुभवमें तारतम्य नहि रहता है. क्योंकी श्रुती मुक्त मात्रका परम साम्यत्व कहती है. आचारकी विकल तातें आनंदमे तारतम्य कहा जाता है, सो मुक्त अवस्थाके पेहेले यहां भागवतदशामें सालोक्य सारुप्य आदि प्रकारभी यहांहि है. वहां सर्वको समान भोग है समान परिपूर्ण अनुभव होता है.

सायुज्य नाम—साथ भोगना, सदा भोगमे संगहि रहेनी. वहां सदा भोग भोगनाहि है. मुक्तको मात्र जगत व्यापार नहि है. वाके साथहि कहा है की भोग्यकी साम्यता है. पिता कृषी करे, पुत्र न करे पर फल भोगी समान होता है. यह न्याय समजना.

मुक्त स्वतंत्र होते है करके जो कहा है सो अकर्मवश्य होते है करके समजना. भगवानके वशभी तो प्रीती तें बनजातें है. ओर स्वरुप तें तो हैहि. दुःखरुप परतंत्रता परवशता उनको नहि. सुखरुप परवशता तो राणी होना मंत्री होना, प्रेमीके सेवक होना अत्यंत इष्ट मीष्ट होता है. यामे स्वतंत्रताका भंग नहि. उनकी चही सेवा न बन सके तो ओर कष्ट होता है. वो सेवामें न स्वीकारे तो, ओर दुःख हानी होती है. वेसेहि ऐक्य कहा है सोभी राम सुग्रीवकी एकता हो गई. यह वचनकीनाई हम वो अब एक हो गये. हमारे बीचमें जुदाई न रहि करके अनुभवतें है. आत्मा अणु सदा

एकरूप वेसाहि परमात्मा विभु अनंत सदा वेसाहि है, दो, दो वस्तु है हि. न एक रहे न एक हो सकते है.

परमात्मा जगतकारण, मोक्षदाता, सर्वाधार, सर्वका नियंता, सर्वका शरीरी सर्व शब्दकावाच्य, सर्व लोकका शरण्य सर्व मुमुक्षुका उपास्य, सर्व फल प्रदाता, सर्वव्यापक, ज्ञानानंद स्वरुप, लक्ष्मीकी सहायवाला वेसा नियत असाधारण है.

हममें आधेयत्व विधयेत्व नियाम्यत्व, वाका दुःख स्वामी दुर करे वाक मनोरथ प्रभू पूर्णकरे, वाकी विपत्तिको वोहरे वेसा जीव कहां ओर ईश्वर कहां.

अंतमे येहि कहाहैकी मुक्तकी पुनरावृत्ति नहि है. येहि वेदांतका अंतसूत्र है. अंत सत्य है. मुक्तका ज्ञान सदाके लीये खूल जाता है. याते वाको सदा ब्रह्मानुभव होता है. भगवान एसा भोग्य विषय है की वाको छोडकर ओरमें मुक्तकी इच्छा होनीभी तो असंभवीत है. यहांसेहि वो नित्य युक्त एक भक्तिवान अनन्य वनता है. भगवान ज्ञानीको अतिप्रिय मानते हैं. वो पुर्णानुभव भयेतें, प्रेम बढता है. वहां उभय पक्षतें वियोगका संभवहि नहि है. वहां इश्वरके अभि मतहि व्यापार होनेतें, भगवानकी अकृपाका प्रसंग नहि है, वातें यथाभि मत कैंकर्य पर्यंत परिपूर्ण ब्रह्मानुभवरुप पुरुषार्थ यावदात्म भावी पाता है. याते अनावृत्ति शब्द ते सूत्रकी शास्त्रकी पूरती है वेसे यहां भी पूर्ण.

श्रीमतेरामानुजायनमः

अथ श्रीमत् रहस्य त्रयार्थ.

रहस्य त्रयके उपरसे श्रीमत् अष्टाक्षरार्थ
मूलमंत्र प्रथम रहस्य ॐ नमो नारायणायं

वहुत कालसे संसारमें वहेते जीवोके उज्जीवनार्थ अध्यात्म शास्त्र, तत्वहित ओर पुरुषार्थका प्रतिपादन करते है.

तत्व सोंहम क्या केसे है. हम जीव दुःखी है, हीतसो हमारे दुःख जानेको, ओर सुख पानेको हमको क्या करना सोहित ओर वो उपाय वरावर हमते वने तो, हमको सर्वतें श्रेष्ट फल मीले, सो पुरुषार्थ यह तीनो वातें शास्त्रमें कही है. ओर वो एक मुलमंत्रमें हि समाय रखी है.

वो मुलमंत्रसो श्रीमत् अष्टाक्षर है वामे आठ अक्षरहै, तीन शब्द है, प्रथम शब्द प्रणव जाको "ॐ" कहते है. वोहि सारतमतो है. वो एक पदमें तीन अक्षर है अ, उ, ओरम.

वामे प्रथम अकार अहै. वाके वहुत अर्थ होते हैं वामें ते मुख्य सर्वका कारण, सर्वका रक्षक, नित्य निरुधाधिक शेषत्वका प्रति सबंधी कहे तो शेषीश्रीपती.

वाके साथ चतुर्थी गुप्त है "अकेलीये" एसा है वो जो वाके लीये है वाका सवंध साधनेको है.

"उ" यह वीचका अक्षरभी वेसाहि अन्यका नहि है करके दीखानेको है. वोकोन! सो तीसरा अक्षर "म" है. वो अकाशेष है. अन्यका नहिं एसा अउके साथ मको संवंध है. वी "अ" कारण कार्य, वो अ रक्षकका रक्ष्य है वो जीव-हमहै. वो ज्ञान आनंद स्वरुप करके है. करण कलेवर तें भीन्न है—परिच्छिन्न—अणु—है.

यह तीन पद्मीलके प्रणव भया है. वाका समुहसे अर्थ कहे तो हे स्वामी में तुम्हारा दास हौं अन्यका नहिं हौं. एसा श्रीपतिका जीव अनन्यार्ह शेष सोमें हौं यह अर्थ है.

अष्टाक्षर में दुसरा पदनमः करके है. जाको नमो बोला जाता है. वो एक पद्भी है ओर दोपद्भी है. "न" कहेतो नहि हौं मैं शेषी कोन ! "म" में मेमेरेलीये नहि हौं. स्वतंत्र निरपेक्ष नहिं हौं, ऐसा अर्थ है. जब मेहि मेरे लीये नहि तो फीर मेरा करके ठहराया सो तो मेरे लीये कहांसे होवे मे ओर मेरा ओर के है ओरके लीये है वो नारायण है--आय कहे तो वाके लीये, एसे तीसरे पद्मेभी दो भाग है.

नमःका दूसरा अर्थ नारायणको नमन करना होता है. नमन करना कहे तो वाकी शरणागति करना वो उपाय है हमारे लीये परम हित है तो वेसा प्रणव बोलके, आपके लीये, स्वामीका हि में दास हौं एसा विचारना त्यौं वाके साथ वाका शरण नमः कहेकर करना. मेरे लीये रहने ते प्रकृति सबंध अनिष्ट आया है वो जावे, ओर प्रणव करके श्री पतीके लीये है वेसे बनजावे वालीये यह उपाय करनेका है, जातें सदा अनिष्टा निवृत्ति ओर सदा इष्ट प्राप्तीकी अभी लाषा है. नमन करनेमें वो मनोरथ है. यह नमः शब्दका तीसरा अर्थ है. तत्वके साथ हितके साथ ओर पुरुषार्थके साथ लगनें तें तीन अर्थवाला ठहरता है. मेरे लीये नहिं यह शेष रुपके साथ नमः उपाय शरणागतिमें हितके साथ ओर अनिष्ट निवृत्ति ओर इष्ट प्राप्तीरुप जाका हों वाके लीये बनु यह नमः कहनेमें भाव है. वेसे नारायणके साथ वाके अर्थोंका अनुसंधान होसकता है. ॥ नारायण ॥ में नार ओर अनय दो शब्द है. नारोका जो अयनसो नारायण यह एक अर्थ है. ओर नार जीनका अयन है यह दूसरा अर्थ है. नार कहेतो जीववर्ग, वो आधार सो अयन यह भी ठीक है. ओर नार जीव वर्ग उनका अंतर्यामी. नार वाके शरीर अयन यह भी वास्तवीक है.

॥ आय ॥ वाके लीये में बनो यह प्रार्थना हैं वों उपायका फ-लवाळा कैंकर्य मीले वो निरंतर सर्वकाल सर्व स्थलमें साथ रहेकर फीर कभी न तुटपडे वेसा दीव्य दंपतीका नित्य कैंकर्य श्री वैकंठमें मुक्त होके पाउं. असो नारायण वाका शरणागति करके नित्य दास बनुं इतिभाव है.

—अष्टश्लोकीके उपरसें—

रहस्य त्रय कहेतो तीनमंत्र, मूलमंत्र कहे तो श्रीमत् अष्टाक्षर वो एक रहस्य, द्वय मंत्र कहेतो, जामें दो मीले है वा दूसरा रहस्य, ओर चरम श्लोक जो गीताजीमें अंत है वीसरा रहस्य है.

सर्व शास्त्रका मुळ वेद, वेदका मुल प्रणव है, वो प्रणवके साथ वाके अर्थमें ओर सात अक्षर मीलनेंते ॥ अष्टाक्षर ॥ वना है. वो सर्व मंत्रोका मुळ है. वातें वाको मुल मंत्र कहते है.

प्रथम प्रणव ॥ ॐ ॥ शब्द है वामैं जो तीन अक्षर, अ, उ, ओर म है, सो तीन वेदके सार भूत है. एसा श्रुतिमें कहा है. तीनोको मीलायेते ॥ ॐ ॥ वनता है.

अके साथ अर्थ के वलसें चतुर्थी समजनेकी है. उ, पदका अर्थ हि करके है. अओर उ मीलाये तो, अकेलीये हि एसा अर्थ भया वोम, उनका संवंधी है अकेलीये हिम है यह प्रणवका पूरा अर्थ है.

अकाअर्थ विष्णु है. विष्णु कहे तो श्रीमान् नारायण, जो परम-पदमे सदा वीराजीत है सो अनारायणका प्रथम नाम है एसी श्रुती है. व्याकरणमें मंगलाचरण अकहे तो वन गया करके माना गया है. गीताजीमें. में अकार हों एसा आप भगवान कहते है.

वो अनारायण कहे तोजो जगत्की उत्पत्ति स्थितिप्रलयकरता है ओर मोक्ष दाताहै सोहै. याहिते सर्व प्रकार जगत्का कारण सो-अ--है वो कोनके लीये है ! सो कहा हैकी मके लीये है.

" म " कहे तो हम जीव वर्ग, जो चोवीस तत्व वाले शरीर मे व्यापक प्रति शरीर भिन्न है. म पचीसमा अक्षर ओरवाके पूर्वके चोवीस अक्षर चोवीस तत्व के वाचक है. एसे पचीसमा अक्षर " म " होके वो पचीसमें जीवका वाचक है.

फीरमका धातु ज्ञाने " मन् " जाननाकी उपरसें 'म' जाननेवाला यह शरीर क्षेत्रका ज्ञाता क्षेत्रज्ञ सो जीव हि ठहरा यह दूसरा अर्थ है. वो ज्ञान गुण वालाभी है ज्ञान स्वरुप ओर ज्ञान गुणवान अणु फीर अके हि लीये कहे तो श्रीमन्नारायणका शेष, दास सो उकर के अनन्य शेष हिं भया, सर्व आत्मा परमात्मा के सदा दास है. वेसे में जीव श्रीमन्नारायणका हि दास हौं एसा अनुसंधान करना येहि प्रणव " ॐ " का अर्थ भया.

अव दूसरा पद नमः है वाके अर्थ तीनं प्रकार होते है. एक प्रणव के साथ लगाये तो दूसरा नमः का साधारण अर्थ जहां वो है वहां हि कीये तो, ओर तीसरा, नारायण जो तीसरा पद है. वाके साथ लगाये तो प्रथम प्रणव के साथ लगाये तो, नम में दो शब्द है. करके समजना, न कहे तो नहि, मकहेतो मेरा, नमः कहेतो में मेरा नहिं हौं भगवानका हि हौं यह तो प्रणवसें कहा वो स्वतंत्र न रहा, परंतु परतंत्र पूरा दीखानेको कहा के मे मेरे लीये होके, भगवान के लीये भी हो सको, जेसे नोकर आपके लीये हो कर स्वामी के लीये है वेसा नही हौं में स्वतंत्र नहिं हौं, मेरा निरपेक्ष कर्तृत्व नहि है, स्वामी करावे तव कर सकता हौं तो स्वामी करावे तेसाहि करना, स्वामी कहे चहे वेसा हि करना, सेवा स्वेच्छा पूर्वक नहिं परंतु स्वामी की इच्छापूर्वक करे, सो संपूर्ण दासत्व है एसा प्रणवके साथ नमः को लगाने से शेषत्व के साथ पारतंत्रत्वको लगानेसे, आत्मा के स्वरुपका पूरा शोध होता है जव भगवानके लीये पारतंत्र ठहरे तो, भगवान के लीये हि नहि, जो भगवानके हो

वेसो भागवतके लीये भी ठहरेहि. भागवतकी सेवामे भगवत सेवा आती है. होतीही है. स्वामीको आपकी सेवा तें भी वो अधिक इष्ट है. आपकी वस्तुको उनके लीये हो यों अधिक प्रसंन्न होते है. में आत्मा मेरा धर्मभूत ज्ञान, मेरा देह ईंद्रिय ओर जोहो वो सर्व 'न-मम' मेरे लीये नहि. यहां पर्यंत अर्थ पह्नोचनाहिं चाहिये वोहि पूरा अर्थ है. ओर वास्तविक चित्त अचित् सर्व श्रीपती काहि है. वोहितो सत्य है, तत्व है वेसा जानना, मानना वोहितो पूरा ज्ञान यथार्थ ज्ञान है. याते या प्रकार नमःका अर्थ प्रणवसाथ भया.

अवनमः कहेतो नमन करना उपाय करना, शरणागति करनी अपने रक्षणका भार स्वामीके उपर धरना, वोहीतो 'नमः'का मुख्य प्रसिद्ध अर्थ है. वो नमनके अर्थमे नमः एक शब्द भी होता है.

अवमें मेरेलीये नहितो कोनकेलीयेहौं ? यह भी तो समजना चाहिये, त्यों कयों होंवो भीतो खुलना चाहिये, वालीये नारायणके साथ वाको लगाये तो वो प्रकार भी संगती लग गइ की नारायणके कैंकर्यके लीये में हौं मेरे लीये न रहुं न चहुं न भोगुं. मे मेरेलीये नहिं, मेरा रक्षणका भार मेरेपें नहिं, ओर कैंकर्य रुप फल भी मेरे-लीये नहिं यह तीन अर्थ भये.

अब तीसरा पद नारायण है. वामे नारायणको आय लगा है. नारायण सो नाम ओर आय चोथी विभक्ति है. वाका अर्थ, वाके लीये. नारायणाय कहे तो नारायणके लीये. एसा अर्थ होता है 'अ' मे लुप्त चतुर्थी प्रणवमे यातेंहि कही है की (मही अ के लीये है. वो असो कोन देव ! सों यहां मंत्रमे स्पष्ट करदीयाकी, ब्रह्मा महादेव ईंद्रीदिक नहिं 'नारायण है' वाके लीये हम हे. उतनाहि नहि. नारायण शब्दमे दो पद है. नार, ओर, अयन, दो मीलके (नारायण) शब्द बना है. वो दोमे (नार) कहे तो जीवोके स-मुह. (नर) सो जीव उनका बहु वचन (नार) उनका (अयन) सो

(नारायण) 'अयन' शब्दके दो अर्थ है. अयन कहेतो विश्राम. प्राप्यफल उपेय श्रीहरी हि है. ओर (अयन) कहे तो गति. उपाय अवलंबन सो नरोका है. एसे नरोका आलंबन ओर नरोका प्राप्य उपाय ओर फल, दोनो वो होने ते दोनो अर्थ यथावस्थित है. मोक्षप्रद ओर परमपदमें प्राप्तघो नारायणहि है, ओर, नहि है येहि सत्य है.

फीरनारका अयन सो नारायण ओर नार जीनका अयन सो नारायण एसें दो सभासतें भी दो अर्थ होते है. अयन कहे तो आधार परमात्माहि सर्वका आधार है. नारायणहि त्यों वेसे वाका अयन घर नार कहेतो चेतन है क्योंकी वो उनका अंतर्यामी है उनके भीतर रहके हि, उन सर्वका नियम करता है वेसे हमारा आधार ओर हमारा नियंता एसे भी दो अर्थ भये.

न'नहि (२) नाश एसे चित् अचित् वर्ग दोनो तत्व उनका अयन एसा भी अर्थ है, जगत मात्र वाका शरीर है, उतनाहि काहेको परमपद ओर वाम वाहिकी सामग्री परिचारक, परिजन, पार्षदगण, श्री, भूमी, आयुध, भूषण ओर दीव्यमंगलविग्रह, सर्व अचित् चित् के आप शरीरी, आधार नियम कहे हि. एसे नारायण परमपद विशिष्ट, परमपद नाथ उभय विभूती विशीष्ट, उभय विभूतिके स्वामी, सेषी, शरीरी येहितो पूरा अर्थ है.

ओर फीर 'आय' कहेतो वाके लीये जो है सो भयाहि तो वामें हम ओर हमारा भी आगया ही. यह नारायणके लीये हम ओर हमारा कब ते कवलो! सदा सर्व प्रकार अर्थात् हम यह चतुर्थी विभक्ति ते चहे की सर्व देश सर्वकाल ओर अवस्थामे हम नारायणके लीये बनेरहे नित्य कैंकर्य पावे, वो 'नमः ठीकबने. हमारा प्रकृति सबंध जावे, ओर हमारा शेषत्व पारतंत्रत्व स्वरुप खूले तो फीरतो वो नित्य कैंकर्य येहि जीवन, येहि व्यापार सदा है वाते

आप ते प्रार्थना है की हम परमपद नाथका नित्य कैंकर्य वाके लीये हि होकर पावे येहि अष्टाक्षरका पूरा अर्थ है.

मंत्रका जो अर्थ ग्रहण करना सो उपयोग करनेके लीये. जेसे धन अर्थ संपादन करे ओर वाका उपयोग न करे सो कृपण मूर्ख तेसे यह अर्थ भी अनुष्टान करनेका है.

वामें मकार जो प्रणवमें है वो हि हमारे जीवके लिये है. जब समज चुकेकी वोतो चोवीस तत्व तें प्रथक है, नित्य है, अणु है, ज्ञानस्वरुप है, फीर देह सोही मेहुं एसा अज्ञान बनारखे तो वो मकारका अर्थ क्या समजा ? वो भावद्रढ करनेकी मकारका अर्थ ठीक ठीक समजना जाते स्वरुप ज्ञान होवे.

आपकी आत्मा समजेपे स्वतंत्र समजेतो " अकेलीयेहों ' एसा जोप्रणवके प्रथम अक्षरका अर्थ है वो ठीक नहीं समजे. नमें काहुका सेष हौं, न स्वतंतहौं यह अकारार्थसें द्रढ करना.

द्वीतीयपद उकार ओर के शेषी नहि करके कहता है. फीर भी हम स्वामीके भयेपे, देव वा मनुष्योंके दास बने, उनका भय लालच भी रखेतो उकारका अर्थ वृथा समजे. स्वामीके हि लीये आपसको समजना.

नमःपरते स्वामीपें हि रक्षणका भार धरेपर, अपने रक्षणके लीये आप वोजा वहेतो वो अर्थ क्या समजे ! स्वामीके भरोसे हि रहना. ओर उपायोमें नहि पडनेको हि नमः को ठीक समजना.

नारायण कहेतो जीवोकी गती नारायण है फीर भी माता पीता पुत्र भ्रातामें वो भाव रहेतो वेसे हि नारायण सर्व विध बंधु है सत्य है यह ठीक न समजे गतीभर्ता शरण सुहृद सर्व मेरा वो हि है. यों द्रढ करना.

आय कहे तो कैंकर्य चहना फीर वीषयमे चपलता नहि हि रह

नीचाहिये. सहज कैंकर्य ही प्रीय भोग लगना चाहीये वा लीये आ-यको ठीक समजना.

या प्रकार प्रणवतें तत्व, नमः तें हीत ओर नारायणतें पूरुषार्थ ज्ञान मीलावे वेसा अनुष्टानी बनेसो वाका ठीक अधिकारी, वो ठीक प्रपन्न है. वाका प्रपत्तिमें अधिकार सिद्ध भया. इति.

अर्थ द्वितीयरहस्य–द्वयमंत्रार्थ.

द्वयमंत्र–श्रीमन्नारायण चरणौ शरणं प्रपद्ये ।
श्री मते नारायणाय नमः ॥

रहस्यार्थ पदवीके उपरसें.

द्वयमंत्र–जो मुल मंत्रमें तत्वहित ओर पुरषार्थ कहाहै वाको स्पष्ट करता है. वामें दो वाक्य है. एक में उपाय कहा है वाकानाम पूर्व-खंड दूसरेमें फल कहाहै वो उत्तरखंड उपाय शरणागतीका है. फल नित्य कैंकर्य मागा है.

श्रीमन् प्रथम शब्द है. सर्व कोई समाश्रय हो सके, एसी सर्व-को समान प्रियकर जगतमाता वाके वक्ष स्थल में हि सदा बीराज-मान रहती है. वोसीफारस करे वाके द्वारा शरण जाना नारायण कहेतो असदृश कल्याण गुणवाले जामे वात्सल्य स्वामीत्व सौशील्य सौलभ्य आदि खास गुण है, जाते शरणको शरणागति करना सुगम है. वो सर्वेश्वर है. चरणौ शब्दतें वो शरण्यकी करुणा बढे वालीये आश्रय स्थान वो पुरुषोत्तम के दो पाद कमल शरण कहेतो उपाय प्रपद्ये कहेतोमें जो अकिंचन हौं सो शरण्य के चरणौंको उपाय समज कर महा विश्वास पूर्वक वाके उपर अपना भार धरता हौ स्वामीकी शरणागति करता हौं यह एक वाक्य पूर्व खंड उपाय भया. अब वो शरणजो फल के लीये भये है सो कहते है.

(श्रीमते) जो उपाय दशामे सहायक स्वामी के साथ जानी मानी वाको फल दशामे भी संग हि सेवना चहते है. प्रापक सोप्रा-प्य दोनो समय दंपति, श्रीवाले नारायण दोनोका कैंकर्य साथ करना चहते है.

नारायण शब्दका यहां अर्थ सर्व प्रकार भोग्य, सर्व उत्तम सामग्री परिजन परीचारक स्थानादि युक्त, परम पद नाथ सर्व के शेषी है ही.

(आयकरके नमः) उनके हि लीये बना रहुं नित्य कैंकर्य करुं मेरे लीये न रहुं. कैंकर्य के विरोधी कोई कुछ कभी भी न रहे या प्रकार दोनो वाक्यको संग मीलाके कहेतो.

श्रीमन्नारायणके चरणकमलोंका अप्रच्युत कैंकर्य मीलानेके लीये श्रीमन्नारायणके चरण युगलके शरणमें जाता हौं.

—अष्टश्लोकीके उपरसें—द्वयका अर्थ

प्रथम मंत्रमें—श्रीमत् अष्टाक्षरमें नमः शब्दसें उपाय संक्षेपमें कहा है. वेसे हि फल भी नारायणके साथ (आय) लगानेमें कह दीया है. वो दोनो बीते उपाय ओर फल, यह दो वाक्य वाले द्वय मंत्रमें दो वाक्यसें खोलते है. दो वाक्य होने ते द्वय. दो बाते होने तें हि द्वय—उपाय कहनेतें शरणागति मंत्र करके कहते है. द्रावीड उपनिषत्में वाका अर्थ विस्तारतें कही है. आलमंदार स्तोत्रतें श्रीयामुनाचार्य स्वामीने द्वयार्थ कहा है. गद्य त्रयमें भी येहि अर्थ श्री भाष्यकारने समजाया है. वाके आधारसें यहां सारमें कहते है.

इश्वरको पत्नि है. वो इश्वरी इशान श्रुति सिद्ध वाका नाम (श्री) है जेसा पुरुष सुक्त वेसा श्री सुक्त श्रुति प्रसिद्ध है. वो हमको प्रथम आश्रय करनेको योग्य है. माता होनेतें वो पिता के साथ सदा है वातें वो श्रीमान् कहे गये है. वो पुरुषकार होती है. वातें वाका प्रथम स्मरण उच्चारण है.

नारायण वोहि गुणरुप विभव शीलयुक्त रहेपर शरण्य माने है वाते यहां खास सौलभ्य वात्सल्य कारुण्य औदार्य कृतित्व कृतज्ञत्व स्वामीत्व सुलभत्व सर्वज्ञत्व सर्व शक्तित्व परिपूर्णत्व ओर परम उदारत्व यह बार गुणोका अनुसंधान तो करना हि. वो गुणका लाभ शरणागतको मीलेगा हि ओर हमारी अर्थ सिद्धिके लीये उतनें गुण बस है. उनके " चरणोके शरण जाना " शरण जाना सो उपाय करना मनतें निश्चय करना की में, मेरे रक्षणका भार, ओर मेरे रक्षणका फल श्री पतिके हि हो, मेरे लीये नहि, एसा श्री वाले नारायण ! आप करों वालीयेमें प्रार्थना करता याचता पाउं पकडता पादमें गीरता हौं आपको आपके भारके साथ पदमें धरता हौं यह पूर्व खंड एक वाक्यका अर्थ पूरा भया.

अब " श्रीमते नाराथण " वो वोहि श्री ओर वोही स्वामी परंतु श्री विशिष्ट पुरुषोत्तम शेषी उभय लोक के नाथ, परमपद नीवासी दंपती जीनते बढके कोई नहि है. जो हमारे स्वाभावीक स्वामी है हि वो उनके (आय) कहे तो उनके लीये बने कैंकर्य करे वो सर्व देश सर्व काल सर्व अवस्थामें उचीत ओर सहज प्राप्त होवे एहि चाहत येहि प्रार्थना है ओर वामें अभि जो विरोधि है सो कोई कभी भी न रहे जाते मे मेरे लीये हो रहा हौं वोमे, मेरा,मेरे लीये, यह जावे, परिपूर्ण निर्ममत्व आवे कहेतो अविद्या कर्म वासना रुची प्रकृति संबंध वो सर्व रहित सदाके लीये बनु यह नमःका अर्थ है. वो नमः कहके यहां फलके विरोधीयोका निरसन मांगा है.

में श्रीके साथ आत्मेश्वरका अशेष दासत्व, अप्रतिहत जेसे कर सकों तेसा निर्भर होके नित्य कैंकर्य करनेको प्रार्थना करता हौं ओर वालीये, जगत् माता के युक्त जगत् पिता इशाना युक्त ईशके जो आश्रय करनेके योग्य गुणशाली श्री हरी है उनके चरणकमलको इष्ट उपाय समजकर आश्रय करता हौं यह द्वयका समुदित अर्थ भया.

द्वयमें जो प्रथम श्री शब्द है वातें पुरुषकारत्व समजना (मान्) शब्दतें वो नित्य स्वामी साथ रेहेने वाली है करके समजना—नारायण उचीत उत्तम गुण युक्त है. " चरणौ " तें दीव्य साकार कहा है. " शरण " तें उपाय कहा है. जो कर्त्तव्य है सो " प्रपद्ये " तें कहा है " श्रीमते नारायण " दोनो मीलके परम प्राप्य है, ओर वामें नारायण स्वामी है वाके पास " आय " तें कैंकर्य प्रार्थना कहि. ओर " नमः " तें विरोधीका निरसन करनेको याचनाकी एसे दस शब्दसे दश अर्थ प्राप्त भये है. इति.

अथ त्रतीय रहस्य—चरम मंत्रार्थ.

चरम मंत्र—श्लोक.

सर्व धर्मान् परित्यज्य, मामेकं शरणं व्रज ।
अहंत्वां सर्व पापेभ्यो, मोक्ष यिष्यामिमाशुच ॥

अर्थ—सर्व धर्मोका परित्याग करके मेरे एकको शरण पकड
में तो कों सर्व पापोंतें मुक्त करुंगा शोच नहीं कर.

प्रथम रहस्यमें एक वाक्य है, द्वीतीयमे दो त्रतीयमे तीन वाक्य है. प्रथम रहस्य मे तीन पद है, द्वीतीयमें छ पद है यह त्रतीय रहस्यमें बारे पद है.

रहस्य पदवीके आधारसें वीवेचन.

अथ—मुल मंत्रमें ओर द्वय मंत्रमें जो उपाय प्रकाशीत कीया है वो यहां दीखा ते है ओर अधिकारी अकींचन होतो बस है ओर वाको अपेक्षा नहि है. एसा आज्ञारुप शास्त्र वचनसे श्री मुख भगनका कथन है.

यह मंत्रमें प्रथम पदमें उपाय करनेका सो कहा है, मध्यप्रद फल प्रतिपादक है. ओर उत्तर वाक्य कृत कृत्यता दीखाने वाला है.

पूर्व अर्धमें अधिकारीका कृत्य है. उत्तर अर्धमें स्वामीका कृत्य है.

" सर्व धर्मान् परित्यज्य " सर्व धर्मका परित्याग करके " कहे तो आपके दे दीप्यमान चरण युगल विना अन्यका नहि वरण करना येहि अभिमत उपायको स्वीकारनेके निश्चयवाला ओर उपाय धर्मकी अपेक्षा भी वाको है ही नहीं जो उपाय सो ॥ मामएकम् ॥ में एकजो सुलभत्व अ दि गुणवाला हों वो हि वस है ओर की अपेक्षा मेरेको नहि है, एसा तुम द्रढ करना सर्व फलप्रद सनातन धर्मरुपमै हौं " वाका शरण व्रज " शरण कोपकड महा विश्वास पूर्वक भारको अर्पण कर.

" अहंत्वां " मेंतोको में भारको स्वीकारने वाला सर्व शक्तिमान समर्थ ओर, तुं भार धरने वाला, धनकी राह चातक देखे वेसा मेरे में हि आशा वाला एसा तो कुं " सर्व पापेभ्यो " सर्व पापो तें, " मोक्ष यिष्यामि " मुक्त करुंगा कहे तो, सर्व कैंकर्य के विरोधीका निःशेष क्षय करुंगा.

॥ माशुच ॥ शोच नहि रखना, में उपाय, हिन हौं वो अवस्था अव नहि रहिनीसंशय सुखी रहे, की हमारा काम वन गया

अष्ट श्लोकी उपरसें.

अष्ट श्लोकीमें पूर्वार्धमें अकिंचनको शरणागति करनेका कहा है उत्तरार्धमें अनिष्टकी निवृत्तिरुप पुरुषार्थका प्रतिपादन कीया है.

गीताजीमें यद्यपी कर्मयोग, ज्ञानयोग; ओर भक्ति योग, भगवानने अपनि प्राप्तीके लीये उपाय दीखाये वो परम धर्म रहे पर जीनतें वो ठीक न वन शके एसा लगे वो लोक भले " सर्व धर्मान् " वहां कहेवो सर्वे धर्मोका भले हि " परीत्यज्य " उनका परित्याग करे वो मार्ग तेवो न चले, वो मार्ग छोड दे, उनकी कठीनताका

तव क्यों विचार करे, वो भले न वने एसे होने द्यो वीलकुल उनको छोड द्यो, वो विचार ही न रखो, वो हमतें नहि वनेंगे, ओर हमारा क्याहोगा एसा शोच भी, उनके त्यागनेमे मत रखो, भले तुम्हारे कीतने हि पापहो, तुमारेपर कितनाही उनका भार हो, तुम मेरे एकके शरणमोकोहिवीलगे रहेना एसा निश्चय करो की, आप हि हमको पार करो 'मेरे' कहेतो जो नारायण क्षीर सागर ते मथुरामे आये वो श्रीमन्नारायणके मे वोहि हौतुम साधुओके परित्राणके लीयेहि तुम लोकमें में आतारहताहौ. सौ शील्य वात्सल्यवालामें सारर्थीपर्यंत वनु एसा स्वभाववाला हौं. मेरा एकका शरणसो मेराहि तुं तेरा भार अव न रख. शरण समजके, निश्चय करके मे तेरेलीये वसहौं. एसा पूर्व खंड ते उपाय विशेष कह करके आज्ञा दी है.

अव उत्तर खंडमे नमः शब्द तें अनिष्ट निवृत्ति मांगी रहि वो करनेरुप फल कहेनेको, " मेंतोंको " करके कहेते है. मेभी निश्चय वाला हौ, सर्वज्ञ समर्थ हौं एसा निश्चय रख. अन्यका शेष नहि, मेराहि शेष जान कर ओर अकिंचन तथा अनन्य गतिहि मान कर, जो भगवान निरपेक्ष उपाय भूत वनते हे वो मेरे लीये वने, एसा विश्वास दृढ करके, कर्त्तव्यका भार मेरे पर धर दे. ओर आपको कृत कृत्य मान लेके जो करनेका रहा सो कर लीया. फीर तो मेरी कृपाकी ही अपेक्षा करना एसा तुं वाको ॥ त्वाम् ॥

मे जो अघटीत घटना सामर्थ्य वाला हों, स्वतंत्र निरंकुश चहा कर सकों एसा हो, सर्व विपयीक ज्ञानवाला, ओरका स्वामी हों ॥ कृपा तें प्रपन्नो को परतंत्र वनता हि हों, उनका भार वहेता हौ, उनका काम वंना देता हौं अर्थात् तेरे सर्व पापो तें तो को छुडानेके योग्य सर्व गुण मेरे में है. यह सव अर्थ " अहं " में है. आप एसे हि है सो तोको " सर्व पापो तें मुक्त करुंगा " कहेतो मेरीप्राप्ती के विरोधी मात्र तेरे तें दुर करवाउंगा. भले अनादि कालके संचित, पाप पुण्य कोईभी प्रकारके प्रतिवंधकहो. श्रीके द्वारा तुं शरण आया

है. सो में वो सर्वको हटा देउंगा. मेरी पूर्ण प्राप्ति मे एक भी विरोधी न रह सकेगा. "माशुच" शोच मत कर. क्रीयमाण प्रारब्ध संचीत सबका रस्ता हो जायगा. पूनरावृत्तिका प्रसंग हि नहि रहेगा फीर क्रोन पापका शोच, क्यों कर होवे ! न रहेगा.

श्रीमन्नारायणके चरणोकी शरणागति भईतो, भगवान सर्व पापो तें मुक्त करके नित्य कैंकर्य देगें परन्तु वालीये अंत बीचार जो अष्ट श्लोकी में अंतके श्लोक में दरसाये है सो यदां लिखके यह मंत्रार्थ के प्रकरणको पूर्ण करे.

वो श्लोक में श्री पराशर भट्ट स्वामी कहते है, ऐहरी, ! पापो के हरनेवाले, में संसारके दूःखोसें व्याकुल हों, मेरा स्वरुप स्थिति पृवृत्ति सर्व सदा तेरे हि आधीनमें है. तुं हि अंतर्यामी भीतर वसके सर्वका सदा नियमन करता है. यह संसारके दूःखोसे छूटनेको, कर्म योग, ज्ञानयोग, भक्तियोग, करके जो मोक्षके उपाय श्री गीताजीमें आपहिने कहे है वो, मेरे ते नहिं होसके एसा होनेतें ज्योंमें कष्ट पाता हौं. क्योंकी ओर उपायोका त्यजन ओर प्रपत्तिका आचरण करना यह एकभी मेरे वशकी बात नहि है क्योंकी कोईभी काम करनेको कर्तृत्व मेरे स्वाधिन नहि है. फीरभी आपकोहि उपाय स्वीकारे यह ज्ञान अनुष्टांन करे तो, आप सर्व करा देते हौं, तुम्हारे शेष ओर तुम्हारे वश होके, तुम स्वामीपे भार छोडके, निर्भर बने तो, तुम अप अपनि ओरतें बुद्धि देके, आपके लीये आपमें आप लगा रखतें है आप प्रपत्ति करा लेते है, ओर वाके फलमें सर्व विरोधीका निरसन करके आपका सर्व देश काल सर्व अवस्थाके उचीत नित्य कैंकर्य देते हौ, वेसा मेराभी करोगे एसा अब या बीचार तें या प्रकार द्रढ निश्चय वालामें होके निर्भय ओर निर्भर बनता हौं—इति— मंत्रार्थ संपूर्ण.

श्रीभतेरामानुजाय नमः

अथश्री मुळमंत्रा अधिकार १.

श्रीमान वेंकटनाथार्य कविता किककेसरी
वेदांताचार्य वर्योमे संनिद्धतां सदाहृदि
यदीय मनुसंधान मस्म दुज्जीवनामृतम्
तस्मै व्यापक मुख्याय मंत्राय ब्रह्मणे नमः

अस्मद्गुरुभ्यो नमः

श्री मूलमंत्रके साथ अनुभव करना चाहिये. स्फटीक तलमें निधि होवे, वेसे देशिक दत्त द्रष्टीसें सत्वस्थोका अनुसंधेय सारतम अर्थवाके स्थिर करणके साथ प्रतिपादित करते है. रहस्य तीन है. उनमें मुलमंत्र परमात्माकी शेषताका एक रसरुप जो परिशुद्ध आत्म स्वरुपादिक, उनका प्रकाश करके, वो द्वारा समस्त प्रतिबंध निवृत्ति पूर्वक पुरुपार्थ प्राप्तीमें रुची ओर त्वरा उत्पन्न करके, अधिकारीकी पूर्ती कर देता है. फीर या प्रकारके अधिकारीको फलकी उपेक्षा पूर्वक, उपाय विशेषका अनुष्टान प्रकार विस्तारतें द्वयमंत्र कहता है, ओर वेसे उपाय विशेषको चरम श्लोक द्रढ करता है.

यहतीनो मंत्रमें प्रत्येक शब्द करके ओर अर्थ करके दासत्व प्रकाशन करते है. तो भी एक एक अर्थ प्रतिपादन करनेमें उनकी द्रष्टी विशेष है. अर्थ सिद्ध उपायांतरते निरपेक्ष उपेयको मीलानेमे, नमः शब्द में कहे संक्षिप्त विरोधी, उनका निरसन, सो चरम श्लोक विशद करता है. यह तीनो मंत्र हमारे ज्ञान अनुष्टांन ओर फलके लीये होके, धारक पोषक ओर भोग्य होते है. नारायण आप हि अष्टाक्षर स्वरुप है. वो मुखमें प्रगट रहते है. देशीककी जीव्हा द्वारा शीष्यके हृदय गुहाका, अंधकार दूर करकें, पर शेष तैकरस परि

शुद्ध आत्म स्वरुपको प्रकाश करके, नामका लाभ देनेतें श्रीमत् अ-
ष्टाक्षर धारक होता है. उपायमे प्रवृत्ति करावनेका हेतु भूत जो ज्ञान
विशेष. वो मंद न हो जाकर उपासककी उपदेशकी पर्य वसान भूमी
चरम श्लोक पोषक होता है. सकृत उच्चारण करके परमार्थका हेतु
भूत होकर अनुसंधान ते कृतार्थ करनेवाला द्वयमंत्र भोग्य है.

यह रहस्य त्रयमे श्रीमत् अष्टाक्षरके रुषि छंद देवता वीज शक्ति
वर्ण विनियोग स्थान न्यास आदि स्वस्व संप्रदायानु गुण जान लेने
अष्टाक्षरका अर्थ वर्ण कठवल्लीमें ओर अन्य उपनिषत् धर्म शास्त्रोमें
नारायणात्मक, हिरण्य गर्भ वोधायन नारदादि वहु विध कल्पमें
वैभवके साथ प्रसिद्ध है. ओर मंत्रोकी अपेक्षामें भगवानके मंत्र जेसे
अधिक है, तेसे अनंत भगवन्मंत्रोमें व्यापकत्रय अधिक है. उनमे भी
मंत्रो में परममंत्र, गुह्योमे उत्तम गुह्य पवित्रोमें उत्तम पवित्र वेसा
यह मूल मंत्र है ओर वो सनातन है, सर्व वदेका सार भूत है. सर्व
अनिष्टका निवारक है. सर्व पुरुपार्थका साधक है. सर्व उपायोका
उपकारक है. सर्व वर्णोको स्वस्व अधिकारानुरुप हो करके, वैदिक
रुप तें, त्यों तांत्रीक रुप ते उपजीवन होता है. व्याप्य व्यापक सर्व
तत्वको कंठ तें कहनेवाला है सर्व मंत्रतें निरपेक्ष है. सर्व भगवन्मुर्त्ति-
को साधारण है. याको सर्व आचार्योंने ये हेतुओको लेके, संग्रह
कीया है. परकाल परांकुश विश्नु चित्तादि पूर्वाचार्योंने भी अति
आदर तें यह मंत्रका स्वीकार कीया है. वहुतरुषी महात्मा मुनी स-
नकादिकभी, अष्टाक्षरका आश्रय लेकर वैश्नव पदको पाये है. जेसे
सर्व वेदमें नारायण तें परकोई नहि है, तेसे सर्व मंत्रमें अष्टाक्षर तें
पर कोई नहि हैं. एसे वहुत वचन है यह मंत्र सरवेश्वर तें श्रीनारद
पाये. उन्होने वाका उपदेश पुंडरीकको कीया वाते वो धर्मात्मा
नारायण परायण हो गया अंतमुक्त भया. येहि मंत्र परकाल स्वा-
मीने सरवेश्वरको उपदेश दीया. यह प्रणव चतुर्थी रहीत रहेतो

सर्व वर्णवाके अधिकारी है. नमो नारायण कहेकर चंडाल मुक्ति पाया करके, कौशीतकी द्वादशी माहात्म्यमें नारद पुराणमें कहा है. ब्राह्मणादिक्रमतेयाका अध्ययन कीये तो पूरा अष्टाक्षर होता है. वैदीककर्म ब्राह्मणको ओर, तांत्रीक कर्म शुद्रको करनेमें यह उपयोगी है. अष्टाक्षर ओर द्वादशाक्षरयेहि मुख्य मंत्र है. वोप्रणव युक्त होतो वैदीक है. वाकेरहित होतो तांत्रीक है. प्रणव रहित स्त्री शुद्र भी जप शकते है. फल उभयमें समान है. जब प्रणव रहित होता है. तब प्रणवमें रहे सर्व अर्थ यामें आजातो है. प्रणव जब स्वतंत्र मंत्र होता है, तब बाकी एक मात्राका दोमात्राका तीन मात्राका अर्थ उपनिषदोमे नाना प्रकारप्रतिपादन करते है. कार्य कारणरुप परमात्माका वाचकभी वाको कहा है. आत्म हवीका परमात्मामें अर्पण करनेकाभी येहि मंत्रमें अर्थ करते है यामे प्राधान्यतो स्वरुप ज्ञान है. ओर वाका शेषत्व अनुसंधान मात्र उपजीवन है. एसी भी योजनाकरते है. आत्मा परमात्माके संबंधका प्रतिपादक शांडील्यने कहा है.

यह प्रणवमें अकारार्थ विष्नु जगतका उदय रक्षा प्रलय करने वाला है मकारार्थ वाका उपकरण है, उकार तें वो अन्य अर्थ नहिं है एसा प्रणवका अर्थ तीन वेद्का सार भुत करके पूर्वाचार्यो कहगये है. यह प्रणवके तीन अक्षर तिन वेद्का सार है एसा श्रुति स्मृतिमें कहा है. अष्टाक्षरके शरीरमें अंगभुत प्रणव है प्रणव तीन अक्षर अ, उ, ओर म्, में अ आधार रुप परमात्माका नाम है. अकार समस्त शब्दका मुल स्वभाव ते है. ओर परमात्मा सर्व शब्दका वाच्य स्वभावतें है. या प्रकार अकार ओर पर ब्रह्मको वाचक वाच्य संबंध है. परमात्मा सर्वका सर्व विध कारण है सकल जगतका निमित्त उपादान कारण भया तो वा में सर्वज्ञ सर्व शक्तित्वादि गुण वर्ग आपहि सिद्ध भये. वो अकारका अर्थ भया. अकार वि-

ष्नुका वाचक है एसे वहुत प्रमाण है. अकार भगवान नारायणका प्रथम नाम है. वो पहिला कहा तो मंगला चरण हो गया एसा निघंटु में भी प्रयोग है.

या प्रकार व्याकरणसें हि यह अकार सरवेश्वरका वाचक ठहराती, रक्षण प्रीणन आदि अर्थ भी धातुसें वामे सिद्ध होते है. ओर वातें सर्व रक्षक वाका अर्थ स्पष्ट नीकलता है. आचार्य लोकने भी वेसा हि अर्थ कीया है. यह रक्षत्व सो सर्व विषयीक समजना रक्षाका प्रकार विषयोके अनुगुण, वीविध होता है. वो निरहेतुक रक्षक होनेतें सापराधी संसारीको भी मोक्षादी प्रदान करनेवाला, स्वतंत्र सरवेश्वर स्व संकल्प सिद्ध प्रपत्ति आदि व्याज करके होता है. नित्यमुक्तोके विषयमें निरुपाधिक सहज कारुण्य करके स्थिति स्थापन रुप रक्षक सदा रहता है.

एसा सर्व रक्षण दिक्षित सरवेंश्वर लक्ष्मीके साथहि है एसा वेद वेदांतमें कहा है. वाते भगवानके वाचक शब्दतें लक्ष्मी अंतर्गत हैहि. जेसे स्वरुप निरुपक धर्म–सर्व विग्रामें संग अनुसंधान कीये जाते है तेसे याकाभि संग अनुसंधान करना. भगवानके साथवो, भास्करके साथ प्रभाकी नाइ रहती है करकेभी प्रमाण है. जेसे भूषणादि अतिशय करते है, वेसी लक्ष्मी सर्वातिशय करनेवाली सदा संग है. याहि प्रकार नारयाणका सपत्नीक अनुसंधान करना. द्वय मंत्रमें तो पत्नि संबंध कंठते कहा है. गद्यमें भी कहा है. नार शब्दमें वाका समावेश है हि. कीर यहां प्रणयमें जो अकार है. वो नारायणके लीये है तोवो नारायणके साथ चतुर्थी होनेतें, अकारमें भी लुप्त चतुर्थी समजनी. परमात्माको आत्म हवी समर्पण करनेका है तो मकारके साथ अकारका संवंध वेसेहि सिद्ध होता है. प्रणव धनुष है शर आत्मा है ब्रह्म वाका लक्ष्य है. वाको अप्रमत्त रहे कर वेधना जाते शर तन्मय हो जाय. अर्थात् मकार अकारके लीये होके

बना रहे, वोहितो अकारके साथ चतुर्थी भयी.

प्रणवका अर्थ परमात्माकी शेषताका एक रस स्वरुप आत्मा है, येहि प्रतीपादन करता है. वो तादर्थ चतुर्थी भयी. याते आत्मा परमात्माका शेषशेषी भाव प्रकाश होता है वातें निरुपाधीक सर्व शेषी सरवेश्वरका यह आत्मा, निरुपाधीक शेष है, एसा अनुसंधान करना. यह अकारका अर्थ भया. में मेरा, एसा आपके लीये अहंकार ममकार छोडके, में मेरा नहिं, में तेरा, यह अनुसंधानहि उज्जीवनरुप है. जो शेषत्वमें निश्चित भया वाका सर्व पूर्ण भया. ईश्वरका सर्व शेषीत्व है तो में ओर मेरा जो होवाका वो शेषी भयाहि. उभयका एक शेषी है. ओर वो सपत्निक है. हमारे शेषी उभय है. यज्ञमें हवी अनेक देवताके उदेश तें होता है, वेसे हम उभयके उपयोगके लीये है.

मध्यम अक्षर लक्ष्मी वाचक भी कहा है. वहां अर्थ स्पष्ट होता है की अओरउके लीयेम है नारायण ओर श्रीके लीये जीव है. दोनो का अतीशय करनेको है. नहिकी उनकी कोई न्युनता पूर्ण करनेको है. शेष कहेतो दासहि भया. दास करके वाका अतिशय होता है. शेषी, स्वामीभी तो वो है. हम उभयके दास है.

श्रुति प्रयोगतें मध्यम अक्षर " उ " को " एव " कारमें लीये तो दंपतीके हि लीये एसा अर्थ भया, वाते फीर अन्यका शेष होहि नहिं सकता है स्वरुपतें वो विरुद्ध बात है.

या प्रकार हम देवतांतरके वा मनुष्यके शेष नहि परंतु भगवानके शेष भयेतो, वाके अंभिमतके शेषतो भयेहि. वातें भागवत शेषत्वमें दोष नहि है करके कह चूके है. क्योंकी भागवतका शेषत्व भगवानके लीये है वो आप भोक्ता नहिं बनबेठते. स्वामीके उपयोगपें हि लगाते है, वो भगवानको अधिक इष्ट है, तोवो उत्तम उप-

योग शेषत्वका भया. जब स्वरुप सिद्ध शेषत्व भयातो वो सदाके लीयेहि ठहरा. हमारा सबंधहि भगवान तें अप्रथक सिद्ध है तो शेषत्वभी वेसाहि भया. हम प्रथक द्रव्य है परंतु शरीर करके सदा शरीरी द्रव्यके साथ है. हमारा स्वरुपहि वाके युक्त है. यह उकारका अर्थ है.

अब तीसरा जो मकार है वो जीवात्माका वाचक है. भगवान शेषी सो कोनका! शेषत्वकोनमे रहा है! जीवात्मामें. स्वामीका शेषत्व रहा है वो जीवात्मा शरीरमें व्यापक है. चोवीस अक्षर चोवीस तत्वके वाचक है जो प्राकृत है, ओर पचीसमा अक्षर मका वाचक पचीसमा जीव है एसे प्रमाण है कवर्ग सो पंचमहाभुत, च वर्ग सो ईंद्रिये, ट ओरत वर्ग तें ज्ञान गंधादि. ष करके मन, फ करके अहंकार व महतत्व भ प्रकृति ओर म जीव, जो चोवीसमें फसा है. वा तें वाका रक्षण करनेवाला जुदा हि भया ओर वो इश्वर है, एसे जीव ईश्वरका भेद है. मकार सो नारायणमें नार शब्द करके हि विशेषण है.

व्याकरणसें देखे तो " मन् वीचारना, जानना धातु उपर ते ज्ञाता एसा अर्थ है. ज्ञान गुण ज्ञान स्वरुप में होता है. आत्मा ज्ञान स्वरुप ओर ज्ञानवान है. मुक्त दशामें वो वेसा हि दीखता वना रहेता है. तो वेसा हि वाका वास्तविक स्वरुप है, यह सिद्ध भया. तब वाका ज्ञान उपाधि रहित होने ते, संकोच विकाश रहित सदा एक रुप वना रहता है. आत्मा के परिशुद्ध स्वरुपकी हि भावना बनी रखनी एसा उपासकोके लीये कहा है. यह एक वचन जीव वर्ग करके है. वा तें आत्मा मात्र दास भुत है. भगवानके सब शेष है वो कोन! " अहं " वाको शेष समजना वो अहंसोहिदास, स्वतंत्र नहिं. परमात्माको अर्पण होनेवाला आत्माको कहा है तोवाको अहंभाव चा-

हिये तवहिवो अर्पण होगा. फीरवो परमात्मा रक्षक करके माना गया वो कोनका ! अहंका, वो मुक्त भया कहेतो. वाके उपरके मलतें मुक्त भया अर्थात् स्वरुपतें निर्मल है. तवहि तव वाको शुद्धात्मा कहेते है. वो अणु है. अभी प्रकृतिमें वो है वातें वातेंभी सुक्ष्म है एसा प्रकारका अर्थ है. या प्रकारप्रणवका अर्थ भया

अव "नमो नारायणाय" में नमः शब्दका वीचार करते है यह नमः शब्दमें दो अक्षर न ओरम है वामेम अक्षर पूर्व प्रणवमें जो मकहा वाके हि लीये है. वो प्रणव आत्माकोही प्रकाश करता है, याको षष्ठी विभक्ति लगी है. मकहेतो मम मेरा वाके आगे न लगे तो, मे मेरा नहि, मेरे लीये नहि, एसा अर्थ होता है. पणवमें उकारसें अन्यका नहि करके कहा सो यहां ओर स्फुट भयाकी, मे मेराभी नहि. दो अक्षरसे मृत्यु सोमम, ओर तीन अक्षरतें नित्यता सो नमम करके कहा है. जव मेंभी मेरा नहि तो फीर मेरा करके जो माना है, वोभी तो मेरा कहांसे ठहरा ? जाका में वाका मेराभी मेरा दावा छुटा वाकाहिमें ओर मेरा भया. या प्रकार अहंकार मम कार गया. वोहि संसारका मूल रहा, सो छेदन भया. यद्यपी यह कहने कोटीक है. परंतु देहमें अहंकार ममकारका भ्रम तो देह रहेगा वहां पर्यंत नहि छूट सकेगा. वो तो सुक्ष्म शरीरको त्यागनेके, साथहि छूटनेका अभि जो भया सो विवेक ज्ञान, मंत्र औषधीसे मीला.

मेरा न रहा वहां अन्यका होनेका संभवहि कहां ! निरुपाधिक स्वामीकामें हौं यह तात्पर्य नमः कहनेमे है. जीव ओर वाका शेप, सर्व निरुपाधिक शेषी सरवेश्वरका है. वाके लीये वाने सोंपा है. इश्वरकी नित्य इच्छासे जीवमें वाके गुणभी तो है, चाहे वो अशुद्ध दशामें हो, चाहे शुद्ध दशामे अनित्य शरीर आदीभी कर्म मुल हो कर, वोहि कर्म भोगानेको देता है. ओर यहभी वाकी एक प्रकारकी नित्य इच्छा है जो यह कर्मका यह फल है. या प्रकार नमः करके

हमारा स्वातंत्र नहि है करके सिद्ध भया. चेतनके स्वातंत्रकी निवृत्ति कहे तो, वामें कर्तृत्व तो स्वरुप सिद्ध है. वो ज्ञाता कर्त्ता भोक्ता है ही परंतु वाका वो कर्तृत्व निरपेक्ष नहि, सत्तादि परमात्माको लेके है. वेसाहि वाका कर्तृत्व है वो वद्धावस्थामें या मुक्तावस्थामें हो, फेर बुद्धि पूर्वक प्रवृत्तित्व यामें है सोभी इश्वरदत्त करण कलेवरके आ-धीन-इश्वरप्रेरक वासहकारी हो करकेहि है. अकारमें कारणत्व ओर रक्षकत्व करके कहा सो नमः के साथ लगेगा. वहां चतुर्थी है. वोहि यहां अर्थ सिद्ध है. मे ओर मेरा जव मेरे लीये नहि है तो, कोनका कोनके लीये यह प्रश्न रहा. ओर वाका वोहि उत्तर भयाकी वो वो निरुपाधीक शेषीका है. तवहि तो वो सरवेश्वरको सर्वका शेषी रक्षक कहा है. सो मेरा मेरेकाभीसहि, तवहि जीवके रक्षणके लीये वोहि तजवीज करता कराता है. तवहि जीवका कर्तृत्व वाके आधिन ठह-रता है. ओर वो वाकी इच्छानुगुण कर्तृत्वका उपयोग करे तवहि वाका रक्षण होवे, नहि तो वातें केसे बने. चेतन चाहे सो करे परंतु जो फलके लीये वो करे सो फल वो कभी वाकी इच्छानुगुण कीये तवही देता है. इच्छा पालनसें प्रसन्न होता है हमारी कृती सफल करता है. स्वातंत्र जीवका शास्त्रके साफल्यके लीये कहा जीव चाहे वेसी इच्छा करे तोभी फीर शास्त्रतें स्वामीकी इच्छानुगुण शास्त्रके परतंत्र जीवका कर्तृत्व ठहरा है वाते अंतीम वाका कतृत्व परमा-त्मायतहि ठहरा. वेसाहि सूत्रमें निर्णय कीया है. या प्रकार ओर वस्तु परजीवका स्वतंत्र शेषत्व रहता है सोभी निरुपाधिक शेषी सरवेश्वरने स्वार्थ दीया है. जेसे राजा नोकरोंको अपनी सत्ता सामग्री वा वाको स्वतंत्रता अपने कार्यके लीये देते है तेसे नोकरको वो सत्ता ईष्ट है, दासत्व प्रिय है, क्योंकी वातें आपमें वो प्रभुता आती है वोहि न्यायसें यहां जीवको स्वामीका दासत्व इष्ट होना हि चा-हिये. या प्रकार हमारा स्वातंत्र नहि कहोकी, परमात्माका पारतंत्र

कहो वो एक बात है पूरी वात है, ओर वाते नमःका तात्पर्य जीव परमात्माका स्वाभाविक दास, स्वरुपतें वास्तवीक परतंत्र है यह ठहरा-तो वो ज्ञान हमको बना रहे तवहि नमःको ठीक समजे, हम वो अर्थका लाभ लेने वाले भये. अव यामें फीर भगवान हमाराभी चहा करे तो सतिका चहा पति कृपाते करे वेसा, भक्ताधिन भगवान कहे जाते है. वाते वाका शेषीत्व वा हमारा दासत्व परतंत्रत्व तूटता नहि. वो हमारी वडाइ हमारी इच्छाकी पूरतीके लीये नहि स्वामीकी इच्छाकी पूरतीके लीये है. वाकी प्रसन्नताके लीये हेतु है. ओर तव ही भागवत पारतंत्र्यभी उचीत माना गया है. हमसे जो प्रेम पार-तंत्रता होती है सो उनके गुणतें प्रसन्न होकर हम दासत्व आप प्रेम परवशतासें स्वीकार करतें है, स्वामीमे वो भागवतोमे हमतें बहु अधिक प्रेम देखकर हम उनको मान देते है. वो वास्तवीक स्वामीके उपरके हमारे प्रेमको लेके है. ठीक देखे तो अंत हेतु स्वामीपरका प्रेमहि है.

हम शरण वरण करते है वो येहि अर्थ अमारे हृदयमें ठीक उत-रनेकी हम वस्तुतः अणु अकिंचन बद्ध मुढ है. उनके रक्षण के हेतु स्वामी वीना कहे चहे केसे उपाय कर रहे है आप उपाय भये है तो हम वाको उपाय करकेहि पूरे स्वीकारे नमः का दूसरा अर्थ नमना-आत्मार्पण करना, उपायरुप स्वामीको माननासो या प्रकार फलीत भया. वो वाते पूरा वहां होता है. हमारे रक्षणकी वाकी इच्छा तो स्वाभावीक है. वाको हम आत्म निक्षेप करके अधिक अनुकुलता कर देते है. तोवो तो श्रेयस्करहि है. चरम श्लोकमें आप आपतें कह रहे है, सीखा रहे है के तुम्हारे कल्यानके लीये तुम स्वतंत्रपन स्वतंत्र कर्तृत्व छोडो. मेरे परतंत्र बनो अर्थात् तुमारा भार मेरे पर धरो तुम वो वहन करते दुःखी होते हो में वहन करके पूरे सुखी कर देउंगा यह वाकी परतंत्रता स्वीकारनेका लाभ है वाते येहि परम

उपाय कहा गया है, माना गया है, कीया जाता है. शरण वरण करना सोहि पाउं पडना नमस्कार करना, साधारण नमस्कार मात्र नहि, वो वेसे भावसे नमस्कार एसी भवीष्यकी कबुलतके साथ नमस्कार होना चाहिये. एसे नमः कहतेमें यह सब भाव आये वो वाका पूरा अर्थ है. वो यह शास्त्रोमें पूरे वीस्तार तें कहे है समजाये है. न्यास पंचांग युत कहीसो या में ते फलीत होती है. वाते नमः का पूरा रुप खूलता है अनुष्टान करनेको वो संपूर्ण समजाता है. यह फीर ठीक तव खुलता है जब वाके साथ नारायणाय शब्दका अर्थभी लाया जाता है यह उपाय जो कीयासो वो फल मीलानेको है. प्रणवतें शेषत्व, नमः तें पारतंत्रत्व स्वीकारनासो नारायणके कैंकर्यके लीये है एसा पूरा श्रीमत् अष्टाक्षरार्थ है.

नमः शब्द, कोन, के लीये नारायणाय नारायणके लीये जो प्रणवमे अकार वोहि नारायण है वो अक्षरका असाधारण नाम नारायण है शरणागति करनासो वो नारायणके लीये अर्थात वाका कैंकर्य करनेको, अकारमें जगत कारणत्व रक्षकत्व शेषीत्व कहा है. वो नाराथण शेषी रक्षक है यह शब्दमें वो सर्व अर्थ स्पष्ट है जेसे विश्नु गायत्रीमे अकारका अर्थ स्फुट है. अकार वो वीश्नु वो वासुदेव वो नारायण प्रत्येक शब्दमें जो जोरवास अर्थ है वो सर्व गुण विशिष्ट वो शेषी है.

सर्व ब्रह्मविद्यामें कहे उपास्य देवके नाम वहां वहां भिन्न दीये पर, वा सर्व नामका ठीक नामी श्रुतिहि समजाति है कि यह नारायण है वो वेदांतकाहि निर्णय है. ब्रह्मा शिव आदि शब्दका परत्वके लीये उपयोग कीयेपर, वो वो देवता वीभूती है, वेसी सर्व विभूति विश्वमात्रका नाम " नार " ओर वाका अयन सो नारायण है. ओर वो सर्व शरीरका शरीरी है. नारायण शब्दका प्रभाव शास्त्रमें कहा है. फीर वो श्रीमत् अष्टाक्षरके तुल्य सर्व फलप्रद है.

यहां हेय प्रत्यनिक ओर कल्याणैकतान, यह वाके दोलींग, ओर लीला ओर नित्य विभूती उभयका वाका स्वामीत्वभी समुजा जाता है. देव भूषण आयुध परिजन परिच्छद द्वारपालादि भेद वाके साथ है हि. वो वैकुंठका नायक है. तेसे जगतका कारण है. वातें हि हमारे लीये, उपाय ओर उपेयभी येहि नामसे समझा गया है. वो अर्थभी वामे है. वो सर्व वो शरीरीके स्वभाव सिद्ध गुण हैं. जेसे वो ज्ञानानंद स्वरुपतें कहा गया है. तेसेहि स्रष्टा नीयंताभी वोहि है करके शास्त्रमें नारायणकोहि कहा है. नरतें तत्व उत्पन्न भये वाते उनको नार कहते है, ओर उनका अयनसो नारायण है. 'न' कहेतो नहिं "र" कहेतो क्षयसो 'नर' चेतन वर्ग उनका समूहसो नार, उनका आधार वो सब वाके आधिन एसे स्वाधीन त्रिविध चेतना चेतन, ओर उनके स्वरुप स्थितिके भेद है. करके अयन शब्दसें सिद्ध होता है. नारोका अयन कहेतो अयन शब्दसें, मातापिता बंधु गुरु निवास शरणभी ठहरा. वाको वेसा श्रुतिमे कहा भी है. फीर वो आप वस्तुतः ज्ञानानंद घन अनंत स्वयं भोग्य होनेतें उपेय फलहै. नारका अयन आधार सो या प्रकार फलरुप भोग्य विश्वाधार है करके वहुवचन है. तीन लोकका धारक नियंता प्रवेश करके उनमें रहने वाला पुरुषोत्तम है. करके कहा है वोभी अयनका अर्थ है. सर्वका अयनसो पर फीर वो सर्वकों वाके अयनभी कह सकते है वाते वो सबमें रहा है एसा सुलभभी ठहरा. वेसेहि सर्वके भीतर वो ओर, सर्व वाके भीतरभी करके अंदर बाहिर दोनो प्रकार भया वेसाहि श्रुति वचनभी है. अणुसें अणुसो अंतर्यामी–वीभुसे विभूसो वोहि सर्व बाके एक अंशमे है. या प्रकार वोहि ठहरता है. प्रणवमे शेषका शेषी जीवके लीये कहा है. नारायणमें कार्य कारण करके जगतके लीये कहा. नरसो नेता, नरसो सदा सर्व प्रकार एक सरीख गुण शक्तिवाला, वा ते सब भये उनका नाम नार, उनका

फीर अयनसो नारायण एसे 'नर' शब्द वाको लगनेतेंभी अनेक अर्थ होते है. फेर नरोका अयन कहेतो उनका वो इश्वर—नियंता आधार पोषक स्रष्टा प्रवेष्टा सर्व काम प्रदाता, कृपातें साथ रहने वाला एसा सर्वदासोका वो स्वामी है करके वाका अर्थ संहितामें कहा है. नार शब्दमें वाके विग्रहकोभी लेके वाला अयन वेसावो परमपदनाथभी ठहरता है. सर्व शरीरी वातें सर्व शब्द वाच्यभी वोहि ठरहता है. देवतांतर सोभी नारहि यह उनका अयन है एसा सुवालोप निषत्में कहा है. सर्व वाके शरीर वाते ठीक तो वोहि "त्वमेव माता च" करके ठहरातो वाका सर्व विध बंधुत्व, वाके सबंधतें सर्व सबंधी वोही मुख्य सबंधी एसाभी कहा जाता है. वो प्रसंन्नतो सर्व प्रसंन्न वो कोपे तो सर्वका कोप. सर्व आकार वाके—वो एक वहु भया है—वाकी आज्ञाका उल्लंघन कीये तोभी परिणाम वाके वश है. एसे असंख्य वचन है. वाते नारायण शब्दके अर्थ कोये तो सर्व सर्व शास्त्र तेभी पुरती नहि है वाते अव आयके लीये कहते है.

साधारण आय शब्द नमः के साथ आता है. नमस्कार नारायणके लीये है. वहां विशेष अर्थ नहिं. वाक्यके अर्थकी पुरतीके लीये आय शब्द लगाया जाता है. सर्व मंत्रोमें यह प्रयोग साधारण है. परंतु यहां जव नम शब्दका अर्थ समर्पण कीयातो वाका हेतुहि यह भयाकी वाके उपयोगमें हम आवे. शेषकी सफलता तवही जव शेषी वाका उपयोग करे. वो अपनी सेवामें स्वीकार करे. एसे भावसे अर्पण होनेका येहि फलकी हमको सदा अपने कैंकर्यमें लगाय रखे एसे यहां संप्रदानके अर्थमें चतुर्थी है. ओर वातें नित्य कैंकर्य चाहा है नित्य कैंकर्य मांगा है. वोहि तो परम पुरुषार्थ है वाहितें कृतकृत्यता है नारायण शब्दके अनेक अर्थ. कहे अभी वषुत वाकी है. उनमेंतें यहां समुह करके वताने योग्य सो वताते है. वो सर्वके लीये प्रमाणोक शास्त्रोमेंहि कहे है. उन सर्व लक्षणका यहां नारायण कहेतो

कोन केसा है सो हम ठीक समज सके एकत्र सार है रहस्य भोग्य है. देशीक दयाका फल है उनके ज्ञान श्रमका परिणाम हमारे लीये प्रत्यक्ष हस्तामलक है.

रक्षकत्व, सो स्वभाव सिद्धत्व, वो सब विषयीक, रक्ष्य वस्तुके अनुगुण, रक्षाके अनेक प्रकार बाहुल्य, सर्व रक्षत्व, सर्व प्रकार रक्षत्व, स्वार्थ रक्षत्व यह तो रक्षत्व लेके, अब वो सर्वज्ञ तबहि वेसा रक्षक बन सके बाते कहते हैकी. सर्वज्ञत्व सर्व शक्तित्व, अनिवार्यत्व, अनतिक्रमणीय, रक्षण संरभवत्व, परमकारुणीकत्व, अवरप्रतिक्षत्व, व्याज मात्र सापेक्षत्व, आश्रित सुलभत्व, विश्वनीयत्व, सापराध घटक आदि अनेक गुण विशेषणत्व, शेषीत्व, निरुपाधिक शेषीत्व, नित्य शेषीत्व सर्व शेषीत्व, अनन्य शेषीत्व गुण कृत पारार्थ्य, सपत्निक शेषीत्व, सम्याभ्यधिक राहित्य, आत्महवी उद्देश अर्हत्व, अचित्‌बद्ध मुक्त नित्यतें विलक्षणत्व परशेषित्व, हेतुत्व, स्वतः कर्तृत्व, शक्त्या धायकत्व, निरुपाधिक नंतव्यत्व, वशीकार्य साध्योपायवत्व, श्रुति स्मृतिरुप आज्ञावत्व, दंडधरत्व, सर्व जन समत्व, अविद्या हेतुत्व, अविद्या घनर्हत्व, आश्रितकी अविद्याको निवर्त्तकत्व, स्वरुप अन्यथा भावराहित्व स्वभाव अन्यथा भावराहित्य, सर्व नेतृत्व सर्व जगद्व्यापार लीलत्व, सर्व वेदांत प्रधान प्रतिपाद्यत्व, सर्पोपादानत्व, सर्व निमितत्व, सत्य संकल्पत्व, सर्व शरीरत्व, सर्व शब्द वाच्यत्व, सर्व कर्म समाराध्यत्व, सर्व फल प्रदत्व, सर्व विधबंधुत्व, सर्व व्यापकत्व, निरतीशय सुक्ष्मत्व, सर्वाधारत्व, स्वनिष्टत्व, सत्यत्व, ज्ञानत्व, अनंतत्व, आनंदत्व, अमलत्व, निरुपीत स्वरुप विशेषणानुक्त अनंतगुणत्व, नित्य मंगलविग्रहत्व, परव्युहाद्यवस्थावत्व, सत्यावतारवत्व, अजहत्स्वभावत्व, अप्राकृतावतारत्व, अकर्मवश्यावतारत्व, अकाल नियतावतारत्व. आश्रीतार्थ गुण परियाशवतारत्व, सर्वावश्य शुभाश्रयत्व, सर्वावस्थ लक्ष्मीसहचरत्व, दिव्यभुषण आयुध महिषिस्थान

परिजन, परिच्छद द्वारपाल पार्षदादिमत्व, स्थुल शरीर विश्लेषकत्व, ब्रह्मनाडी द्वारप्रकाशत्व, तत्प्रवेशकत्व, ब्रह्मरंध्रोकादिहेतुत्व, अर्चिराद्याति वाहकत्व, नियोग कृतत्व, सुर्यद्वारादिनेतृत्व, अंडावरण प्रकृति मंडल अतिक्रमण हेतुत्व, विरजानदी प्रापकत्व सूक्ष्म शरीर विश्लेपकत्व, अप्राकृत देहप्रदत्व, दिव्याप्सर सत्कारादि प्रयोजकत्व, ब्रह्म गंध रसादि प्रवेशकत्व, नित्य मुक्त सत्कार विशेष हेतुत्व, ब्रह्मन पर्य्यंकारोहण पर्यंत आदरवत्व, परिपूर्णानुभव हेतुत्व, प्रधानप्राप्यत्व, सदेह विदेह वहुदेहकृत सर्व विध कैंकर्य प्रतिसंबंधित्व, अवाप्त, समस्त कामत्व, निरतिशय आनंदवत्व, सर्वदा अनुकुल स्वभावत्व, अत्यंतानुकुल भोग प्रदत्व, आश्रित विश्लेष असहिष्णुत्व, अनावृत्ति हेतुत्व यह तो प्रधानभूत ओर अन्यभी अवस्थाके अपेक्षित आश्चर्यत्व, यह सर्व गुण मंत्रमें क्रम करके वामें अनुसंधान करने.

यहां जो संग्रहीत है वेसे श्रीमान गोप्ता शेषी समाधिक दारिद्र शरण सर्व शरीर प्राप्य, सेव्य, साधुके भाव्य, प्राप्यभूत परमात्मा जाका है वेसे हम जीवात्मा अव जो अनुसंधान यह मंत्रमेंते करने योग्य गुण निकालते है सो बीचारे—श्रीमत् रक्षत्व, अनन्य रक्षकत्व, सर्वत्र सर्वदा सर्व प्रकार रक्षत्व, पुरुषाकारवत्व महा विश्वास संयोगीत्व, सलक्ष्मीदासत्व, नित्यदासत्व, निरुपाधिक दासत्व अनन्यार्ह शेषत्व, स्वयं प्रकाशत्व, स्वस्मैभास मानत्व, अहंशब्द वाच्यत्व, अणुपरिमाणवत्व, सुक्ष्मत्व, छेद्य छेदनादि अनर्हत्व चतुर्विंशतितत्व विलक्षणत्व, अमलत्व, इश्वर वदान्यत्व ज्ञातृत्व, आनुकुल्यादि योगत्व, परमपुरुषार्थ पेक्षार्हत्व; विनियोग योगत्व, कैंकर्य योग्यत्व, सर्व साक्षात्कार योगत्व. निरतिशय आनंद योग्यत्व, परापेक्ष कर्तृत्व, स्वोपाधिक स्वामित्व, भागवत शेषत्व, भागवत किंकरत्व, अनन्य उपायत्व, अविद्यादिमत्व, करुणादि सापेक्षज्ञान विकाशत्व संसारभयाक्रांतत्व अविद्यादि निवृत्ति सापेक्षत्व, अकींचनत्व, इश्वर सौहार्दा-

दिमत्व, सदाचार्य प्राप्तिमत्व सद्योपायानुष्टांनार्हत्व, उपाय निष्टत्व, महाप्रभाव भागवत्व, विशिष्टवेशेण सृष्टिसंहार विषयत्व, स्तवोवक्तृत्व, असंख्यातत्व, ईश्वर व्यापकत्व, ईश्वरनियाम्यत्व, इश्वर धार्यत्व, नियमपूर्वक संभावितेश्वर शरीरत्व, इश्वर रसलीला रसहेतुत्व, इश्वर भोगोपकरणार्हत्व, तदधिनगतित्व, तदधिन तत्प्राप्तित्व, ऐश्वर्य कैवल्य नैरपेक्षत्व भगवत्प्राप्त्यर्थित्व, सर्वाविद्या विनिर्मुक्तस्य आवीर्भूत स्वरुपत्व, सर्व प्रकार भगवदनुभवैक भोग्यत्व, निरतीशयानंदवत्व, भगवद् भोगार्थ भोक्तत्व ऐच्छीक विश्वादिमत्व, इच्छाविघातरहितत्व, ईश्वर लक्षण व्यतिरिक्त परमसाम्य अपुनरावृतित्व यह प्रधानभूत प्रामाणीक गुण शद्ध सामर्थ ओर अर्थ स्वभावतें हमारेमें है एसा अनुसंधान करे.

तीनोपदोका संक्षेप अर्थ ग्रहण करके विचारे तो,अन्यार्हशेषता, अनन्योपायता, स्वरुप करके अनन्य पुरुषार्थता यह सर्व प्रकार अष्टाक्षरमे कहे है.

श्रीमत् अष्टाक्षरमें चित् अचित् ओर इश्वरका भेद जीवोका भेद, शेष शेषी भाव आदि निरुपाधिक भेद, निखिल जगतका निमित्त, उपादानभूत परदेवता करकेभी सीद्ध होते है.

एसे अनुसंधान वाले जो जो गाममें रहते है. वहां वो महात्माके सत्संगका लाभ लेने वाले ग्रामवासीमेंतेंभी, यह भूल भरे वीचारभी निकल जाते है जेसेकी ईश्वर नहि है, निर्विशेप है, अत्यंत उदासीन है, ओर वाके समान है, कर्म विशेष करके इश्वरत्व आया है. कभी कर्मको परवंशभी होता है. तीन मूर्ती समान है, त्रिमुर्ति एककी है. त्रिमूर्तिके उपर परतत्व है. ब्रह्मा शीवमेंते कोइ इश्वर है स्वरुप परिणाम वाला है, निमित्त उपादान एकका नहि है. जीव इश्वर एक है. उपाधि सिद्ध उनमें भेद है. नित्य भिन्न अभिन्न वो दो है, जीव मात्र कर्माधिन है. कोईका नियत शेष नहि है, जड है,

ज्ञान मात्र स्वरुप है, नित्य मुक्त है. आरोपित भोग है, अकर्त्ता है, इश्वर विना वाका कर्तृत्व है. वो प्रलय पर्यंत रहता है मोक्ष हो वहां पर्यंत जीव भाव रहता है, चेतन एकहि है. जीव स्वनिष्ठ है. स्वतः प्राप्त है. कार्यत्व प्रसंग रहित है. कर्म मात्र उपाय है. पाषाण कल्प मुक्त दशा है स्वात्मानंदतें तृप्त है. अत्यंत स्वतंत्र है, इश्वरके साथ एक हो जाता है व्यापारादि रहित. विभाग अविभाग शक्तिमान हैं. आनंद तारतम्यवान है. व्यवस्थीत सालोक्यादि भेदवान एसे वाह्य कुद्रष्टि अनेक मतते, वेसोके सत्संगी व्याकुल फीर नहि रहते है. उन सत्य ज्ञानवान वन जाते है.

अव कोन विरोधी है सो कहते है. श्रीपतीमे विश्वासकी मंदता. ओर रक्षक ढुंढना स्वामीतें तकरार, अन्यका शेषत्व ब्रह्मादि देवोमें प्रावण्य, उनके भक्तोसें संसर्ग; न खानेका खाना, न सेवनेका सेवना वामे रुची रखनी, देह वोहि आत्मा है एसी भ्रांती, आत्मा स्वतंत्र है एसी भ्रांती, जन्म नाशका भय, असत् वृत्ति रुची, स्वार्थ परायणता, भागवत अपचार, अकिंचनत्वकी विस्मृति संसार वना रहे एसी वृत्ति, रुचि, शत्रु मित्र विभाग निरुपण ओरको वंधु गीनके उनतें लेना, ओर प्रयोजनमें रुची, परम प्रयोजनमें विमुखता यह सव हमारो नीष्ठाके विरोधि है. वेसे वो महात्मा के संगी नहि रहते है. यह वीचार हमारी पक्षके विरुद्ध है. वैरी सरीख है–यह वातभी अनुसंधानमें रखनी,

अव यह श्रीमदष्टाक्षरमें वाक्य प्रकार वाक्यार्थ प्रकारके विषयमे कहते है. एक वाक्य दोवाक्य ओर तीन वाक्य करके यह मंत्रको कहते है. वो संप्रदायके अनुसार अनुसंधान करना. वाक्यार्थका वहु अनुसंधान हो सकता है यहा कहते है.

जव एक वाक्य हो तव वाका वाचक प्रणव, प्रणवसें प्रतिपाद्य

वेसा स्वभाव विशिष्टसो नारायण है. "अ" के लीये "म" है करके प्रणवमें कहा वाकोहि खोलाकी, वो असो नारायण वाके लीये जीव है एसा एक वाक्यार्थ भया. अर्थात्में नारायणका शेष नारायणके लीये हों एसा अनुसंधान करना यह एक प्रकारकी भावना सिद्ध भयी. जेसे श्वेतद्विपमें हाथ जोडे भये प्रसंन्न मय सेवक नमः कहते भये स्वामीकी संनिधिमें खडे रहा करते है. एसे नमन करते नम्रतापूर्वक वाका ध्यान यह सबंधको वीचारके करना यहभी एक प्रकार उपाय है उज्जीवन है. वो यह अर्थ ते साधा जाता है.

प्रणवतें स्वरुप विवेक ओर नमो नारायण ते अ करके कहा जो देव विशेष सो ओर कोई नहि परंतु वो नारायणहि है जेसा वाका हो करके प्रणवतें जाना तेसा मेरे लीये नहि हो एसाभि जानना. अनन्य शेष ओर अनन्य प्रयोजन ते वाके नमः करके शरण जाना. यह दूसरी प्रकार है यामें प्रणव नारायणाय युक्तका भाव कर्तव्यका ज्ञान नारायण का वो धरना एसा कैंकर्य रुप लेके वालीयेमें उपायका अनुष्टान "नमः" द्वयका जो भाव वो धरना एसाभी प्रयोग करते है.

ॐ नमो करके द्वयका प्रथम भाग नारायणाय द्वयका दूसरा भाग समजे. द्वयमें कंठतः उपायका अनुष्टांन "चरणौ शरणं प्रपद्ये" करके कीया. यहां वो भावनामें रखा तात्पर्य जो द्वयार्थ सोहि अष्टाक्षरार्थ दो वाक्य वामे है. यह भी घटना ठीक है, ओर प्रकार देखेतो तीन शब्द करके प्रणवतें तत्व नमः तें हित ओर नारायाणतें पुरुषार्थ कहा है यह भी ठीक है. अथवा सारभूत दो वात है. उपाय ओर पुरुषार्थ, द्वयमेंभी वोहि भाव करना. अष्टाक्षरका खूलासा सो द्वय है यह भी एक योजना है.

समग्र अष्टाक्षर सपरिकर समर्पण करनेके भाव वाला है. यह

योजना प्रणवतें हवी अकाहि जो म आत्म हवीसो निरुपाधिक देवता अकार वाच्य नारायणकोंहि भार वहेनेको अर्पण कीया नममसो " ईंद्रायनमम " कीनाई फलभी वाको अर्पण कीया एसा श्रीमत् अष्टाक्षर आत्म निवेदन पर है करकेभी योजना सुप्रसिद्ध है. मुल-मंत्र करके आत्माको नारायण देवको निवेदन करना एसा भाष्यका-रने प्रतिपादन कीया है. श्री वैकुंठ गद्यमें श्रीमान मुल मंत्रके एकां-तीक आत्यांतीक परिचर्यामें स्वीकारो एसी याचना करनामे प्रणाम करके आत्माको देवताको अर्पण करता हौं एसा कहा है.

ओर योजना—श्रीमत् अष्टाक्षर द्वयके उत्तर खंडमें कही इष्ट प्राप्ती ओर अनिष्ट निवृत्ति रुप पुरुषार्थ जो नित्य कैंकर्य वाकी प्राप्ती कहता है. स्वरुपानुसंधान वाके अंतर्गत होना चाहीये. स्वरुप ज्ञान भयाकी पुरुषार्थका विचार आवेहि ओर वाते वालीये उपाय ओर प्रार्थनाभि करनी होती है. वो श्रीमत् अष्टाक्षरसें कही है. अर्थात नित्य कैंकर्य मागा है.

ओर योजना—प्रार्थना नहि किंतु फल परमप्राप्य जो है सोहि यामें कहा है यह मंत्रके ज्ञानके पूर्व, हमको क्या चाहना, वो ज्ञान नही रहा सोयाते होता है. अष्टक्षरके तीन वाक्य है. स्वरुप, उपाय ओर पुरुषार्थ वाचक है, सो ठीक पुरुषार्थ कहनेकोहि है. प्रणव ओर नमः स्वरुपको शोधते है. ओर तीसरे पदके साथ आय लगनेतें वाका कैंकर्य मीलेकी सब मीला. अनिष्ट गया इष्ट भया वातें वो मुख्य भावना वामें है. जेसे श्री लक्ष्मण कुमारने कहा आप जानकी साथ गीरीयोमें मोज करो ओरमें आप दंपतीका आप जागते हो सोते हो तब सब प्रकार कैंकर्य करुंगा येहि मनोरथ वहां करना करके सीखा-या है एसा में कब होउं यह भावना जेसे गद्यमें करी है वेसी कींक-र होनेकी प्रार्थना है. नित्य कींकर बनुं करके कहा. वातेंहि सिद्ध भयाकी परम फल मीला पुरुषार्थ तो वाके अंदर समाजाता है क्यों-

की परिपूर्ण ब्रह्मानुभव परिवाह भूत कैंकर्य तें फीर सीमा है यहां स्व-लाभके साथ स्वामीको भी लाभ है. उनको मुखोल्लासभी हमारे श्रे-यतें होताहै वो दासोंको स्वीकारनेमें आनंद पाते है.

कहा है की दो प्रकारके अंन है त्रीगुणी ओर षाड्गुणी बद्धो-के लीये त्रीगुणी ओर मुक्तोके लीये छेगुणी. भगवानकेगुणानुभव पूर्वक भोग्य तम कैंकर्य वो परम योग्य है. मुक्त दशामें परम साम्य भोगसो ज्ञान करके है परंतु स्वरुपानुवंधी शेषत्व ज्ञानको यह फल भूत कैंयर्यतें कुछ वीरोध नहिं आता है ओर सर्वतें अधिक इष्ट मीष्ट लगता है.

मुमुक्षु दशा ओर मुक्त दशा उभयमें " अहंग्रह " शरीर आत्म भाव वाले रहेना करके भाष्यमें कहा है. यह अहंग्रह परार्थ काष्टाके हेतु करके होता है.स्वामीकोहि सब कुछ माने, सोळ एसेकी,आपको-भी भूल जातें है. आपको कोइ भीन्न वस्तु करकेहि खास नहि गीन-तें है मुख्यकोहि सब्रकुछ मानते है. वो मुक्त दशामें ठीक हो सकता है. वहां कैंकर्य स्वतः प्राप्त है. द्वंद दुःख रहित निरंतर अनवच्छीन्न रसरुप हो सकता है. मुमुक्षु दशामें तो अपने प्रयोजनको लेके कर-नेका कैंकर्य है. वो फीर सुकृत विशेष उपाधिक वाला होता है. द्वंद तितिक्षादी युक्त निद्रादी करके विच्छेद रसरुप वाला होता है. कभी यहां जो कैंकर्य विनाका व्यापार होता है सोतो भगवानको प्रतिकूल अर्थ देनेवाला होता है. याते मुमुक्षुको सामान्य त्रैवर्गीककों तजके ओर जो जो अन्य प्रयोजनके हेतु होवे उनकाभी परित्याग करके भक्ति तत्व ज्ञान आदि भगवत भागवत समृद्धिके उद्देशतें काम्य कर्म-भी कीये तो भी भगवत धर्मके साधनरुप होवे, वेसे आचरनेंमे बंधक नहि बनतें है ओर उचीत कैंकर्यके अंतर्भूत होते है. प्रणवतें शेषत्व नमः ते अत्यंत परार्थरुप पारतंत्र, वो भागवत पर्यंतका, ओर नारा-यणतें कैंकर्य सोभी भागवत कैंकर्य पर्यंत होता है. कह चुके है की

भागवत कैंकर्य भगवानको लेके होनेतें, वो परिणाममें भगवानमेंहि पहोचता है. वो कैंकर्य इष्टरुपभी है हि. परवशता करकें दुःख-रुपतो जब वो कर्म वश्य हो तब होवे. यह तो अनुभव जनीत प्रीति का रीत है.

ओर योजना—प्रणव स्वरुप पर नमः सो अनिष्ट निवृत्ति प्रार्थना पर ओर नारायणाय इष्ट प्राप्ती प्रार्थना पर समजना. नमः मे नमम अर्थ कीयेतो, विरोधि निवर्त्तक प्रार्थना भयी, वो शेष भावपूर्वक होनी चाहीये. सो अर्थ प्रणवतें लीया. शेष भाव वृत्तिपूर्वक ही नमम ठीक है. वो नममका पूरा अर्थ है.

अधिक कीतना कहे, इतना ग्रहण होतो बहुत है. श्रीमन्नाराय-णका सब अनंत है थोडा अंतमें सारभूत कहे कर पूरती करते है.

यह जीवात्मा अनादि अविद्यातें संचीत भये पुण्य पापरुप कर्मों-के प्रवाहको लेके ब्रह्मादि देव मनुष्य तिर्यक् ओर स्थावरात्मक चार प्रकारके देहोमे प्रवेश करता वो वो देहका अभीमानी अवर्जनीय बनता भव भयमें रहता वहेता है. वाका नाश होनेको, अविद्या कर्म वासना रुचि प्रकृति सबंधादि सर्व अनिष्टकी अत्यंत निवृत्ति होनी चाहिये. उतने ते काम पूरा नहिं बनता है.

अनिष्ट निवृत्तिकी प्रार्थनातें तो वो सफल होतो, अनिष्ट निवृ-त्तिहि होवे स्वरुप खूले, मणीके उपरका मल हठे ओर वाका ज्ञान प्रकाशे, तेसा आत्माका ज्ञान खूले वातें उतनी पूरति भयी. बंदीखा-नेतें छूटे भये, परंतु राज्यभूवन प्राप्ती ओरहि वात है. वो प्राप्त होने-को ओर अधिक करना चाहीये. इष्ट प्राप्तीकीभी प्रार्थना चाहीये व्या-धि जाना एक वात है, पुष्ट होना दूसरी वात. ऋण मुक्त होना एक स्थिति है धनी होना दूसरी स्थीति है. वो न्याय यहा भी है. संसार दशामें तो जब प्रतिकुल जावे तब वाके संग अनुकुलभी जावे

एसा होता है. नोकरीकी परतंत्रताके साथ, पगार सत्ताभी जावे वेसा यह इष्ट प्राप्तिमें नहि है. यहां तो सदा सकल अनिष्ट निवृत्तिके उपर समग्र अनुकुलकी सदा प्राप्ति होती है.

ज्ञानके संकोचकी निवृत्ति वो भगवानके निग्रहकी निवृत्ति है. वेसे ज्ञान विकाशके साथ कैंकर्य प्राप्ति वो भगवदनुग्रहका परिणाम है. मात्र सर्व अनिष्टकी निवृत्ति वोतो पाषाण कल्प मुक्ति भयी वातें भगवत प्राप्तिभी होनी चाहीये वोहि पूरा फल है.

प्रणव स्वरुप पर नमः उपाय पर नारायण पुरुषार्थ प्रार्थनापर एसे तत्वहित पुरुषार्थरुप श्रीमत अष्टाक्षरका अर्थ वोहितो विस्तारतें ब्रह्मसूत्रमे वोहि क्रमते कहा है. सर्व वेदांत या प्रकार श्रीमत अष्टाक्षरके यह अर्थके विवरणरुप है. प्रथम अध्याय द्वय करके शारीरक सुत्रमें स्वरुप विचार है. त्रतीयमें उपाय हे ओर चोथेतें फल विषयीक कहने वाले ब्रह्मसूत्रके चार अध्याय हैं. वाका सार सो यहां कहा है.

या प्रकार श्रीमत् अष्टाक्षरसो वेदांतका सारतम है. वाके एक वारके उच्चारण सर्व वेदांतका पाठ समान है. वाके अर्थका ज्ञान बेदांतके ज्ञान समान है वाके वक्ताका माहात्म्य वहुत शास्त्रमें वहुत विस्तारतें कहा है अंतमें येहि कहे.

किं तस्य बहुभिः मंत्रैः किं तस्य बहुभि र्व्रत्तैः।
नमो नारायणायेति मंत्र सर्वार्थ साधकैः

—इति—

द्वयमंत्र अधिकार २.

श्रीमत् अष्टाक्षरमें नमः पदकों अर्थ करके ओर शब्द करके उपाय कहा है. ओर वामेहि नारायणाय पदतें फल कहा है. वाका विस्तार वाला प्रकाश द्वय मंत्र करता है यह कठ श्रुतिमें प्रतिपादन करके अनुष्टान कर समुजाया है. भगवत शास्त्रमें श्री प्रश्नसंहिता आदिमे वरण उद्धार आदि करके प्रतिपादन कीया है या प्रकार यह मंत्र श्रुति मुल ओर तांत्रीक है. फीर सबसे बडी बात यह है की, वो पूर्वाचार्योंके वाक्योमें है. भगवान परमाचार्यनेभी भगवत् शास्त्रमें याका प्रतिपादन कीया है. याके ऋषी आदि जो श्रीमत् अष्टाक्षरके है वोहि है.

जेसे श्री लक्ष्मणजीको वनमें दंपतीकी सेवामें जानेमें श्री राम स्वामी नहि करते रहे तब, वाने जानकीकी ओर सहाय करनेको देखके भ्राताके चरणोमे वो जापडे. वेसे यह मंत्रमें श्रीमान नारायणके चरणोमें में शरण होता हौं करके पूर्व खंडमें कहा है. वो क्यों शरण वरण करते रहे ! दंपती सेवामे स्वीकारे वालीये सोहि यहां उत्तर खंडमें, श्रीमान् नारायणके लीये मेरे लीये नहि करके वोहि कहा है. वाते जेसी उनको सेवा मीले वेसा यातेभी नित्य कैंकर्यरुप फल प्राप्त होता है. या प्रकार यह मंत्रके दो भागमें दो वातें है. प्रथममें उपाय शरणागति है द्वीतीयमें उपेय कैंकर्यका कथन होनेतें वाका द्वय नाम धरा है.

जो ओर उपाय ओर अन्य फलके लीये शक्ति रहितहो सो यह मंत्रका अधिकारी है. यह मंत्रका विनियोग आत्माका स्वामीके साथ वरण. समर्पण करनेमे होता है. एसाभी कोई कहते है. वरण ओर समर्पण दो वात होनेंते द्वय नाम वो धरतें है. एकमें वरण है अन्यमें समर्पण है.

॥ श्रीमन्नारायण स्वामीन् ॥ इत्यादि ओर मंत्रमें भी द्वय मंत्र सरीख शब्द प्रयोग कीये है. यह मंत्रराज गुरुवंदन पूर्वक जानना क्योंकी गुरु विना ज्ञान नहि हे वाते वो सविधि हि मीलाना चाहिये येहि मंत्रसें आत्माका निक्षेप कीये तो वो कृत कृत्य होता है. वाका एक वेर उच्चारण वस है. वरण समर्पण हि एक वेर करनेमें संवंधकी पूरती हो जाती है. भगवानका अवशतें नाम लेतो भी सर्व पातकतें मुक्त होता है. नाममें पाप काटनेकी उतनी शक्ति है. जीतनी जीवमें पापकरनेमें नहि है एसे मात्र नामोच्चारणका माहात्म्य है तो यह तो नाम पूर्वक मंत्र है वाके माहात्म्यका शास्त्रमें वहुत विस्तार कीया है सो यथार्थ हि है ! श्री मुखतें भगवानने कहा है की. कोई भी प्रकार द्वयका वक्तातुं होतो वस है. स्वामी हि येसा मानतें है. फीर फलकी शंका कहां. यह मंत्र के अर्थ श्रुति स्मृति पुराण भागवत शास्त्रादिमें सुप्रसिद्ध है. वो सदाचार्य संप्रदायके क्रमतें गद्यमें प्रकाश कीये है. गद्य भाष्यमें वहुत विस्तारतें वो वताये है. श्रीमान नारायण उपाय उपेय उभय स्थानमे है. वेसे यहां भी श्रीमान के साथ नारायण शब्द दोनो खंडमे है. यह द्वयके उच्चारणसें अर्थ सिद्ध होता है. वेसा साक्षात् श्री स्वामीका वहां उत्तर है. ओर वोहि वात आपने चरम श्लोकमें कंठतः कही है. या प्रकार याके अनुष्ठांनतें फल प्राप्ति निःसंशय है. श्री कुरकाधिनाथ आदिने भी यह मंत्रका उपयोग कीया है. श्रीपरांकुशादिने भी अनुष्ठांनमें लीया है. श्री द्रवीड प्रवंधकी वहु शाखामें ये पाया जाता है एसा शिष्टांसें भी वहुत परिगृहित है. वातेंवाको सविधि मीलाके वाके अर्थ भी तो जानने चाहीये सो यहां कहते है.

श्रीमान नारायण करके सर्वके शरण्य परतत्व है वाते यहां श्रीमन्नारायण करके आरंभ कीया है. नारायण परतत्व है. यह निर्णय वाके श्रीपति चिन्हतें हि श्रुतिने समजाया है. नारायणके

शरण गये तो वो लक्ष्मी वीशीष्ट हि है वो चिन्ह शरणको अतिव उपयोगी है. वो श्री संग होनेंते ही शरणागतका ठीक काम वनता है. श्रीकोन है क्या करती है. वो वाके नामके अर्थ तें हि सभजाया गया है धातुके उपरसें वाके छे अर्थ होते है. वो छे गुणवाली सो श्री वो सर्व गुण आश्रीतके उपयोगी हि है. आगे विस्तारतें वो कहेंगें. वो अर्थ भगवत शास्त्रमें विस्तारतें प्रतिपादन कीये है. वो आ-श्रय करती है ओर कराती है. यह दो अर्थ हमारे लीये है वाके द्वारा शरण गये तो पुरुषकार होती है. हमारा काम आप उठा लेती है. हमारे लीये स्वामीको मीलती है. ओर फीर हमको उनतें मीलाती है. वो मातापितासें कहती है. "अपराधी कोन नहि है" अव पछताके शरण आया तो स्वीकार करना चाहिये. पीता दंडधर रहेपर, माता वत्सल है वो पुत्रको दंडतें वचानेमे वीचमें आप आगी-रती है. ओर अपनी बुद्धि वलतें वाके अपराधोंकी क्षमा कराती है. पीता गरम होते है माता अपनी शीततातें उनकों शांत करती है वो स्वामीकी वल्लभा होनेतें वाका कथन, आग्रह, स्वामी स्वीकारतें है. वाका प्रीय स्वामी पूर्ण करते है. वो प्रिय करना भी परार्थ है. लक्ष्मी ओरके उपर दया कराती है. आप दया मूर्ति होनेतें सद्य पीगलती है. आपके वलतें थोगतें स्वामीको पीगलाती है.

प्रल्हाद के लीये नृसिंह प्रगटे, अति कोपित देखे, ब्रह्मादिक भय पाये तव माताको पधराके वाके द्वारा स्वामीको शांत कीये करके पुराणोमें कथा प्रसिद्ध है. शौनक आदिके वचनमें लक्ष्मीका पुरुष-कारत्व करना करके वडे विधानतें कहा है. संप्रदायी शिष्ट एसा हि कीये आते सफलता पाते है.

भगवान जो आपतें करते है. तव भी वो श्री विशिष्ट तो है हि. एसे भी नारायण उपाय में श्री वीशीष्ट नारायण हि उपाय है. वो

सूर्यके साथ प्रभाकी नाइ सदा साथ हि है. जगत वाकी लीलाके लीये भगवानने कीया करके पूर्वाचारी कहते है.

फीर श्री धातुसें सूनती है, सूनाती है, सो हमारी प्रार्थना हम अपराधीको सीधा स्वामीका साक्षात्कार कहांसे ! वाते प्रथम हम वह माता पास जाके वाकी सहाय कृपा याचे तो वो सुनती है कृपालु बनके सहायी होती है. वो सद्य स्वामी पास जा सकती जो जब चाहे तब कहे सकती है. प्रीति परवश स्वामीको वाका सुनना पडता है एसी वाकी सहाय सें हमारा कार्य सरल हों जाता है.

॥ स्तृणोति निखिलान् दोषान् ॥ गंदे बालकको साफ करके शृंगार करके रीतभात सीखाके माता, पीता पास ले जाती है वेसे यह पतित पावनी हमारे दोष मात्र को हमतें दूर करती है. गो वत्स-कामलजीव्हासें चाट जाती है. माता वत्सलाहि होती है. पुत्रको स्वच्छ करना वाका स्वतः प्रीय काम होता है वो हमारे लीये वो हमको विधिमें लाके करती है. ॥ फीर स्तृणोतिच गुणैर्जगत् ॥ जग-तमें जहां मंगल है सो श्रीको लेके है. वाकी द्रष्टी हठीकी वहां अमं-गल हो जाता है. द्रष्टी होने ते हि वहां सर्व मंगळ होता है. वेसे हमको स्वामीकी कृपाके पात्र, सेवाके योग्य वो बनाति है. वामें वाको श्रम नहि है. वाकी शक्तिका प्रभाववाळी द्रष्टीका स्वभाव हि वेसा है. यह सर्व गुण वामें होने ते पूर्वाचारीने कहाकी "श्री तेरा नाम हि है फीर अधिक क्या कहुं."

यह सर्व गुणवाली माता करके जो श्री कही सो सर्व गुणोका अनुसंधान उपायके समय नारायणके चरणोमें शरण जानेको उप-योगी है अर्थात् पूर्व वाक्यके उच्चारणके साथ वो भाव धरना.

वेसे हि उत्तर वाक्यमें फल दशाके उचीत गुणोका अनुसंधान वहां करना तो फीर हममें दोष नहि रहते है वागें तो स्वामीका

कैंकर्य मागा है सो सपत्निकका दंपतीका एसा भाव उपेय दशाके लीये रखना या प्रकार श्रीमन्नारायणका अनुसंधान करना परत्व-मेंत्यों सुलभत्वमें पतिश्रीके विशिष्ट है. श्रीमान पदमें मत प्रत्यय वो वाते अप्रथक् सिद्ध है करके, समजानेको यहां विनीयोग कीया है प्रमाणोसें वाका नित्य योग सिद्ध है. विग्रह दशामें, ब्रह्मचारी अव-स्थामें भी वामनजीके वक्ष स्थलपर लक्ष्मी देख पडी वो वक्ष कृष्णा-जीन धारी कर के देख पडे तो भी श्रीधरः श्रीकरः श्रेय श्रीमान लोकत्रया श्रय करके वाके नामके साथ हि श्री है.

गद्यत्रयमें नारायण शब्दके साथ जो गुण पूर्व भागमें लगाये है वो वेसे गुण विशिष्ट यहां नारायण शब्दसे स्वामीका उपाय दशामे अनुसंधान करना. जेसेकी वात्सल्य स्वामीत्व सौशील्य सौलभ्य सर्वज्ञत्व सर्व शक्तित्व सत्य संकलपत्व परमकारुणीकत्व कृतज्ञत्व स्थिरत्व परिपूर्णत्व परमोदारत्व यह मुख्य है. हम अपराधिकों, शरण गये तो येहि गुणका लाभ मीलनेतें इष्ट वनता है वो जो कहे गये हैं की " में तोको सर्व पापो ते छोडुंगा तुं शोच मतकर " सो यह गुण विशिष्ट वो है वा तेहि कहते है.

वेसे प्राप्ती दशामें उत्तर खंडमें ।। श्रीमते नारायणाय ।। में जो नारायणका नित्य कैंकर्य याचतें है वो समस्त कल्याण गुण विभूती विशिष्टका अनुभव करना है तव हि वो नारायणका सर्व विध कैंकर्य वन सके वा ते वा में वो गुणोका तेसे हि निरतिशय शेषीत्व अति-शय भोग्यत्वादिका मुख्य अनुसंधान करना.

पूर्व खंडमें शरणागति कीये तो पाचो अंग वा में आ गये वेसे वनके अनुष्ठान करनेका है. न्यास पंचाग संयुत हि है. तो शरण आनेमें शरण्यको चाहीये वेसा हमारा स्वरुप होनाहि चाहिये पूरे अधिकारी वनना चाहीये.

" चरणौ " शब्दसें वो नित्य दिव्य मंगल विग्रह वाला है. एसा समजना आकारका चरण एक भाग है. वो श्रीपती करके सदा नित्य पुरुषाकार है हि. श्रीमन्नारायणं करके परतो है हि ओर चरणौ कहे तो सुलभ, सोभीतो अनंत सो परिमित वनते हैं वा ते सुलभ सिद्ध होते है. दिव्य आत्म स्वरुपमें पूर्वकहे गुण हैं परंतु उनकी वीशुद्धता विग्रह द्वारा होती है. वो वीग्रह शुद्ध सत्व द्रव्यमय हैं. वो ज्ञानका संकोच नहि करता संकोचका निवर्तक होता है. तव हि अशुद्ध देह धारीको शुद्ध होनेको वो विशुद्ध विग्रह ध्यान दर्शन करके आश्रय करनेका आधार है, अवलंवन है. फीर शांत अनंत ब्रह्मका रुप रहेपर भी मूर्त ब्रह्म करके ब्रह्मको अपना विग्रह प्रियतर है करके कहा है. वेसा ईश्वरका विग्रह अति अद्भूत होनेतें अधिक भोग्यरुप होता है. वाहिका स्मरण पाप हरता है. पुंडरीकाक्षका स्मरण करे सो सदा भीतर वाहीर शुची है करके कहा सो विग्रहका प्रभाव है. पुरुषो के चितको हरनेवाली वाकी द्रष्टी है एसे अनुभवीयोके वचन है. वाते वो फल दशामे भोग्य, तेसे उपाय दशामें भी भोग्य ओर शुभाश्रय रुप है.

बद्धोका आश्रय कीये तो वोतो त्रीगुणी शरीर वाले आप हि है. शुद्ध आत्म स्वरुप भी परतंत्र है. वा मे हेयको निवारण करनेकी शक्ति नहि है. मुक्तोके शरीर भी संसारकी निवृत्ति करनेको समर्थ नहिं है वा ते वोहि श्रीपतिकादीव्य मंगल विग्रह शुभाश्रय योग्य कहा है. शरणागति करनेको कहा तव भी श्रीकृष्णने मेरा एकका शरण वरण करके दीव्य विग्रह दीखाया है. विग्रह वीशीष्टके शरण हि जाना बनता है. परव्युह आदि पांचोरुप शास्त्र मर्यादा पूर्वक शुभाश्रय है.

चीतको रोकनेको, उनको स्वामी ओर आपको दास करके

स्वीकारनेको, हमको तजके न जावे दया लावे तालीये रोकनेको, चरणोका ग्रहण हि उचीत है. वेसे बहु वचन है. वेसा श्री लक्ष्मण, श्री मारकंडेय, श्री भरतसूरी आदिका अनुष्टान है. ओर वो दो चरणोके लीये है. वाके अनुभव तें अनुभवीयोने कृतकृत्यता मानी है. तुम्हारे चरणारविंदमें तें अमृत झरता है करके वचन है. द्राविड वेदमे भी ठेर ठेर चरणौ शरणं प्रपद्ये करके वचन है ओर शास्त्रमे शरण गये सो चरणौ मेहि करके अनुष्टान द्रष्टांत है. भगवानका विग्रह सुगंधी सुकुमार है वा ते भी चरण भोग्य है चरण कमल हि कहे जाते है.

यहां " शरण " शब्द उपाय पर है. वो स्वामी ही रक्षण करते है. उपाय भुत बनते है. हमारी स्थीति अकिंचन अनन्य गति माननेपर हम दुःखी दयनीय है. वो स्वाभावीक दयालु है. वाकी दयाका लाभ हम मागे तो वो देता है. जो मांगे वाको देता है, एसे वो उपाय बनता है. हमारी प्रार्थना, वो हमारा भार वो उठाले, हम निर्भर वाके हि लीये बने, वहां लो है. वो वेसा हि करदेता है. वहां पर्यंत उपाय बनता है. याके अपेक्षित ज्ञानशक्ति दयादिक वामे है हि.

" प्रपद्ये " जानागति करना, में गती करता हुं सो बुद्धि विशेषद्वारा, यह प्रपद्येका अर्थ है. रक्षण करेमे एसे समर्थ विश्वसनीय है करके निश्चयवाला होता है एसा भावार्थ है. उपायमें विश्वास सार भुत है. वो कीया तब तो शरण आता हौं करके अनुष्टान कीया. " प्र " उपसर्ग विश्वासकी महत्ताके लीये है. यह विश्वास प्रकर्श श्रीमत शब्द में भी संभावीत प्रकारसें पुरुष कारमें भी वो गुण है एसा अनुसंधान करना पुरुषकारमें महा विश्वास रहे तो हमारे महा अपराधोकी भी वो निवृत्ति करायेगे एसी द्रढता रहती है. यह वि-

श्वास सर्वदा बना रहेना चाहिये. हनुमानजी ब्रह्मास्त्र तें बंधे रहे पर जब राक्षसोने अविश्वास कीया की वो ब्रह्मास्त्र छूट गया.. वेसे हि वेसे अविश्वाससें प्रपत्ति हठ जाती है. प्रभु विश्वास वालेका मुक्ति देते है. जहां निःसंशय है वहां हरी सदा है, एसे प्रमाण हैं. प्रथम सें एसा विश्वास द्रढ करना की, कोई प्रसंग आपडे तो भी वो हठ न जावे कभी वो मंद हो जावे तो वो स्वामी कटाक्ष तें पूर्ण बन जाता है. क्योंकी आपने हि कहा है. मीत्र भाव धरके आवे तो में तजता नहिं हो, सो बात बना लेते हैं. एसे उपाय भुत, स्वामीको समजनेका में निश्चय करता हौं यह अर्थ शरणं प्रपद्येका है. प्रपद्येमें प्रार्थना आजाती है, गोप्तृत्व वरणके लीये तो वो है हि.

" श्रीमते नारायणाय नमः " यह उत्तर खंड है. श्रीमन्नारायणका नित्य कैंकर्य करनेवाला बनु, यह अर्थ श्रीमते नारायणाय का है वो इष्ट प्राप्ती हैं. ओर नमः मेरे लीये न रहुं यह अनिष्ट निवृत्ति है. एसा अभी भया नहिं वा ते यह प्रार्थना हैं. फल सर्वको मील सकता है. जो मांगे तो मीले वा ते प्रार्थना आवश्यक हैं. बीना मांगे काहुको नहि मीला. शरणागति कीये तो मुक्ति पाये न करे वहां लो नहि. एसी चेतनकी इच्छा मात्र इच्छा नहि स्वामी वो पूर्ण करे वेसी हो वाते याचना करे, वोही तो उपाय है. हम ते याचना व्यतिरिक्त ओर बन सके एसा नहि है. याचना तें वो शरण्य आप उपाय बनतें हैं फल भी देते है. वाते हमको न ओर उपाय करना पडेगा, न ओर फल चाहना होगा जेसे हम अर्थी वेसा वो दाता है वा लीये उपाय सो भर समर्पण है वो करके हि याचना करते है.

वो भर समर्पण सपरीकर होना करके कहा है. मंत्र ते आत्माका निक्षेप करना सो पुरा होना चाहिये आपको अनन्य शरण स-

मजके, स्वामीको हि शरण्य समजे तो वेसे हि फल देते हैं यामे ओर कोइ कठीन कर्म करनेकी अपेक्षा नहि है.

एक वेर करना करके शास्त्रमें कहा है. यहां वर्त्तमान काल है सो वो जब कीया तब के लीये है. पीछे अनुसंधान निर्भयता, निर्भरता के लीये अथवा भोग्य रुप करके भी फल प्राप्ती पर्यंत वो भावना बनी रहेनेमें कुछ भी बाध नहि है. " सदा वक्ता करके गद्यमें स्वामीका वचन है. यह शरणा गती सर्व अर्थ साधक है. सर्वाधिकार है यह कह चूके है बातें यहां कहा चहा अर्थ वोहि न्यायसें सिद्ध वेसा हि होगा एसा विश्वास वो नियमतें सुदृढ होता है. वो परम उदार अर्थात् अर्थ प्रदानकाहि सदा दीक्षित है.

उत्तर खंडमें विरोधी नीरसनकी प्रार्थना नमः शब्दसें की बातें अनन्य प्रयोजनत्व सिद्ध भया ओर इष्ट प्राप्तिमें कैंकर्य प्राप्ति हि सिद्ध भयी जहां नारायण शब्द हैं वामे प्राप्यके अनुरुप स्वामीत्वादि अनंत गुण विभूति विग्रह वाले निरतीशय भोग्यरुप आकार विशेषका प्रमाणानुसार अनुसंधान करना. एसे उभय विभूति विशीष्ट रहेपर श्री वैकुंठ परलोकमे जगतपति श्रीके साथ अनंत भोगी के उपर वीराजमान है करके प्रमाणानुसार श्रीके साथ स्वामीका अनुसंधान करना. श्री वोही है. ज्याके छे अर्थ छे गुण कह चुके है परंतु यहां विशेषमें श्री सेवा करके धातु तें सेव्य भी समजनी भगवानका पूरा अनुभव होके पूरा कैंकर्य प्राप्त होतो वामे श्रीतो होवे हि. श्रीमते नारायणाय कहेकर प्रथम इष्ट प्राप्ति चहि वो मील गई फीर बाकी विशुद्धि पूरतीके लीये अनिष्ट मात्रकी निवृत्ति नमः करके चाहि अंत फल वेसा हि होता है. यामेस्वपर उभय के अर्थ है. उभय लाभ मानतें है. हम अब वाके हि भोग्य बनेगे हमारा भोग्य अब वोहि होगा उभय के वियोगकी निवृत्ति सदा संयोगकी प्राप्ति ओर वो यथोचित होवे हि यथार्थ है.

श्वेताश्वेतर उपनिषत्में याका अनुष्टान कर वताया है. एसे यह मंत्र श्रुतिको भी ईष्ट है. यह श्रीमत् द्वयमंत्रका समुदित अर्थ या प्रकार है. सर्वके स्वामी निरतीशय भोग्यभूत श्रीके युक्त जो नारायण है, उनके चरणोका हमारे स्वरुपको प्राप्त, सर्व देश सर्व काल सर्वावस्थाको उचित एसा सर्वविध कैंकर्य विरोधीभूत मात्रकी निवृत्ति पूर्वक परिपूर्ण प्राप्त होवे अन्वय न रहे तेसे श्रीमन्नारायके चरणोकामें अंगसंपन्न आत्म रक्षाका भार समर्पण करता हौं. सविधि एकवेर कर दीयाकी हो चूका फल प्राप्ति निःशंशय है—इति—

चरमश्लोक अधिकार ३

प्रथमपाद.

श्रीमन्नारायण साक्षात् जो क्षीरसागरमें शेषके उपर शयन करते है. वोहि मथुरांपुरीमें आये है, वो श्रीकृष्ण कहाये है साधुके परित्राणके लीये ओर दृष्कृतिके विनाशके लीये ओर धर्मके संस्थापनके लीयेमें युगयुगमें प्रकट होता हों एसा श्रीमुखका वचन है.

द्वारकापति वसुदेवके पुत्र करके वने रहे, एसे जगत जनकों सुलभ भये तीनमें भी द्रुपदि ओर पांडवको अति सुलभ भये ओर उनमें भी अर्जुनको रथी वनाकर आप सारथी भये एसे सर्वेश्वर रहेपर जेसे स्वजन होवे वेसे सुलभ भी होते है.

वो अर्जुनको वा समय वंधु विनाशके व्याजसें शोक भया वो अस्थानमें स्नेह करुणा होनेंतें अनुचित भया परंतु वो तो युद्धतें रुक करजो मेरा निश्चितश्रेय हो सो मोंको कहोमें तुमारा शिष्य हों मोको आज्ञा करो एसी प्रार्थना करके खडाहि हो रहा.

तव वाके यह शोककी निवृत्तिके लीये—देहतें दूसरा, परमा-

त्माकी शेषताका एक रसभूत, एसा आत्माका नित्य स्वरुप है. एसा आत्माके स्वरुपके ज्ञानवाले ओर परमपुरुषार्थके लाभके लीये परंपरा कारण होवे, वेसे कर्म योगभी परीकरके साथ वाको आपने उपदेश कीया.

पुरुषार्थ शीघ्र पाना चाहिये एसी त्वरा हो करके भी सपरिकर यह कहा एसा उपाय करना वाको दूष्कर देख पडा ओर वेसे उपायका अनुष्टान करे तोभी वामे अपेक्षीत जो ज्ञान है सो मीला सके एसा रहेपरभी वामे अनेक आधान ओर वहुत काल चाहीये, एसा उपायका स्वभाव समजनेंतें, आपमे अभिमत फलकी वातें शीघ्र प्राप्ती न होगी, एसा वो समजा ओर तव फीर क्या करना एसा अर्जुनको अतिशय शोंकाविष्ट देखकर वाको निमित्त वनाकर परम कारुणीक श्री गीता उपनिषत्के आचार्य (श्रीकृष्णचंद्र) भक्तितें वा प्रपत्तितेंमें प्राप्य हों एसा वचन है तदनुसार आपनेहि वो प्रथम सपरिकर कहे—भक्ति उपायमें अर्जुनको अशक्त देखकर, प्रपत्तिभी उपाय है वो रहस्य वाको वहां हि उपदेश कर दीया. वो उपदेशकी अवसान भूमी है. अव याके उपर कोई उपाय नहि है. एसा समजानेको वाका खास लक्ष्य खींचनेके लीये, गुह्यतम शब्द धरके जो कहा वो चरम नाम छेला श्लोक या प्रकार है.

सर्व धर्मान् परित्यज्य माम् एकं शरणव्रज ।
अहंत्वां सर्व पापेभ्यो मोक्ष यिष्यामि माशुच ॥

" सर्व धर्मका परित्याग करके " यह प्रथमपाद है जाका यह अधिकारमे विवरण है. फीर आगे दूसरे पादमें कहा है "मेरे एकको शरण जा " ओर तीसरे चोथेमें मेंतोको सर्व पापोतें मुक्त करुंगा तुं शोचमतकर " करके श्लोक पूरा है. यह उपाय, मात्र वाकेहि लीये नहि कहा. वो सर्वके शरण्य सर्वेश्वरने सर्व लोककी रक्षाके लीये

प्रसिद्ध कीया है. वो कहने वाले आपहि है जो. वेसा करने वाले है तत्रहि शास्त्रमें कहि रीती, वो नारायणकी शरणागति आचार्य उपदेश करे, वा प्रकार करनी करके रुषी मुनीयोने भी आज्ञा दी है.

गीताजीके उपर अनेक भाष्य अनेक मतके है. वामें यह श्लोकका अर्थभी अनेक प्रकार कीया है. प्रकरण प्रसंगके अनुगुण भी अर्थमें भीन्नता आवे, सर्वोपयोगी अर्थ यहां करते है जामे हमारा भी स्वार्थ है " सर्व धर्मका परित्याग करके जो कहा वो सर्व धर्मसो कोंनसें ? उनका केसा परित्याग करना ! यह प्रथम समजनेका है. वो वात बने पीछे "मामेकं शरणंव्रज" वो एककी शरणागति करनेकी है. वाते वो प्रथम करनेका प्रथम समज दोनो पद मीले तो पूर्वार्द्ध पूरा होता है. वामे अधिकारीको क्या करना सो पूरा कहा है.

उपाय कहने वाला पुर्वार्द्ध है. ओर में तोको पापोसे मुक्त करुंगा शोचमत कर यह फल कहने वाला उत्तरार्द्ध है. खास तो विधिके अंगमें वो फलका लाभ दीखाते है मुख्य तो उपाय में हि प्रेरते है. वा ते यह श्लोकमें मुख्य उपाय हि वताया है. ओर वोहि पूरा समजना आवश्यक है. क्योंकी वो हमको करनेका है. "सर्वधर्मान्" में धर्म शब्दका अर्थ शास्त्र तें हि वेद्य एसा पुरुषार्थका साधन करके है, धर्म शास्त्रोमें चारो पुरुषार्थोको लेके वहुत साधन वताये है. यहां भी एक विशेष धर्म कहेते है. वाते ओरोकेली ये धर्मान् बहु वचन है. फीर सर्व शब्द करके वो उनके साधन भुत परिकरोके साथ करके समजना. अंग भुत धर्म भी धर्म कहे जाते है. यहां मोक्ष शास्त्र है वा ते वाके लीये शास्त्रमें विहित जो नाना प्रकार सपरिकर उपासना कही है उनके लीये सर्व धर्म शब्द है.

पुरुषोत्तमका ज्ञान सर्व विद्यामे उपकारक ज्ञान होने ते, अव-

तार विशेषका रहस्य चिंतन, उपासन, यह वा में धर्म है. ओर देश वास आदि विरोधी पापोके नाश करके हेतु होने तें वो वा में परिकर है.

गीता भाष्य आदिमे याका समर्थन कीया है. साकार भगवानकी हि उपासनादिकही है तदुपरांत जेसे सत् विद्या, आदि भेद करके ज्ञानको मोक्षके उपाय कहकर उनमें वहु प्रकारकी उपासना, ओर उनके अंग कहे है. वेसे यहां गीताजीमें भी मोक्षके लीये सपरिकर वहु धर्म जो कह चुके है, उनको लेके यहां उन लीये. सर्व धर्मान् शब्दका उपयोग कीया है. फीर यहां उनका " परित्यज " त्याग करके, तात्पर्य, सर्व धर्म सो सर्व साधारण नहि. यहां कहे उपाय रुप धर्म कर्म ज्ञान भक्ति आदि जो कहा है सो त्याग, कहे तो–यह प्रपत्ति करके आपके आकिंचन्य पूर्वक–अपनेको अकिंचन हि समझकर वो भक्ति आदि उपाय हम तें नहि वन सके एसे है. एसी निराशा होने तें, वो ओर उपायो प्रतिकी आशाओका भी परित्याग भया हि. जो हमसेन वन सके एसे उपायोको क्यों वीलग रहे ! वा ते यहां त्याग शब्दका येहि अर्थ है. की हमारे कामके नहि है फीर ' परि ' एसा उपसर्ग है सो अनंत काल तें देखा, ओर अनंत काल पर्यंत देखु तो भी मोको मेरे तरनेका उपाय तुमारे पादकमलके शिवाय, अन्य जन्म जन्मांतरमें भी नहि देख पडता है ॥ यह गद्यके वचन अनुसार अत्यंत अकिंचन सर्व कालमें सर्व प्रकार करके, ओर उपायोमें अपनी अयोग्यता मानके जो अतिशय निराश भया, वा ते कहाकी जेसी उन तें नीराशा है तो वेसे हि उनको वीलकुल छोड दे. वने उतना करुं फीर देखा जायगा. एसा नहि. जो न वन सके एसे उनका आरंभ वृथा है उनकी अव कोई रुपमें आशा न रख जेसा उनका त्याग. वेसी वा में अधिकारकी अधिक योग्यता है. शरणागतिमें कार्पण्यता हि अंग है. वाके अधि-

कारीको अकिंचनत्वका अनुसंधान होनाहि चाहिये. फलमे वीलंव सहे वेसा मंद अधिकारी भी होतो भी अर्थ तो वहु प्रमाणानु गुण है. ओर देवोकी शरणागति करे उनको भी, वाके अनन्य वनना इतर उपाय अनुष्टांन छोडना यह कर्त्तव्य पहिला हि ठहरता है दो दीक्षामें संग दिक्षित, दो धर्मको साथ साधने वाला, एकके साथ, दुसरी प्रपत्ति करके नहि अनुष्टान कर सकता है. या ते यह भी नहि ठहरताकी वाको सर्वका त्याग कहे तो, प्रपत्ति करे वाको कोइ भी प्रकारके धर्मोका अनुष्टान हि नहि करना. वो तो असंभवित अथवा अधर्मी वनने सरीख है. जेसे ओर उपाय ओर उनके अंग छोडने वेसे शरण वननेके जो धर्म हो वो सव सपरिकर स्वीकारनेमे कोई सर्व उपायमें साधारण होवे. कोई वो वो उपायके असाधारण धर्म होवे, वोहि वात यहां है. जेसा " परित्यज्य " शब्द है वेसा हि " शरणं व्रज " करके भी पद है. एक एक प्रकार नहिं करना, त्यों दूसरा दूसरी प्रकार करनेका तुरत आज्ञा देते है. जेसे वहु धर्मान् पद है वेसा एक पद वो दूसरे उपायको लेके है. उपाय गुरु लघु दो प्रकार होतो, वो वो उपाय वाके अधिकारी के लीये योग्य हि है. जव उपाय कीये तव फल मीलेगा हि. परंतु जो उपायको जो योग्य हो सो, वो उपाय करेगा तो वो फल भागी होगा. वामें उपाय के गुरुत्व लघुत्वका गौरव नहि, अधिकारीकी योग्यताकी आवश्यकता है, वो मुख्य वात है, त्यो वो अधिकारीमें प्रथम तेंहि पूर्णता होनी भी आवश्यक नहि, उपासकोमें ज्ञान ओर प्रपन्नोमें विश्वास क्रम तेहि वढता है. न्युनतातो, रुपी मुनीकी भी देखी गई है. वाकी पुरति वोहि उपायमें द्रढ रहने तें वनती है.

यहां प्रथम भक्ति उपाय कहा. वाके अंग कर्म योग ओर ज्ञान योग कहे. एसे तीन योग तें फल रुप भगवत्प्राप्ति कहि है. वो तीन धर्म अर्जुनको आप ते वन सके एसे न लगे तव भगवानने कहा,

वो धर्मोंका छोड. वो योगका छोड, वो योग ओर साधन के धर्म वो प्रकार तुं मत कर, तेरे लीये शरण धर्म है तो तुं वाका स्वीकार कर. तुं भक्त नहि हो सके तो प्रपन्न वन. भक्ति नहिं वने तो प्रपत्ति कर. वा मे कोई भी निषिद्ध धर्मका आचरण तो आसकेगा हि नहि. क्योंकी, प्रतिकुलका वर्जन यह भी तो प्रपत्तिकाहि अंग है. वेसे हि नित्य नैमीत्तीक धर्मभी आवेगे क्योंकी, आनुकुल्य संकल्प येतो प्रपत्तिका पहिलाहि अंग है. भक्तको कर्म ज्ञान भक्तिका अनुष्टान उपाय बुद्धिसें करनेका है. प्रपन्नको भगवद्द आज्ञा पालनरुप कैंकर्य समजकर, भगवानको प्रसंनताके हि लीये करनेका है. क्योंकी प्रपन्नको फलके लीये तो भगवानहि उपाय है. वाकी दया कृपाहि फलका हेतु है. वो कृपा वनी रहे. न तुटे वालीये वाको उतना वेसा सव करनेका है. वोहि कर्म करनेके होके. उभयमें वाते विधि भिन्न है, वाते एक उपायकी विधि दूसरेमें काम नहि लगे. त्यों दूसरेकी विधिमें जो ओर करना उचित हो, वा विनाभि वो कामभि पूरा नहि वनता है. वातेंहि पूर्वार्धमें दोवातें है. ओरको छोड, ओर एकके साथ जीवनको जोड, करके भी कहा है. प्रपन्न ज्यों आगे वढे त्यों सामान्य धर्म छुटतें है, ओर वो विशेषमें लगते है. एकांतीक ओर उनतें वढके परमेकांतीकका तो जीवनहि श्रीपतिकी सेवा होती है. उनके धर्म वेसे ठहरते हि है.

जेसे कर्मयोगमें ग्रहस्थ वानप्रस्थ ओर सन्यासीके धर्मभी है. उनको उनमे छोडना जोडना करनाहि पडता है, वाके लीये शास्त्रमें जेसा कहा है तेसा तीनको तव करना यह आवश्यक है. एसा यामे भी है फीर, जीतना क्षुद्र जंतु ओर परम परमेश्वरके ज्ञानवल शक्तिमें तारतम्य है, उतना भक्ति प्रपत्तिके उपायकी दुष्करता सुकरतामें तारतम्य समजे तो योग्य है. प्रपत्ति भक्तितें वहुत वढ जाती है, वाका कारण येहि है. भक्तको स्ववलतें तरना है, प्रपन्नको स्वामी

वलतें, भक्तको वोजा आपको वहेना. प्रपन्नका भार स्वामी वहे. भक्तको आपको धर्म करके सर्व पाप काटने है, प्रपन्नको सर्व पापोतें स्वामी मुक्त करते है. वाते भक्तिके अंगके धर्मोको छोडनेका कहा है. ओर प्रपत्तिमें जोडना चहा है, सो वोई अर्जुन आपका द्रढ सखा होनेतें गुह्यतम, हितरूप होनेतें कहा है, फीर वो अर्थका दान सर्वके लीये परंपरातें स्वामीने दीया है, ओर हमारे पूर्वाचारी वातेंहि, यह चरम श्लोकरुप गीताके नवनीतकों अपना जीवन भोग्य वनाते है. फीर उनका सामान्य धर्माचरण भी भक्तोसें कम नहि है. उनको नित्य नैमित्तिक आज्ञारुप लगे है. वामे देवरुषीके नाम आवे तोभी वोतो श्रीपतिके प्रतिनिधी समजनेके है. श्रीपतीने जहां जो सेवा करनेका कहा, वहां वेसी उतनी सेवा करते है. वो सेवा देखनेमें देव पीतृमाता पीताकी हो, वास्तवीकमे श्रीपतीकी है. वाकी आज्ञानुसार हि उतनी वेसी सेवा हम करते है. नहि की वो देव पीतृ आदिकी इच्छानुगुण.

वेसेहि जो द्रव्य अर्थ संपादन करनेको धर्माचरण करना सोभी वाके कैंकर्य करनेके हेतुहि करते है, नहीकी आपके भोगके लीये यत्न करते है. तवहि तो वो संपादन करनेमेंमे, यथेच्छ व्यापारतें, यथेच्छ वस्तुका, यथेच्छ प्रयोग नहि कर सकते है. शास्त्रमें स्वामीकी आज्ञा है तेसे न्यायोपार्जित, सात्विक द्रव्य, स्वामीकी सेवाके लीये. वाने कही रीती वेसा मीलाना है. या प्रकार सर्व धर्म त्यागमें उत्तम धर्म रहते है उत्तम संकल्प भेद होता है. त्यों वो मनुष्य देवको पुज्य फलप्रद नहि होते है. ओर वडी वात यह हैकी वाके अनुष्टानमे भी अपनी अनन्यता वनी रखते है. आपमें अकर्तृत्वानुसंधान रखना स्वामीकी आज्ञानुसार रहना साधनोमे वोहि हेतु समजना है. यह सर्व आज्ञा पालनकेहि अंग है. परिणाम हमारेहि औषध हमकोंहि लाभद है, परमफलप्रद है, मुख्य वात यहां करनेकी यह हैकी, जो

धर्मानुष्ठान करना सो सर्व स्वामीकी आज्ञा भंग न हो, वो भय ओर स्वामी आज्ञा पालन हो, यह लालच रखना, फल सबंध भीतो स्वामीतेंहि रखनेका है. ओरतें रखे तो दोनो स्वामीके चोर होते हैं. अधिकारीन, महसुल आपके लीये वसूल करे न प्रजा वाके लीये उनको वो देवे,वेसे खांनगी व्यवहार कीये तो, तात्कालीक परीमीत फल, अंतअपराध वाते अज्ञान, प्रकृति सबंध, बंधन होताहि है. ओरका सेवन तबहि बंधनकारक कहा है. वो आप स्वामीके है, उनके पास जो है, सो स्वामीका है. वो भी स्वामीके भयसें, अपना अधिकार चला रहे है. वेसा हमारा कर्त्तव्य भी तो है. वो स्वामी न हम तें दूर है, न उनतें दूर है, उभयके भीतर वो एक हि अंतर्यामी है. उभय वाके शरीर विभूती, उभयकी स्वरुप स्थीति प्रवृत्ति के भेद वाके हि आधिन है. उभयका फल प्रद वोहि है. उभय के उभय लोक वाके हि वश है.वाको मुख्य समजनेके कीये तो सेवा है.वाको न समजे तो बंधन है. या प्रकार प्रपन्नका नित्यानुष्ठान क्रम वर्ण आश्रम के धर्मको लेके हि बने है. हमारे पूर्वाचारी उनका पूर्ण अनुष्ठान करते आते है. रवु शामति ओर नोकर अथवा साधारण आश्रीत ओर पुत्र, आशना ओर पत्निके जीतना पति आज्ञा पालनमें तार तम्य रहता है, उतना भक्त प्रपन्नका रहता है. प्रपन्न तो ओरो तें अधिक भय लालच तें कहोंकी प्रेम तेहि कहो स्वादु कर्त्तव्य भोग्य सरीख हि समजके सर्व करते है.

अर्थात् जो सर्व धर्मान परित्यज्य सो इतर करते है वो प्रकार वेसे उतना वो भावसें नहि करना. नयेका सब नयाहि है, ओर वो अर्थात् तो कुछ कहना भी भया है प्रकरणकों लेके यहां. इति—

चरमश्लोक अधिकार ४.

द्वितियपाद.

" मामेकं शरणंव्रज " मेरे एकके शरण आ. आगे कहा है " अहं " मेंतोकों सर्व पापोतें मुक्त करुंगा. यहां आपके लीये माम् " ओर " " अहम् " शब्द है वो आप, सो पुरुपोत्तम करके अवतार रहस्य प्रकट करते है. की परब्रह्म पुरुपोत्तम मोक्षप्रदाता सर्वके सो अवतार हो सकते है. वाके शरण जाना वो मुक्त करते है. परब्रह्म अवतार लेते है. सो अपना स्वभाव प्रभावन छोडकर वो दिव्य मंगल विग्रह हि शुद्ध सत्वमय होता है. अर्थात् जेसारुप परमपदमे तेसाहि यह आपका यहां है. स्वेच्छासे यहांभी देह धारण करते है एसे अवतारके रहस्यका ज्ञान दोनो प्रकार प्रपन्नको उपयोगी है. सद्वारक प्रपत्ति निष्टको उपाय पूर्वक ओर स्वतंत्र प्रपत्ति निष्टको तो स्वतंत्र सर्वेश्वरमि इच्छीत देते है. वावें स्वामीका सुलभत्व प्रकाश होता है. स्वातंत्र ओर सुलभत्व दोनो संग रहते है. स्वतंत्र न होवे. तृण सुलभ ओर मेरु दुर्लभ, उभय हमकों निरुपयोगी वेसा यहां नहि है. वो सुलभ शरण्य आश्रणीय ओर प्राप्य दोनो होता है. यह दो गुण करके सर्वका रक्षक सर्वका शेषी है. रक्षण करनेके अवसरको ढुंढनेवाली स्थिति स्वामीकी सिद्ध होती है. सुलभ ओर परसो कोनके लीये, कव वो गुणका वो उपयोग कर सके! जव वाका लाभ लेने वाला कोई आवे, ओर वो लाभ वो मागे तव, सो आप कहते है. में गुणवान हों. मेरे वो गुणका लाभ लेनेकी चाहत तुं कर, मेरे शरण तुं आकी, में फीर वेसा हो करके तेरेको अनुभव देके लाभ देउं, सर्व पापोतें मुक्त करुं. आप अभिमुख है हमको अभिमुख होनेको कहते है. तवहि देना लेना करना वने. एकको दूसरेके लीये करना है एकको दूसरेते लाभ लेना है. वाते दोनोका

वेसी इच्छासे वेसा योग होना चाहिये. सर्वेश्वर तो नित्य इच्छा वाला हैहि. चेतनको कहते हैकी इच्छा कर. जेसे आभरणको सुधारके धारण करनेको धनी आतुर हो वेसा भाव अहंकरके दीखाते है. एसी प्रपत्ति विधिरुप है. यह एक ब्रह्मविद्या है. वाते शरण्य प्रसन्न होता है वेसा आपहि कहता है. प्राप्यका उपाय या प्रकार बनते है. भक्ति योगतें जो प्राप्य. सोहि प्रपत्तितें है.

जेसे स्वामी भक्तितें वश होते है, ओर जो फल देते है, वेसेहि प्रपत्तितें प्रसन्न होकर वो फल देते है, तो अब चाहियेकी, अकिंचन भूत अधिकारी यथाविधि रक्षाकी अपेक्षापूर्वक भरन्यास करे, फीर वाको ओर कुछभी उपाय करना नहि पडेगा. वो समजानेको "एक" पद "माम्" के साथ है. शरण आवे तोमें एक वस हो जाउगा. प्रपत्ति उपाय फीर ओरकी अपेक्षा नहि यह "माम्एक" यह दोनो पदतें कहा है.

जो नारायण क्षीर सागरवासी सो मथुरामे आया है, तो जो "माम्, अहम्" केहेने वाले श्रीकृष्ण सोहि अष्टाक्षरमें कहे नारायण है. वहां जो शरण्यके प्रकार है वोहि यहांभी समजने द्वयमें भी वोहि है. तबहि तीनो मंत्रकी एकता है. तीनो मंत्र एकके है. ओर वातें अष्टाक्षरमें ओर द्वयमें, नारायण पदतें कहे शरण्य प्रतिपादक गुण सर्व रक्षकत्व, श्रीपतित्व, नारायणत्व, सो यहां हैहि एसा समजना ओर वो नामको लेकेहि, परत्व, सौलभ्यको उपयुक्त जो सर्वज्ञत्व, सर्व शक्तित्व, परम कारुणीकत्व, सौशील्य वात्सल्यादिभी लेने, तेसे द्वयमें कहे शुभाश्रयत्व परत्व सौलभ्य व्यंजक पार्थसारथी दिव्य मंगल विग्रह विशेषहि प्रकाश करता है.

यहां वात्सल्य, स्वामित्व, सौलभ्य, ओर सौशील्य, यह चार गुण प्रकाश होते है. अर्जुन व्याकुल रहा वातें करुणातेंहि आपने

" मेरेतें कोइपरत्तर नहिं है यह आपतें प्रकाश कीया ओर वातें "हे कृष्ण हे यादव " मेरा रथ वहां ले जाके खडा कर एसा कहा सो आपने कर दीया ओर वाकेहि साथ, सारथीपनेमें रहे देखनेकी अपेक्षा भयी तव विश्वरुप दर्शनभि करवाया फीर सौम्यरुप विग्रह भी दीखाया.

शरण्यके जो गुण कहे उनमें आश्रीतके संरक्षणके लीये जो मुख्य चाहिये सो सर्वज्ञ सर्वेश्वर रहेपर सदा कारुणीक है, येहि ठीक है. ज्ञानशक्ति सर्वके लीये साधारण है वातेंहि तो रक्षणका भार न उठावेंगे वालीये तो करुणाहि कारण वनती है. वाके साथ वाकेहि दूसरे रुपमें कहे वेसे, सौशील्य वात्सल्यादिक गुण अनुग्रहकारक है. शास्त्रमें परांकुशादिनेभी वेसाहि कहा है. पूर्वाचारीभी केवल कृपातें आपके योग्य करो करके करुणाको प्राधान्य पद देते है, ओर काकका पालन कृपातें कीया एसा कहा है.

गद्यमें भी केवल मेराहि दया करके, मेरीहि कृपा करके एसे श्रीमुख वचन है या प्रकार आश्रीतके रक्षणमें मुख्य, ओर परिकर करके संभावीत सर्व प्रकार विशिष्ट आपकी अभिमुख स्थिति "माम्" करके दरसाई है.

एक शब्दमें प्राप्य वोहि प्रापकका अर्थ है, उपाय तेसा फल भी में, एसा दीखानेको दो शब्दका प्रयोग आपके हि लीये कीया है. मामेव न कहेकर यहां माम एक कहा है. वामे शरण्य आप वस है. हमको उसकी सहाय में नहि गीनना, शरणका सव कुछ शरण्य हि करते है " कर्त्ता शास्त्रार्थत्वात् " करके जीवको सूत्रमें कर्त्ता कहा है. परंतु जीवका कर्तृत्व रहे पर भी, वो पराधीन अल्प विषय ओर प्रतिहतके योग्य होता है, वा तें यहां जो " शरण्य हो " करके हमको कहते है, वो भी वाके प्रसाद तें एसा जानना, बाकी

कटाक्ष पूर्वक प्रेरणा तें हमारा सहकारी भाव नहिं वाने करण कले-
वर दीये, वाने उपाय समजाया, वाकी सहाय तें अनुष्टान कीया,
फीर उपाय कर नें हमको, आपको भी मानना उचीत नहि है. वा ते
एक शब्द है. हम तो अकिंचनहि है. ॥ वा ते आनुकुल संकल्पादि
विशीष्ट प्रपत्तिके विना ओर कोई परिकर नहि है. कोइ भी प्रकार
तुं द्वय वक्ता भया की तेरा काम, में वना देउंगा एसा कहने तें केसी
भी प्रपत्ति हो तो आप वस मानतें है वहां ओर परिकरकी कहां
वात ! सकृत प्रणाम तें भी काम वना है. द्रौपदी, दमयंती, राक्षसी,
वीभीषणं, क्षत्रवंधु मुचकंद, गंजेंद्र पांडव, सुमुख, त्रीशंकु, शुनशेप,
कीरात, काक कपोत आदि जव शरण भये तव आनुकुल संकल्पादि
विना उनका ओर कुछ भी अर्थ सिद्धि में करना नहिं पडा है. वेसे
हि मोक्षके लीये शरणागतिका भी समजना जहां अधिकारीका संकल्प
भयाकी, फलके लीये स्वामीका संकल्प होता है. " माशुच " करके
येहि विचारको द्रढ कीया है. जेसे धर्मके साथ सर्व शब्द है, पापोके
साथ सर्व शब्द है वेसे माम् के साथ एक शब्द है. सर्वके लीये एक
वस है. जो स्थान ओर उपायो तें पाया जाता नहि है वो न्यास तें
हि पाया जाता है करके कहा. वहां ओर उपायसे थके वा अशक्त
समजे तो चिंता नहि. येहि उपाय वस है. यह सिद्ध औषध सर्व
व्याधीयोको शमन करनेवाला है. वो औषधी तें आरोग्य आता है.
उतना हि नहि, फीर वोहिं औषध भोग्य भी होता है. क्योंकी वो
स्वामी हि तो है. तात्पर्य जो अर्थ सर्व धर्म तें मीले, सो सव भी
एक प्रपत्ति तें हि मीलते है ओर वा ते धर्म अर्थ काम के लीये भी
ओर देवताओका आराधन तें मीले सो प्रपत्ति तें मीलता है वा तें
नित्य नैमीत्तिक में जो देवोका आराधन आता है उन तें जो कुछ
मांगे तो वा तें प्रपत्तिका भंग होवे. ओर तें मांगना क्यो ! वोहि
सर्व इष्ट देती है, वेसे हि उपाय के विरोधी होतो उनकी निवर्त्तक

भी प्रपत्ति होती है त्यों प्राप्तीके विरोधीको भी नीवर्त्तक भी होती है प्रथम वात गीता भाष्यमें ओर दूसरी गद्य त्रयमें कही है वा में विरोध नहि है. उभय स्थल में एक दूसरे अर्थका परस्पर अनादर नहि होता है सर्व अभीमतके साधनरुप वो है. वाके दो उदाहरण दीये है. जेसे प्रणव मंत्रांतरमें प्रवेश करके त्यों स्वतंत्र भी फल देता है तेसे ये प्रपत्ति अधिकारीको लेके भक्तिका अंग करके, ओर स्वतंत्र भी फल देती है एसी वाकी व्यवस्था है. सम्यक् ज्ञान तें मोक्ष, गंगामें मरण तें मोक्ष, ओर वाको प्रणाम कीये तो भी मोक्ष. एसा तो उनका साक्षात् मोक्षका साधनत्व समान करके कहा हैं वो वास्तविकमें साक्षात् मोक्षके परंपरा साधन करके हि होके उपाय रुपवो है. उनकी प्रशंसा करनेको हि है. अन्य उपायमें प्राप्य सो प्रापकत्व नहि है. वो प्रपत्तिमें है एसा यहां दीखाना प्राधान्य है वो वाकी हि विशेषता है वा तें " एक " पद है एसा कोई कहते हैं. एसे एक शब्द मामके साथ रहे तो भी वो नारायण में श्री कोसदा विशिष्ट समजनी हि प्रभु श्री गुण विग्रहवान है. श्री सर्व भूतोकी इश्वरी है. यह भगवानकी प्रीया संसारीयोंको तारनेकी स्वामीकी दीक्षामें सह धर्म चारीणी है. जेसे निमित उपादानत्व एकमें है, वो एक कारण कहा जाता है. वेसे श्री ओर स्वामी यह एकके शरण जानेका कहेते एककी उपासनामें गुण संग लेते हि है वेसें जेसें प्रभारूप ओर प्रभा वाला है तो भी एक देव कहा जाता है. वा तें हि संसारार्णव तारीणी करके भी वाको हि कही है उभय उपाय उपेय है यह द्वयमें कहा हि है. यह खास रहस्यार्थ है. फीर यह शरणमें द्वयमें जो अर्थ लेनेके कहे हैं वो सर्वका भी अनुसंधान करना, वोही तो ये है तो वो सर्व गुण विशिष्ट है हि अर्जुन के शरण्य भये उनको अनालोचीत विशेष अशेष लोक शरण्य कहे है. श्वेताश्वेतरमे सर्व विषय कहे है. कृष्ण सनातन धर्म है. तुम शरणोके शरण्य हो. योगो योग विदके नेता हो. अमृ-

तके साधन ओर साध्य हो. एसा विना संकोचके श्रुति इतिहास पुराणमे श्री हरीको सर्व विषयीक कहे है.

शरण वरण कालमें हमारा अनन्य शरणत्व होना चाहिये. द्वय-मे प्रपद्ये है वेसा यहां सपरिकर आत्म निक्षेप शरण शब्द तें कहा है. आनुकुल्यादि अंग भी द्वयाधिकरणवत् समजने. सकृत् शास्त्रार्थ भी वोहि है ॥ सकृ देव प्रपन्नाय वचन येहि विषयका है एसा करनेवाले महा उदार सर्वके शेषीके विषयमें भरन्यास करने वालेको जेसा अपना अभिप्राय वेसा फलमें विलंब है. स्वामी तो यथा भिलाष फलदाता है हि. जो संकल्प द्रढ होतो न्यास विद्या प्रारब्धकी भी नी-वर्त्तक है आर्त्तप्रपत्ति याका हि नाम है यह भी कह चूके वोहि वात यहां है.

" व्रज "करके हमारा कर्त्तव्य यहां दीखाया है. जेसी ओर ब्रह्म विद्याओमें ओर विधिमें कही है वेसा यामेंभी हमारेपर अमुक प्रकारका वोजा छोडा है वो हमकोहि वहनेका है. हमारा कर्त्तव्य वाकी आज्ञाविधि अनुसार हमकोहि करना, एच्छीक नहि वनना, वाते हमारा कर्त्तव्य परतंत्र ओर हमकोहि करना वातें स्वतंत्र कर्त्तव्य कैंकर्यकाभी वोहि हिसाब है. यहां शास्त्रानुसार विधि रुप कर्तृत्व है वामे वने, न वने, विपरीतभी वने, त्रिगुण संयोग होनेतें यथाव-स्थित न भी वने. मुक्त दशामें साक्षात् आज्ञा होती है. प्रतीबंधक नहि होते है, वातें पूरा पराधिन कर्त्तव्य वहां है ओर वो वहां पूर्ण हो सकता है. यहां हमको सावधान रहेनेका है. वातें व्रज एसी विधि है. मात्र क्रिया श्रय कर्त्तव्य सो तो अचेतनकाहि, जेसे छुरी काटती है. चेतनको भी मात्र भोगकालमें क्रिया श्रयकर्तृत्व है. परंतु कर्त्तव्यके लीये तो चेतन करके हमारे प्रयत्नाश्रय कर्त्तव्य है. ज्ञान, इच्छा, प्रयत्न, कर्म विधि यह स्वाभाविक परंपरारुप है. वेशक वामे ज्ञान खोलना विधि अभीमुख करना: करण कलेवरादि विधिके अ-

नुष्ठानके लीये साधन साहाय देना वो स्वामीको ओरसें है परंतु एसे कर्त्तव्यमें उभयके यथोचित विभाग है. सहाय वाकी प्राधान्य है. इच्छा हमारी प्राधान्य है वातें वो तो शरणागति करनेकी इच्छा कर एसा वोध देते है आपन इच्छा करातें है नई ईच्छाके हमारे कार्य कर देते है. हमारा कर्त्तव्य भाग वानेहि ठहराया है. वो हमारे लीये नियत है. वो हमको वाकी आज्ञानुसार करनांहि चाहिये. ओर तबहि वातें वो कहेते है सो फल वोहि तो देनेवाले है, वातें अवश्य मीलेगा. या प्रकार सवंध ज्ञानके उपरांत विधीयमान ज्ञानभी चाहिये यामे मुमुक्षुके लीये दो प्रकार विधी है. भक्ति करे या प्रपत्ति वो प्रपत्ति सो कह चूके है वेसी सपरिकर रक्षाभर समर्पणरुप यह सवंध ज्ञानके अनुसंधान पूर्वक होनी चाहिये. " मामेकं शरणं व्रजका " येहि तात्पर्य है. इति—

चरमश्लोक अधिकार ५.

तृतीयपाद.

" अहंत्वां सर्व पापेभ्यो " में तेरोको सर्व पापोतें यह तृतियपाद है. वो मुक्त करेंगे करके चोथे पादमे कहते है. यहां येहिपदोका अधिक विवरण है. " में तेरेको " " ओर " सर्व पापोतें " पूर्व अर्धमे द्वयके पूर्व खंडका अनुसंधान करना, ओर उत्तरखंडका अनुसंधान यह उत्तरार्धमें करना. उत्तरखंडमें कहे " नमः " शब्दतें जो अनिष्ट निवृति मागी है सो यहां कहते है. पूर्वार्धमें शरण्यका स्वकृत्य कहा है. " मोक्षयिष्यामि " " मुक्त करुंगा " कहनेतें " अहं " आ गया वो अहं कहनेवाला सर्व पाप विमोचनके उपयुक्त, घटीत घटना सामर्थ्यवाला होना चाहिये, वेसा वो है " त्वां " कहे तो अपराधिको, में जो समान अधिक तें रहित हां सो कोई व्याज करके

प्रसंन्न होके, दया लाके अपराधोका क्षमा करुं तो कोइ विरोध नहिं हैं. विष्णु भगवान मोक्ष देनेवाले हैं. पशुको पाशमें परमेश्वरने पाशित कीये हैं वा तें उनको वोहि छोड सकता है. अन्य कोई नहिं. वो "अहं" कहने वाला सहज करुणा निधि होके, प्रपत्तिको निमित्त मान कर, वाके उपर वो निमित्तसें खास प्रसंन्न होकर, आपके निरंकुश स्वातंत्र्य तें, सर्व पापोका निराकरण कर देनेको चहता है. ओर वेसे हि वाके सर्व अपराध क्षमा करता है. की वाका उनतें विमोचन हो जावे. यो " अहं शब्दमें अर्थ है. वो वेसे है.

"त्वांम्" कहेतो हम "शरण" नत्वेनाहंसें उपदेश पाते आये चित अचित् और इश्वरका ज्ञान पाये भये, ऐश्वर्यादि पुरुषार्थोका अल्प अस्थिरत्वादि दोपवाले समजकर, स्वामीकी प्राप्तीरुप पुरुषार्थकी अभिलाषावाले होकर, वालीये जो ओर उपाय कहे वो दूष्कर मानकर, उनकी आशा छोड देकर वो फीर प्राप्यके विरोधियोका निराकरण कर सको एसा जो, में वाका भरंन्यास करके, कृतकृत्य होते है. फीर मोक्षार्थके लीये कोई ओर कर्त्तव्य उनका बाकी नहि रहता है. जो ओर उपायमे आपको असक्त समजके आपका भार वाके उपर धरें तो वो मुमुक्षुको पाप प्रतिबंधोतें वो शरण्य मुक्त करता है एसा आपहिका वचन है.

पाप कहे तो शास्त्रतें जीनको अनर्थका साधन जाना गया है सो. अनर्थ नाम प्रतिकुल प्राप्ति ओर अनुकुल निवृति, यहां पाप शब्दमें मुमुक्षुका तो संसारीक पुण्य भी अनिष्ट हानेतें, पाप हि समजनेके है. परमात्माके स्थानके आगे देवलोक भी नर्क प्राय है, करके कहा है. वा तें मुमुक्षुको स्वर्ग भी नर्क तुल्य है. उनको स्वर्गके हेतु ओर नर्कके हेतुमें तारतम्य नहिं दोनो विघ्नकारी समान है. मुमुक्षु सुकृत दुष्कृत ते अलग होता है करके कहा है. या प्रकार पुण्य

पापरूप बंधक वर्गको पाप शब्द तें समजकर बहु वचन करके उनका अनंतत्व दीखाया है. फीर भी " सर्व " शब्द है सो विरोधी वर्ग मात्र मन वाणीका या तें जीवन हो, वो सर्व करके तीन चूर्णीका तें गद्यमें वो तीन प्रकार कहे है. वो सर्व पापो में समजनेके है. प्राप्तिके विरोधी भूत कर्म, उनका कारण अविद्या, विपरीत वासना, विपरीत रुची, और स्थुल सुक्ष्म रुप प्रकृति सबंध, यह सर्व तें मुक्ति होनी चाहिये. पाप कहे तो वो सर्व संपूर्ण पापोको खपाके, फीर मुक्ति पाते है एसा कहा है. अधिकारी वो पूरे करनेको हि रुक रहे है. कोईके अनारब्ध जावे ओर आरब्ध पूरे भोग चूके तब मुक्ति कही है. गद्यमें तो आरब्धकी भी क्षमा चाहि है. ओर स्वामी वो देवे फीर तो प्रारब्धकी भी क्षमा देते हे एसा ठहरा. वा लीये समाधान एसा है की फल देनेकी प्रवृत्त भये कर्मोमे जन्मांतर दिवसांतर चले एसे कर्मके फलका आरंभ हो चूका हो. प्रारब्ध रुप भोग रहे हो तो भी, स्वतंत्र प्रपत्ति निष्ठके वो अनिष्ट रुप होनें तें वा निमित्त वाका चित्तशोका विष्ठ रहता हो तो वाका सरवेश्वर शमन करते है. वोहि क्षण मोक्ष न मीलने तें जो अधिकारी स्वामी संयोग बीना आत्मा धारण करना अलभ माने उनकी वेसी अतिशय आर्तीको देखके उनके समग्र प्रारब्ध कर्मोकी सद्य क्षमा देते है. या प्रकार आरब्ध कार्य भी क्षंतव्य है. प्रपत्ति काल पर्यंतके तो सर्व एसे क्षमा होवे. परंतु गद्यमें जो अब वने उनको क्षमा करना करके कहा सो केसे ! वो प्रमादसें हो जावे तो उनकी क्षमा होती है, प्रारब्धकी समाप्ती पर्यंत यहां रहना पडता है वा में प्रपत्ति करनेके पूर्व कालमें जीनका आरंभ हो गया होवे ओर पीछे वाकी समाप्ती करनेमे बहुत समय लये एसा हो तो वो भी क्षमा करते है. बुद्धि पूर्वक जो करे तो वाकी क्षमा नहि होती है. वाकी शिक्षा भोगनी पडती है. वा लीये प्रपत्ति रुप प्रायश्चित करे तो वो पश्चातापको बदला मानकर शिक्षा नरम

होती है न पस्तावे तो शिक्षा पूरी होती है. वा तें पापो तें तो सर्वथा सर्वदा बने वहां लो वचना वन जाय तो पस्ताके क्षमा मागना, क्षमा योग्य है उनकी क्षमा स्वामी उपाय होनेतें आप करेगे वा तें हि तो यहां कहा है, वो निश्चय है इति.

चरम श्लोक अधिकार ६

चतुर्थ पाद

" मोक्षयिष्यामि माशुच " मुक्त करुंगा शोच मत कर यह चोथा पाद है.

भगवान कभी कहतें है में नहि क्षमा करुंगा यहां कहतें है सर्व पापो तें मुक्त करुंगा वो केसा ! उभय वाक्य के विषय भिन्न है वो क्रुर पापीओके लीये है. जो प्रार्यश्चिय करनेको चहते हि नहि. यह उनके लीये है जो योग्य प्रायश्चित करे. प्रायश्चित करे तो रावण के विषयमें भी आपने कहा है की रावण हो तो लाओ. वो शरणागति रुप प्रायश्चित करे तो तो आप क्षमा भी करते. वाने वो नहिं की, आपने क्षमा भी नहिं की. सर्व पाप उचीत प्रायश्चित तें क्षमा होता है.

सर्व पापो तें क्षमा करुंगा कहे तो, अनादि तें कीये भये विपरीत अनुष्टांनो ते भगवानका जो निग्रह रुप अभिप्राय है, वो कोप आप छोड देंगे, वो विचार न रखेंगे वो निग्रह तजे तो वाका कार्य अविद्या सो निवृत्त होती है. ईश्वरको निग्रहकी निवृत्ति नाम—स्वामीकी अप्रसंन्नता न रहे. जीवकी अविद्याकी निवृत्ति नाम—वाके ज्ञानका विकाश आदि—पुण्य पाप रुप संसारका जो कारण है वाकी निवृत्ति. जेसे उपाय कीये जावे तेसे वो क्रमते हठती जावे. संचित पापोका तो प्रपत्तिकीके नाश भया. पीछे के पापोमें जेसी बुद्धि वेसा

फलमें भेद है. पापो तें मुक्तिके दो प्रकार है, उनका नाश ओर उनका असंश्लेप. प्रथम तो द्रप्त शरण शरणागति हि एसे भावसें करता है की वो प्रारब्ध भोग छूटे. वाका देहावसान समय वो भोगके अंत आवे, तब वाकी मुक्ति हो, एसा हि वो मागता है. अर्थात् वो प्रारब्धकी क्षमा नहिं चहता है, नवा लीये उर्चीत उपाय करता है. जा लीये उपाय करता है वा में दो भाग है. प्रपत्ति करनेके पूर्वके पाप, वो तो विद्या महात्म्य तें जो प्रारब्ध न हो सो, प्रपत्ति तें नाश हो जाता है. पीछे के पाप प्रारब्ध के अवसांन पर्यंत में प्रयाद सें हो गये हो तो वाका असंश्लेष होता है. वो क्षमा होते है ओर. प्रारब्धको वो भोग छुटता है. एसा वा के कर्म मात्रका हिसाब चूक जाता है. तब वो मुक्त होता है. ओर कह चूकेकी आर्त्त प्रपत्ति कीये तो सब पापोकी सद्य मुक्ति हो के इच्छानु गुण फल में भेद है.

प्रारब्ध भोगनेके समयमें जो प्रीति पूर्वक कैंकर्य रुप कर्म होते है, वो तो प्रपत्तिका हि यहांसे हि, मीलाफल है. वो तो बंधन कैसे होवे ! कैंकर्यके लीये तो प्रपत्तिकी फीर वो मंद करने तें मंद फल मीलता है. यहां वन सके वेसा कैंकर्य यहां प्राप्त होता है वो तो भोग्य है, फल है परंतु वा के साथ भी पाप हो जावे तो, उनमें जो प्रमाद तें पाप हो जावे उन पापोकी क्षमा मीले. ओर बुद्धि पूर्वक होतो शिक्षा है हि. सर्व कर्मका अंत आये पे, प्रपत्ति तें मुक्ति है हि. जो पापका नाश ओर असंश्लेप रहे उनकी बांटनी वो प्रपन्नके सुहृद द्वेषीयोके वीचमें होती है. भगवान्के प्रीयके उपर प्रीति करनी यह पुण्य है वा तें, वो प्रपन्नके असंश्लेप पुण्यके सुखरुप फलके भागी होते है वेसे हि वाके द्वेषी वाके असंश्लेप पापोके भागी होते है. भगवान सर्वके अंतर्यामी, उनके संकल्पाधिन कर्मका भोग सो कीनको केसा भोगाता है वो आपहि शास्त्रमें प्रकट कर रखते है यह सर्व सूत्रोमें निर्णीत कथन है. उपाय विरोधी ओर फल विरोधी एसे

दो प्रकार पापोके है. अधिकारीकी अपेक्षाके अनुगुण उनकी व्यवस्था भी होती है. प्रपत्ति सर्व फल प्रद है. गीता भाष्यमें यह दोनो अर्थ यह श्लोकके दो प्रकारके अधिकारीको लेके कीये है. जेसी भावना वेसी सिद्धि है. अंततो सर्व पापो तें विमुक्ति ओर फीर अनावृत्ति कहि हि है.

॥ सर्वपापेभ्य मोक्षइष्यामि " में पापरुप विरोधीसो अनिष्टरुप उनकी निवृत्तिमें पुण्यकी निवृत्तिभी मागी है. सोभी होती है, परंतु वामें ते सार यह खींचनेका है की, पुण्यतें यद्यपी अनुकुल अनुभव मीलता है परंतु फलमें दरज्जे है. चार पुरुषार्थ ओर पांचमा परम पुरुषार्थ है. कामतें मोक्ष श्रेष्ट वो ठीक है परंतु वाते भो श्रेष्टसो परम पुरुषार्थ है. नित्य भगवत् कैंकर्य प्राप्तीरुप फलतें वो उतरता है. अन्यमें रुकेतो वो परम फल भोगन् पासके, वेसेवो यद्यपी ओर भोगरुप है तोभी विरोधीहि है. इष्टकी प्राप्ती न होवहांलो विरोधी रहाहि. सर्व पापतें मुक्ति तबहि मानी जावे जब स्वामीकी नित्य प्राप्ति हो. यहां भगवान आगेके श्लोकोमें, आपकी प्राप्ति वोहि परम फल करके बहुत जगे कह चूके है. वो मीले वहां पर्यंतके सर्व विरोधीतें मुक्ति आप कहते है, में करुंगा. बीचमें प्रकृति सवंधतें मुक्ति वोतो एक प्रकार भयी दुःखरुप सबंध सदाके लोये छुटा वाका हेतु करुणा. पूरा कार्य होनेको कृपा विशेषभी चाहिये वालीये अब कहै—

जब जीनके उपरतें पाप हठते है, वाको प्रकृति सबंध छुटताहि हैं तब जेसेहि वाके उपरका मल हठेतो वाके स्वरुपका आविर्भाव होता है. वाकी कांति प्रकट होती है. पूर्ण विकासीत होती है, तेसे आत्माके पूरे पाप हठनेतें वाका ज्ञान पूरा खूले तो पूर्ण अनुभव करे. मुक्तिके स्वरुपका आविर्भाव होता है. वो जो बीचमें स्वात्मानुभवमें रुक जावे, तोभी पूरा आविर्भाव न भया क्या, मुख्य देखनेकाहि न

देख पडा. आत्मानुभव वो विरोध पापरूप भया वोभी तो हठ जाय वातेंभी आगे वढे. जब पूर्ण ब्रह्मका पूर्ण अनुभव करे वेसा ज्ञानका आवीर्भाव होवे तवहि सर्व पापतें विनिर्मुक्ति भयी; सो यहां भगवान कहते है किमें करुंगा. प्रपन्न, गद्यमे कही रीतीही अनिष्ट निवृत्ति ओर इष्ट प्राप्ती चाहता है. वोहि मीले एसा, स्वामी सर्व विरोधीका निवारण करते है. वो गद्यमें कही रीती अनुसारहि वोहि प्रकार फल देते है.

फीर अंतमें "माशुच" कहेकर अव प्रसन्न चित वननेका कहते है. जो बंधुको मारनेका पाप लगेगा, न मारे तो भीक्षातें निर्वाह करना यह सर्व अधर्म है, फीर धर्म कया है! सोभी निश्चेयरूप निश्चीतवो नहिं समजमें आनेतें वाको वो परम फल जो मीलानेका देहका द्रढ कर्त्तव्य वो केसे ! वालीये मुख्य चिंता वामे विरोध करे एसी स्थीतिमें आप आफसा समज कर, आपकी फीर एसी दुर्बुद्धि भयी वाते शोक रहा, वो शोकको निवृत्ति, परम पुरुषार्थका उपाय मीले ती होवे, वो कहनेको कर्मयोग, ज्ञानयोग, ओर भक्तियोग, कहा. यहकर्म कर्मयोग रुप करनेको समजाया, अंतभक्ति योग कहा. फीर कह दीयाकी जेसी इच्छा होवे, वेसाकर परंतु वोसव सूननेपर कहोकी, गीता पूरी सूननेपर कहो, अर्जुननें नहि कहाकी, मेरा शोक गया, रस्ता मीला. वो रस्तातो दुष्कर है, वाको वेसा लगा फीर भी वो गुह्यत्तम है करके आपने कहा याद दीया तोभी वाका मुख विकाश नहि भया. तव आपने यह प्रपत्ति उपाय सुकर ओर वोहि फल देवे वेसा कहे कर, कहाकी अव शोक रखनेका हेतु नहि, तेरेतें वने एसा उपाय, ओर तेरेको चाहिये वो फल ओर येहि उपाय ओर येहि फल देनेवाला, सर्व भारमे वहने वाला भया. सत्यवादि सर्व शक्तिमान दयालु सो कार्य सिद्धि होगाहि. तेरा होगाया नहि यह शोचको अवकाश नहिं, तुं वालीये अधिकारी है. आगेभी कहा

रहाकी यद्यपी जन्म तो दैवी, आसुरी, दो प्रकारके लोक होते है, परंतु तुं तो दैवी संपत्ति वाला है वातें ॥ माशुच ॥ वेसा यहांभी कहा है. माशुच जो कहा वाको द्रढतातें मानके प्रसंन होजा मंदता रखके मंदन रहे, आगेका उपाय कठीन रहा वातें शोक वना रहा, अवजो उपाय कहा वाके अनुष्टानमें तेरा कार्य मेरेपें भार धरना इतनाहि है. फीर तो मेंहि फलीभूत हो कर जा तेरा रक्षण न करुं तो मेरेको अवद्य लगे, वो केसे वनेगा ! वाते अवशोक रखनेका संभवहि नहि है, एसा कहनेका भाव है. उपाय ओर फल सीद्धिके लीये अव तुं निर्भर निःसंशय वन एसा कहते है. मेरेसें वनेगा वा नहि वो शोक अव न रख. तो फीर तो शोकका ओर कोइ कारण नहिं रहता है, क्योंकी स्वामीकी शक्तिमें वाको संशय नहिं. वोहि तो उपाय है. वोहि तो फलप्रद है. अव न ओर उपाय ढुंढना, न यह उपाय मेरेते वनेगा वा नहि एसा संशय रखना यह तात्पर्य है, वो द्रढ रहेतो वा-लीये शोचभी न रहे. वोहि निमित शोच रहा सो निवारण कीया. जो फलके लीये इतने आतुर हो जाते है, ओर वृत्तमान स्थीतोको एसी दुःखह मानते है, ओर जीनको अब क्षण विलंब प्राण नीकल जाय एसा लगे; वेसे शोक वाणे आर्त है. वो आर्त भावसें शरणा-गति कीये तो उनका शोक सद्य फलति है. ओर दूसरे देहा वसान-में मोक्ष चहनेवाले उतना विलंव सहते है. उनकाभी अंतयेहि उपा-यतें, वोहि फलरुप कार्य होगा. उनको द्रप्त कहते है. उनको भी अव शोक नहि रखना. सुक्रततारतम्यते, भगवत अनुग्रह तारतम्य होता है. जेसी शरणागति वेसा अनुग्रह. सद्य चहेतो सद्य. विलंवतें मागे तो विलंवते, न मागेतो नहिं. द्रप्तके विषयमें उत्तर कृत्यको लेके शोच रहे वालीये माशुच कहा समजना. गद्यमे " निसंशय सुखमास्व " कहा है हि.

ज्ञान ओर अनुष्टान दो है दोनोके लीये माशुच कहते है, क्यों-

कीवो दोनो फलके प्रयोजन है, वाते उपायके अनुष्टानकी पूर्व अपर मध्य दशामें जो शोक संभवीत हो वाकी निवृत्ति कहते है. अधिकारीको उपायमें उत्तर कृत्यमें परिपूर्ण कैंकर्य पर्यत फल सिद्धि विषयीक चिंता शोक रहता है, तो यहां उपाय करना है वामे जाती वर्ण आश्रम विशेषका नियम नहिं. प्राप्यमें रुची, प्रापकमें विश्वास, अकिंचन ज्ञान आदि हो.उन सर्वक अधिकार यामें है, वो सपरिकर क्षणकाल साध्य है सुकर है. आवृत्ति विनाका है. ओर उपाय संगमेभी न चाहिये, वेसा है, अपने अपेक्षीत कालको अपेक्षीत फल देने वाला है. वाते अव ओर उपाय ढुंढनेकी भ्रमणातो रखनाहि नहिं. उपाय निमित शोचता करनाहि नहिं ओर जो होवो वाते सर्व प्रकार उतरता है. श्रेष्ट येहि है. माशुचके विषयमें खूब खोलते है.

एसे लघु उपायसें वश हो जाने वाले सर्व फलप्रद, शरण्य, सर्वको सुलभ, विश्वासनीय, निरंकुश स्वतंत्र हे. सो कहा वेसा करेंगेहि. वाते उनके विषयमें शोच करना उचित नहि.

यह उपायके अनुष्टांनके पीछे आज्ञा अनुज्ञारुप कैंकर्य कीये जानेमे वो प्रपत्तिके अंग नहि है. वाते देशकालकी विगुणतातें उनमें वैकल्य आवेतोभि, प्रपत्तिमें वीकलता नहिं होती है, वाते शोक करनेका हेतु नहिं. भगवानके कैंकर्यमे अनर्हता जनक एसी बुद्धि पूर्वक भागवता पचारादिक उपन्न हो जावे तो भी फेर पश्चाताप होगा,प्रपत्ति करना होगा, ओर वाका निवारण होगा, ओर निरअपराध कैंकर्य फीर चला आयगा. बुद्धि पूर्वक अपराध हो जावे तो भी आप कह गये है की, एकवेर प्रपन्न हो गया फीर वाको में कभी नहि तजता हों, वा ते आप वाको अनुताप उपजाकर उचीत प्रायश्चितमें लगाकर साफ करते है. ओर यदि कठीन प्रकृतिवाला होतो शीक्षा करके

क्लेश उपजा के भी अपराधका निस्तार करते है. ओर वो भी फल कालके पहिले हि हो जाने तें फल प्राप्तिमें विरोध नहिं आता है. आर्त प्रपन्न हो तब तो तब हि फल सिद्धि हो जाती है. नरक तुल्य शरीर लगने ते, वो छोड हि देना चाहते है वेसे छुट भी जाता है. ओर द्रप्त प्रपन्न हो तो वो विलंब कालमें अंत फलका संशयवाला नहि रहता हैं. शेष सुकृत, दुष्कृतका रस्ता हो जाता है. अंत विशुद्धि पाता है. एसे वा लीये भी शोकका कारण नहि रहता है. त्यों फलके लीये क्यों करना वो बात तो रहती हि नहि है, वोतो सदा बना बनाया है. आत्मावलोकन अभिनहि भया. यह चिंताका भी प्रसंग नहिं. स्वामी काम बना देते है. वो सर्व आप करा लेते है. या रीती सर्व प्रकार शोचके हेतुओकी निवृत्ति करनेवाले वोहोनेतें, हमारे पर स्वामीका अत्यंत अनुग्रह हैं, एसा समज कर हमको शोच नहि करना. जब नीग्रह काल रहा तब यह सुझ नहि पडा. अब अनुग्रह कालसें यह बना है तो मानो कृतकृत्यहि भये है, यह चरम श्लोकका सार है.

यह चरम श्लोकमें पदको देखेतो, अधिकारीको अकिंचन परिकर परिकर नहि दुष्करममें मनहि नहि करना, जो उपाय है वाको सुलभ समजना, मुमुक्षु बनना यह उचीत है. शरणको देखेतो वो केसे समुजे गये ! गये ? हम उनको केसे जाने माने—

शरण्यका सुलभत्व, सुशीलत्यादि गुणपूर्णत्व, हिततमो पदेशीत्व प्राप्यकाहि प्रापकत्व, निरपेक्ष सर्व विषय कर्तृत्य, व्याज मात्र प्रति क्षत्व ओर उपाय करानें ते निरपे क्षत्व, ओर परिकरते निरपेक्ष प्रसाद्यत्व, सर्व फलार्थी शरण्यत्व, अन्य शरण्यका ग्रहे तो वो नहि सहनेवाले. शरण्य हि अन्य सर्व उपायके स्थानमे समजने एसे शरण्य है.

स्वामी जो उपाय होते है उनका सर्व परिकरतें अधिकत्व. एक बेरहि करने जेसा वामे सुकरत्व, अविलंबीत फलप्रदत्व, प्रारब्ध निवर्त्तन क्षमत्व. अधिकारीते कर्तृत्व, ओर शास्त्र वश्यत्व, वो रक्षक वनते है सो उनमें परम कारुणीकत्व सुप्रसनत्व निरंकुश स्वातंत्रत्व दुर्निथारत्व पर अनपेक्षत्व अवसर प्रतिक्षत्व है. शरणागतके लीये देखे-तो, वाका कृतकृत्यत्व, जो रुपाय ग्रहण कीया है वातेहि पुरा फल पानेवाले, भगवानका अत्यंत प्रीयत्व, वीरोधी वर्ग कोतने ओर केसे भी रहे तोभी उनकी इश्वरके संकल्त मात्रतें निवृत्ति है एसा मानने-वाले, प्रपन्नकी इच्छाधिन विरोधीकी निवृत्तिका काल है. विरोधीकी निवृत्ति होगीहि, आत्म कैवल्य प्राप्ती न वनी रहेगीहि. यथावस्थित स्वरुपका आवीर्भाव होके भगवानका परिपूर्ण अनुभव होगा, सर्व वीध कैंकर्य अपुनरावर्ति होगी पूर्व शोक रहा, अव शोकका संभवहि नहि. वीचार आये तोभी फीर निःसंशय वनना, निर्भर रहेना, हर्ष रखना, शरीरके पात कालकी राह देखना. निरअपराध कैंकर्यमें रसीकत्व, यह मुख्य गुण अधिकारीमे अपेक्षीत है वो सर्वके अनु-ष्टानी होना चाहिये, अव अंतमें चरम श्लोकका समुदाय अर्थ कहते है " अल्पज्ञ, अल्प शक्ति तुं होनेतें परिमीत काल पर्यंत वीलंदको सहे एसा ॥ त्वां ॥ को, तुं अनुष्टान करनेको अशक्य है, होनेतें फलमें वीलंव भया है, तोभी ओर उपायमें न भ्रम कर उनको छोड-कर. " सर्वधर्मान् परित्यज्य, " सुलभ सर्व लोक शरण्यत्वके उप-युक्त सर्वाकार विशीष्ट एसा जो " मामेकं " में एक हों वाको, उपाय करके दृढ मानकर, अंग पंचक संपन्न आत्म रक्षाका भार समर्पण कर. एसा उपाय अनुष्टान कीये तो कृतकृत्य होगा. हमारे आधिन होनेवाला तुंमोको अतिशय प्रीय होगा. एसे त्वां, मे परम कारुणीक सुप्रसंन्न निरंकुश स्वतंत्रतावाला स्वअर्थ प्रवर्त्तक होके मेरे संकल्प मात्रतें, वहु प्रकार दुरत्ययजो सर्व विरोधी वर्ग " सर्व पापे-

भ्यो " सो फेर न होवे वेसी उनकी निवृत्ति करके " त्वां " तोको में ओर मेरा करके जो हो, वाको सर्वको तुल्य भोग करके परिपूर्ण अनुभव परिवाहरुप, सर्व देश, सर्वकाल, सर्व अवस्था उचीत, सर्व वीध कैंकर्य, देकरमें प्रसंन्न होउंगा. " मोक्ष विष्यामि " तुं कोई उद्देश करके शोक ना करीयो " माशुच " इति.

अथ गुरुकृत्य अधिकार ७

सर्वके आदि गुरु " गुरोर्ग रियान् " करके सर्वेश्वर है उनके पीछे परंपरा चली वो सबने जो अर्थ मीलाये सो इतरको तो, सीं-हके दूध सरीख हो रहेते परंतु सदाचारी कृपा करके परंपरासें मी-लाया हुह धन जीवोंका अनुष्टान कर सकेगा एसा योग्य शिष्य देखेतो वाको वो अर्थका प्रदान कृपातें संग्रहमें देते है.

गीताजीमें वचन है की यह अर्थ अभक्तोकों न देने. तेसें जो भक्तको देके उनमे मेरी भक्ति स्थीर करे तो उनतें मोको ओर कोई अधिक प्रीय नहिं होगा. कीनको देना कीनको न देना वाके लक्षण शास्त्रमें, प्रसिद्ध है. वो देख समज कर सदाचार्य योग्य शिष्यको योग्य समय योग्य अर्थहि देते है पृथ्वीरत्न पूर्ण हेतोभी अपात्रको यह धन नहि देना एसी शास्त्रमें आज्ञा है. जो आस्तिक हो भक्त हो शास्त्रमें श्रद्धावाला हो न्यायसें पूछता हो वाको सर्व अर्थ देने करके कहा है. आपकी पूजाके लीये धन दंभके लीये मांगे अप्रसंनतातें मागे ओर देवेतो वो अर्थ सफल नहि होता है. जेसे खारी जमीनमें बीज बोयेतो वो वृथा जाते है अथवा वांझको ऋतुदान वृथा जाता है. वानरको माला दीये तो दुरुपयोग करता है. पात्रमेंहि दान उचीत है. यह सात्विक शास्त्र दैवी प्रकृतिवालेकोंहि रूचेगा वालीये भगवानने गीताजीमें लक्षण स्पष्ट कहे है.

अभय, सत्वकी शुद्धि, ज्ञानयोगमें स्थिति, दान, दम, यज्ञ स्वाध्याय, तप, आर्जव, अहिंसा, सत्य, अक्रोध, त्याग, शांति, चुगल खोरी नहिं, भूतोपर दया लालचुपन नहि, सरल बुद्धि, अचपलता, तेज, क्षमा, धृति, शौच, अद्रोह, अति मानता नहि, यह गुण तपासनेके है. वो जोहोतो योग्य है. दैवी प्रकृतिवाला है ओर कहा है, विष्णुमें प्रीति आवे तो दैवी, द्वेष आवे तो आसुरी. देव असुरमें यह लक्षण सदा देख पडे है वोहि मनुष्यमें तपासें.

एक वर्ष छ मास तीन मास, अथवा उचित लगे उतना काल परंतु शिष्यको संग रखके वाकी परिक्षा सहवाससें करके जब योग्यताका निश्चय होतो अर्थ देने.

दंभ, दर्प, अभिमान, क्रोध, कठोरता, अज्ञान, यह आसुरी संपत्तिवालोमें होते हैं. सारार्थ उनतें बचना.

देह ईंद्रियोते अन्य ओर नित्य एसा आत्मा है. ओर वातेभी दुसरा अंतर्यामी परमात्मा है. वातें बढके फीर कोइ नहि है. यह आत्माका रक्षक, न आपतें अन्य कोई ही सकता है. यह तत्वज्ञान आचार्य देते है.

फीर अनादितें संसारमे अज्ञ गर्भवासादि क्लेष पाता हौं, वो दूर होवे वेसा करनेको आचार्यको प्रार्थना करनी. फीर गुरु परंपरा कहेकर श्रीमन्नारायणके चरणोका शरण अवलंबन करके, आत्मा ओर आत्माका जो होसो ओर वो सर्वके रक्षणका भार वहां समर्पण करना, एसा हित सिखातें है. येहि उपाय सदा सर्व दुःख जानेका है.

येहि प्रकार सत्य समजकर वेसा करना फीर माननाकी अब सर्वेश्वर कोई प्रकारभी मेरा त्याग नहिं करेंगे एसा निश्चयभी रख

कर, परम पदके पूर्व रंग सरीख निरपराधि अनुकुल वृत्ति सहवर्त्तन करना. यह शरण होनेके पीछे उत्तर कृत्य है. यह उपाय, ओर पीछे करनेका संक्षेप विस्तार दोनो प्रकार समजाये जाते है. अंतमें प्रकृतिते विलक्षण हम त्रितापमें तपते रहे वाते आत्म समर्पण कीया. अव वाकी शेष वृत्तिमेंहि वने रहे यह फल है. यह शिष्यको गुरुसें प्राप्त होता है. शोष्यको यह देना वाको वेसा वनाना यह गुरु कृत्य है. ईति.

शिष्य अधिकार ८

यह अर्थ महा निधि सरीख हमको आचार्य प्रकाश करते है, उनका महा उपकार मानना चाहिये. उनके कृतज्ञ वने रहेना, द्रोही कभी नहि बनना. प्रल्हादका हिरण्य ओर विभिषणया रावण द्रोहि भया तो नाश पाया. शरीर अर्थ प्राण सर्व वाके उपकारके वदले अर्पण करने. अपना जो हो वाका आधावा, वाका आधा तो, गुरु दक्षणामें देना हि चाहिये. यथाशक्ति देना करके वचन है. जो करना सो विनय पूर्वक क्योंकी गुरु तो कृपा ओर निस्पृहतासें कहते है. आचार्यको अनन्य प्रयोजन कहे है. परंतु हमको उचीत है की भगवान जेसे उनको भी उपकारी समजने जेसे भगवान अनुकुल है वेसे आचार्य भी है. तो हमको भी उनतें एसा वर्त्तन रखना. शास्त्र द्रष्टीसें शिष्यकी आंखे एसी वो खोल देते है की जाते वो भगवानका अनुभव भी करसकता है. फीर उनके तो जन्मभर दास वने रहै तो भी कोन वडी वात है. उन्हो तें अनंत कालके लीये सुखी वनाये. ब्रह्मविद्या प्रदानका वदला देवता भी नहि दे सकते है. मात्र उनका सन्मान भले हि करे. जो शिष्य उनका यथाशक्ति वदलान देवाको तो अर्थ फलते नहि है. गणीकाके अलंकारवत् वाकी विद्या बनती

है. असुया वालेको मीले तो, वाका भी वा ते रक्षण न होगा. जन्म ते अंध जो हम रहे उनको सूरीयोकी सभा योग्य वनाये वेसे परम उपकारी गुरुका क्या प्रत्यु पकार हम कर सके. वो जो देशके सो उनके आचार्य प्रताप एसे परंपराका लाभ हमको मीला है. सो उनके गुणानु पाद भी हमको अवश्य करना चाहिये. त्यों हमको कृतघ्रतान लगेता लीये मंत्रका भी आदर करना. गुरु मुख श्रवण कीये विना, अध्यात्म शास्त्र ग्रहण करे तो वो विद्या चोर है. यथा न्याय श्रवण करना गुरु परंपराका कथन करना वा ते अर्थकी प्रमाणीकता द्रढता भी होती है. मंत्रका जेसा गुप्त रखना वेसा गुरुको भी प्रसिद्ध करनेंमे वो देशकालका विचार कीये वीना नहि करना. वेसा कीये तो उनकी ओर निंदा करानी होती है. गुरु प्रभुको स्मरण करके उनकी ओरतें अर्थ देते है, वा ते उनमे प्रभुका वल आता है. संजयकी व्यास कृपाते गीता श्रवण ओर स्वामीके दर्शन प्राप्त भये वो वाने प्रकाश भी कीया वेसा करने ते हम भी तो सत्यवादी ओर प्रमाणीक ठहरते है. साक्षात् नारायण देव मनुष्यका शरीर धारण करके लोंकका अज्ञान हठानेको गुरुरुप वनतें है. ज्ञान द्वारा हमारा अज्ञान दूर करते है. उभय लोकके लीये गुरु विना ज्ञान नहिं गुरु विना गति नहि है. एसे अनेक वचन है. गुरु भी शिष्यको अर्थ देने तें अपने गुरुका ऋण मुक्त होते है. एकको भी भगवत् जन बनाये तो कृतकृत्य होते है. उभयकी, या प्रकार कृत कृत्यता है उभय अपना कृत्य बराबरा करे. ईति.

निगमन अधिकार ९

यह जीव सुरीयोके साथ भगवद्ध अनुभव करने योग्य है. परंतु सो अनादि काल तें रहेपर वाको तो नहिं पाया, परंतु अभीलों सं-

सारमें त्रिताप सहता रहा वाको ओर काम साथ सत्संम सुकृत वि-शेष तें होता है, वो भगवत् कटाक्ष सुकृतका फल है. वा ते फीर सदाचार्यका सवंध होता है, वा तें फीर तत्व निर्णय कर सकता है, वो जाननेंते रहस्य त्रय सार तमको भी उन्ही तें जानता है. वो जाननेमें ईशईशित्वा शरिरात्म भाव आदि ठीक जाना जाता है. सवंध ज्ञानके साथ अर्थ पंचक रहस्य त्रयमे स्थिति होती है. वो अर्थ पंच-कमें हि तत्वत्रय तो है. उनको ठीक मीला लेवे, तत्वत्रयका विभाग समजे तो इश्वर जो सात्विक शास्त्रमें कहा है वो श्रीपती है एसे ज्ञान वान होते है. फीर वा ते मुमुक्षु होते है. तव मोंक्ष उपायकी ओर लगते है. वा गे अपना अधिकार, निकी करते है. फीर उनमें भी प्रपत्ति निष्ट होते है. वा के परिकर समज न्यस्तभर होते है. ओर वा ते कृत कृत्य वन जाते है. अव वेसे आपको द्रढ मानने तें निःसं-शय स्थिति होती है.

आर्ति मंद हो तो शरोर रहे वहां पर्यंत यहां रहना पडता है यहां रहनेके कालमें स्वयं प्रयोजन करके स्वरुप प्राप्त वृत्तिरुप कैंकर्य में स्थिति होती है. भगवत् कैंकर्यके साथ भागवत् कैंकर्य पर्यंत प-होंचते है सास्त्रानु सार स्वामीके अभिमत कैं कर्य विना ओर नहि करते है, जेसा शास्त्रमें कहा वेसा कैंकर्य करते है. वा मे वने रहते है. उनमें अपराध हो गये तो वाकी निवृत्ति करते है. एसे निरपरा-ध कैंकर्यमें रहेकर वन सके वहां लो उचित भगवत्का आश्रय करते है. अथवा भगवत् क्षेत्रमें वसते है एसे अधिकारी शरण्यके संकल्प विशेष तें प्रशस्त देश कालादि नियमकी अपेक्षा विना स्थुल शरीर तें निर्याण करतैं है कीषीता के राज्यमें राज कुमारका जाना होवे येसे वहु मान पूर्वक परम पद पर्यंत अर्चिरादिक, भोग स्थानोको देखता भया, वो मार्ग ते जाता भया स्वच्छंद कैंकर्य पर्यंत परिपूर्ण अनुभव रुप मुक्त ऐश्वर्य पाता है. येहि परिसीमा है.

ज्ञातव्य सिद्धोपाय ओर साध्यो पाय है, सो कर्त्तव्य है. यह उपाय निष्टके प्रभावमें शास्त्र संमत न्युनाधिक अधिकारमें स्थिति है. वा में अहार दोष हेतुके संसर्ग, युग स्वभावादि तें संभावित व्याकुलता ओर वाका परिहार है. यह सर्व अर्थोके अनुसंधानके लीये रहस्य त्रयमें पद, वाक्य योजना प्रकार करके जो अर्थ कहे है, उनका यथा शास्त्र संप्रदाय अनुष्टान करना चाहिये वाकी प्रवृत्तिके लीये आचार्य चाहिये. वो लोक उपदेश दीये तो, प्रवृत्ति निवृत्तिमें स्थिति होती है. परम उपकारक आचार्यका उचीत प्रत्यु पकार करना. उनके ऋणी भूत जो शिष्य है, उनका वो आवश्यक कर्त्तव्य है. श्रुति स्मृति सूत्र संप्रदाय करके अनुकुल समीचीन न्याययुत, अज्ञान संशय विपर्यय तें निवृत्त करसके एसे अर्थ सुनावे हृदयमें लगावे वेसे सदाचार्य सत्संप्रदाय वाले हो उनके पास विनय पूर्वक जाकर में तुम्हारा शिष्य हौं, मोको उपदेश करो, में शरण आया हौं एसी वीनंती करनी, फीर आदर पूर्वक विस्तार सहित श्रवण करना, वा के उचित समीचीन वार्तादिक भी सुननी. ओर फीर उनका सत्कार करके जो कहा सो ग्रहण करके, वाका विचार करते रहते धीर बनना. शिलवाले उचीत आहार वाले बडी आशा होनेतें, वाके उचित ज्ञानवाले होकर सुक्ष्म परम धरम आचार्योने ढुंढा है वा मे वो चले है ओर वो पार पड गये है वेसे हमको भी चले जाना याहिसें कुशल है.

नहिं तो नर्क मार्गमें जाना, न दुखद मार्गमें न धुम्रादि मार्गमें परिभ्रमण होवे साकरना न ओर फल भोगनेके मार्गमें, न केवल आत्मानु भवके मार्गमें फसे रहेना. जो अंत श्रेष्ट संसारके पार विष्णुका परम पद है वाके मार्गमे हि जाना ओर वाते परम पदमें

पहुचकर भगवानकी कृपासें वाका परिपूर्ण अनुभव सपत्निक परि-

वार, दिव्य वैकुंठ, दिव्य मंडप, दीव्य पर्यंकमें करके, वाके मनोरथानुगुण सर्व देश काल सर्व अवस्था उचित, सर्व विध कैंकर्यमें लग गये तो. पूर्णको पाके पुर्ण होते है. इति संपुर्णम्.

॥ श्री ॥ श्री ॥ श्री ॥